Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सम्पादकीय

जा[illegible]कार का क्या होगा ?

[illegible] ? दीप जलेंगे कब ? कब [illegible] आएंगी ? किन्हें पता

ओ३म् ओ३म् ओ३म्
ओ३म् ओ३म् ओ३म्
ओ३म् ओ३म् ओ३म्
ओ३म् ओ३म् ओ३म्

जून १९७८

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

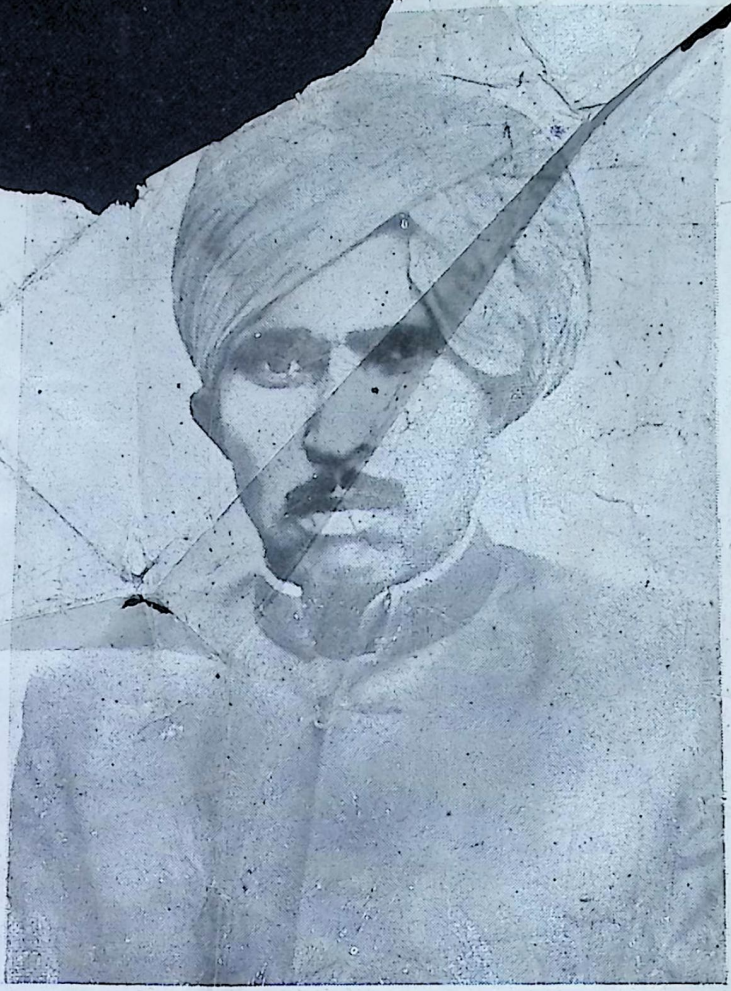

श्री उम्मेदसिंह जी जोधपुर निवासी ने अपने पूज्य स्वर्गीय पिता श्री मूलसिंह जी की पावन स्मृति में वेद मन्दिर में एक कमरा बनवाने का संकल्प लिया है।

संस्थान उनका आभारी है। —सम्पादक

Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महर्षि दयानन्द

दयानन्द संस्थान
नई दिल्ली का प्रकाशन

जन – ज्ञान

[मासिक]

सम्पादक
सुमेधा

दूरभाष : ५६६६३९

पता
१५९७, हरध्यानसिंह मार्ग
[निकट ३१-नाईवाला]
करौल बाग, नई दिल्ली-५

वार्षिक शुल्क २०)
विदेश मे ६ पौंड
(विमान से)

४ पौंड : समुद्री डाक से
(आजीवन ३०१)

एक प्रति : २ रुपये
वर्ष ११ : अंक २
आषाढ़ सम्वत् २०३५

सम्पादकीय

अंधकार का क्या होगा ?

सूर्य आयेगा कब ? दीप जलेंगे कब ? कब विहान की किरणें स्वागत में आएंगी ? किन्हें पता है, कौन जानता है ?

अंधकार के प्रतिनिधि डोल रहे हैं, और प्रकाश किरणों के दर्शन के लिए हम तरस रहे हैं, प्रकाश जीवन है, वह नहीं तो फिर और सब कुछ भी कुछ नहीं।

गरीबी अंधकार है, अज्ञान अंधकार है, जुल्म, गुण्डागर्दी, भ्रष्टाचार के एजेंट हैं। इन की विजय हम सबके लिए एक चुनौती है। पर इस चुनौती को स्वीकार करने का साहस क्यों मर गया है, इसी प्रश्न पर चिन्तन कर रही हूं।

क्रांति का नारा व्यर्थ है यदि प्रकाश नहीं; उपदेश योजनाएं सब बेकार पड़ जाती हैं, ज्योति के बिना। इसलिए मैं विहान की थिरकती किरणों की पुजारिन हूं।

मैं— प्रतीक हूं उस संघर्ष की, जो प्रकाश को लाने के लिए हो रहा है। इस सारे आयोजन की सफलता इसी पर निर्भर है कि हम उषा के दर्शन का सौभाग्य कब कर पाएंगे ?

जीवन निश्चित काल के लिए है। प्रकाश शाश्वत् है। शाश्वत् के लिए क्षणभंगुर का मोह त्यागना होगा, अन्यथा जीवन स्वयं नरक बन जाएगा।

आप सोचिए ही नहीं कुछ कीजिए और बदलिए धरती का रूप। अंधेरापन मस्तिष्क का मिटे इस के लिए क्रांति का बिगुल बजा दिया गया है।

दयानन्द की सेना लड़ रही है प्रकाश के लिए हम उसी सेना के सैनिक हैं। हमारे साथ आओ, हम भूमि को भयमुक्त ज्योतिर्मय कर देंगे— आइए स्वागतम्—

—सुमेधा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

राजधानी में विश्व का गौरव

वेद मंदिर

बन रहा है ।

यज्ञशाला का निर्माण पैसे की
कमी से रुक गया है—
आप अपनी सहायता आज ही भेजें

अध्यक्ष :

दयानन्द-संस्थान

वेद मन्दिर, दिल्ली-३६

पत्र भेजने का पता

वेद मन्दिर, दिल्ली-३६

सदा लिखें। इस से आप का कार्य शीघ्र होगा। संस्थान के सारे कार्यालय वेद मन्दिर में बदल गए हैं। करोलबाग में साहित्य और वेद मिलते हैं। तथा अपना धन जमा करा सकते हैं पर रिकार्ड सारा वेद मन्दिर में ही है—

पुराने सदस्य अपना शेष वेदभाष्य शीघ्र मंगा लें। —प्रबन्धक

क्या आपके पास पुस्तक संग्रह है ?

राजधानी में बन रहे विशाल वेद मन्दिर में एक पुस्तकालय अनुसंधान कार्यों के लिए आवश्यक अंग होगा।

जिन सज्जनों के पास दुर्लभ, पुराने—नवीन ग्रन्थ—पुरानी फाइलें हों वे कृपया वेद मन्दिर पुस्तकालय को दान में भेजने की कृपा करें।

यदि कोई महानुभाव ग्रन्थों को सुरक्षित रखने के लिए लोहे की अलमारी-दरी-पंखे आदि भी प्रदान करेंगे तो संस्थान उन का आभारी रहेगा।

अध्यक्ष **दयानन्द संस्थान**, वेद मंदिर, दिल्ली-३६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मैं हृदय मन्दिर से लिख रहा हूँ—

तभी वह आएगी : मुस्कराती

क्रान्ति शब्द में मत उलझो रे,
क्रान्ति नहीं बातों से होती,
क्रान्ति नहीं नारों से आती,
वह तो ऐसी दीपशिखा है,
जिसे जलाने हेतु प्राण का
अर्घ्य चढ़ाना पड़ता है।
क्रान्ति शब्द का अर्थ तब आता है।

नारे, नाटक रच सकते हैं,
बहका सकते हैं जनता को, पर
जो इच्छित है, या घोषित है,
उस से दूर दूर रहना भटकन है।
यह कैसी विडम्बना है अपनी,
बात सभी करते परिवर्तन की,
किस का परिवर्तन,
कैसा परिवर्तन ?
लक्ष्य कहां है -- क्या है मंजिल,
इसका पता करने की इच्छा,
मन में कभी नहीं जागी है।
क्रान्ति सदा दूर-दूर भागी है।

ओ मेरे प्राणों के हवि !
तुम अपने जीवन का भाव समेटो,
देखो आगे,
और दान दो अपने निज का,
और करो वह सब काम,
जिसको करने को कहते आये हो !

मरना-जीना खेल नहीं है,
परिवर्तन जीवन विकास का लक्ष्य
मांग रहा तुम से अग्नि परीक्षा,
जीवित जलना,
सब कुछ देना और भूलना,
तब आएगी क्रान्ति-सुन्दरी,
स्वप्न तभी साकार बनेंगे।
नूपुर की झंकृतियों से गूंजेगा आंगन,
किलकारी हर्ष भरी मेरे आंगन में फैलेगी।

जलो इसलिए की सब हंस सकें,
मरो इसलिए कि सब जी सकें,
चलो इसलिए कि प्रगति अविरुद्ध न हो,
उठो इसलिए कि कोई दबा न रह जाए,
नारे नहीं, काम करो,
भ्रान्ति से दूर रहकर—क्रान्ति के लिए,
सब कुछ लुटा दो,
तभी वह आएगी —मुस्कराती—

० ० ० ० ०

मृत्यु निमन्त्रण

तुम जिन्दगी को बुलाओ,
मैं मौत को बुला रहा हूं।
अपनी मृत्यु को,
और उन सब को भी,
जिन्होंने जिन्दगी को जीते जी,
मार दिया है।
जिन्दगी मर जाए,
हम देखते रहें,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

क्या इससे यह अच्छा नहीं है,
कि हम मर जाएं,
और जिन्दगी मुस्कराए।
तूफान-आंधी-झंझा,
सब जा रहे हैं।
जो वर्षों से सपने संजोए थे,
सब आ रहे हैं।
कफन तैयार है – गीता के लिए,
वेद-उपनिषद् —दर्शन के लिए।
इसलिए कहता हूं,
तैयार कफन सिर पर बांध लो,
और उन्हें बचाओ,
जिन्हें वे मारने की सोच रहे हैं।
आंसू कायर बहाते हैं,
खून आंखों में उतारो,
मेरे वीर !
चूड़ियां मत पहनो,
तोड़ दो उन्हें,
और हथकड़ियां सजाकर,
उन काली रातों का स्वागत कर,
प्रकाश की किरणें ढूंढ कर लाओ।
चांदनी रात में उल्लू बोलें,
सूरज के साए में अन्धेरा नाचे,
हिमालय पर आग बरसे,
और सागर शान्त हो जाए,
इससे पहले तुम खड़े हो जाओ,
और मेरी कल्पनाओं को स्वर देकर,
मंझधार को किनारा दे दो।
जो सपने हैं उनके टूट जाएं,
भले ही सब रूठ जाएं,
पर मेरे सपने न टूटें—
क्योंकि मेरे सपने टूट गए,
तो गंगा का पानी जहर बन जाएगा।
सोमनाथ से अजान उभरेंगी—
बद्रीनाथ पर क्रास लगेगा,
कृष्ण क्राइस्ट का रूप धरेगा,
तब तुम जीकर क्या करोगे ?
तो मरना तो है,
पर सड़क पर, दबकर न मरो,
उभरो और पांचजन्य को गुन्जाओ।
सुदर्शन चक्र का दर्शन कराओ,
शिवा की भवानी,
प्रताप का भाला,
सब जंजालों पर कहर बन टूटे,
मेरा सपना है पर—यह न रूठे,
तुम क्या सोच रहे हो मेरे प्राण,
वृहन्नला या अर्जुन,
जयचन्द या पृथ्वीराज,
शक्तिसिंह या प्रताप,
किसके सिर पर बांधोगे ताज ?
जवाब दो या मरने की तैयारी करो।

० ० ० ० ० ०

मण्डप का द्वार

तुमको मण्डप की चिन्ता है,
उसे सजाते ही रहते हो।
मुझको मरघट प्रिय है इतना,
उसे बसाना सोच रहा हूं।
क्षण भंगुर जीवन की लय में
गीत सुनाने तुमको भाते,
तार न टूटे अनजाने में,
इसलिए मैं बहुत दूर हूं।
मेरा प्रिय है वहां पुजारी,
जहां ज्योति रहती है निर्मल,
निर्झर अमृत का बहता है।
किन्तु वहां तुम झाँक न सकते।
ओ अनजाने रुद्ध भंवर में,
डूब न जाएं प्राण पुजारी।
इसीलिए मेरे जीवन का,
सारा बल उत्कंठित सा है।
मरघट - मण्डप एक समान समझता,
मैं जीवन में घूम रहा हू।
आशा है मेरे मानस की,
मरघट मण्डप सजा सकूंगा,
तभी कहूंगा —चला जा रहा
लक्ष्य लिए मैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गढ़वा रोड से : गढ़वा तक

प्रात: की वेला में,
थिरकती उषा सुन्दरी की वाहों में,
रिक्शा चला जा रहा था,
मन छला जा रहा था।

देख रहा था मैं,
दूर-दूर तक फैली,
भाव शून्य सी सस्मित माता,
भारत माता !
और तभी देखा था मैंने,
एक छोटी सी कन्या को,
८-१०-१२ वर्ष की वालिका को,
पहनी थी उसने सतरंगी साड़ी,
जिसे रंगा था हमने ३० वर्षों से
नाना रंगों में,
टुकड़े होंगे १०-१२, जिन्हें सी कर
उस साड़ी में,
भारत की जनता भी हंस रही थी,
आजादी का लम्बा काल,
बच्चों को कपड़े नहीं दे पाया,
उनके रहने को मकान, पढ़ने को पुस्तक,
तो बहुत दूर की बात है।

अभी तो वे भारत के स्वामी,
जो खेतों में गोबर चुनते हैं।
या महुए के बीजों से,
पापी पेट भरते हैं।
मैं उस छोटी सी नन्हीं बच्ची के
प्यार में खो गया हूं।
सोचता हूं यहीं बस जाऊं,
और उस काले नाग को डस लूं,
जिसने गरीबी का फुंकारता फन,
आज भी नहीं झुकाया है।
मां भूखी-बहन-बेटी-बच्चे,
सब भूखे सिसक रहे हैं।
पर भूख की आदत अब उनका स्वभाव है,
लाचारी नहीं—
वे सोच भी नहीं सकते कि,
रोटी क्या होती है? कमरे-कूलर
पंखे-कपड़े क्या होते हैं।
टोस्ट और मक्खन स्वर्ग में मिलते हैं,
कैसी बेबसी है -- कैसी आजादी है।
मेरे भगवान,
वह दिन पता नहीं कब आएगा,
जब भारत का हर बच्चा,
पेट भर रोटी और कपड़े पाएगा,
तभी आजादी आएगी,
अन्यथा सब सपना है।

क्रान्ति की तैयारी करो

संसार का इतिहास बदलना है,
चिन्तन, विचार, दर्शन सभी बदलना है
और इस परिवर्तन का नाम है क्रांति।

संपूर्ण क्रांति के लिए आर्यसमाज
स्थापित हुआ था, १०० वर्ष में कुछ हुआ
पर संपूर्ण परिवर्तन अभी बहुत दूर है।

जो अधूरा है उसे पूरा करने के लिए
काम आर्यसमाज ने करना है। धर्म-अर्थ
समाज-दर्शन सभी का आमूल परिवर्तन
हेतु हमें संघर्ष करना है।

ग्रामों में, नगरों में, गरीबी में,
अमीरी में सब में जो भटकन है वह
भटकने हमें कहाँ ले जाकर फेंकेगी यह
कौन जानता है? किसे ज्ञान है कि जीवन
की दौड़ में मृत्यु का कटु नाम छिपा है?
इस महाकाश को जीवन गीत में बदलने

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

के लिए आर्यसमाज कृत संकल्प है।

जो सो रहा है या लड़ रहा है या मिट रहा है वह आर्यसमाज नहीं है। आर्यसमाज समुद्र की उत्ताल तरंगें है। हिमगिरि का उत्तुंग शिखर है। वह सूर्य की ज्योतिर्मय किरण है।

शक्तिपुंज आर्यसमाज को ज्योतिर्मय करने की प्रेरणा का व्रत लेकर उठो और परिवर्तन करो। समाज की सड़ी गली रूढ़ियाँ मिटाओ, गरीबी जलाओ और पशुता कुचल दो।

काम करो इसलिए कि धरती स्वर्ग बने। विजय वरो, बढ़ो इसलिए कि कष्ट-क्लेश का कहीं लेश भी न रहे। क्या आप सोचेंगे ?

आर्यसमाज प्रगति कैसे करे ?

इस विषय पर सभी विचारक अपने अपने विचार प्रगट करते रहे हैं। यह भी आवश्यक नहीं कि सब के विचार समान हों किन्तु सभी के चिन्तन में सार होता है, और वे ईमानदारी से अपने - अपने दृष्टिकोण से मार्ग दिखाने का प्रयत्न करते रहे हैं।

जनवरी १९७७ में लगभग १२० नेताओं और विद्वानों ने राजधानी दिल्ली में २ दिन तक बैठकर आगे बढ़ने का मार्ग दर्शन किया था। पश्चात अजमेर-जामनगर-नाँदेड़ में आर्य विचार परिषद की बैठकें हुयीं। कानपुर में तो प्रदेशीय सभा ने भारी व्यय कर बैठक बुलायी, पर प्रश्न उलझा रहा, आर्यसमाज खड़ा ही रहा।

अब २ जुलायी १९७८ को दिल्ली के जानेमाने कर्मठ विचारक श्री देसराज चौधरी चन्द्र विद्या मन्दिर नई दिल्ली में इसी प्रश्न पर विचारार्थ एक बैठक बुला रहे हैं। उनके प्रयास की सराहना करते हुए भी हमारा यह विश्वास है कि प्रश्न मार्ग दर्शन का नहीं, दर्शन के क्रियान्वयन का है। उसे कौन करेगा ?

आर्यसमाज भारत का सबसे अधिक सजग सशक्त - सत्य पर आरूढ़ प्रबल संगठन है। समझ नहीं आता कि यह महान् संगठन क्यों युग की समस्याओं की चुनौती स्वीकार नहीं कर पा रहा।

पाखण्डों पर प्रबल प्रहार करने वाला आर्यसमाज, मतवादों को ललकारने वाला आर्यसमाज धर्म की गंगा बहाने वाला आर्यसमाज, अध्यात्म का अमृत, वेद का सौरभ बरसाने वाला आर्यसमाज आज क्यों हतप्रभ सा है !

लगता है हम भूल गए अपनी शक्ति को, प्रतिभा को, लक्ष्य को, उदात्त कामनाओं को। हम भूल गये शहीदों के बलिदान, दयानन्द का तप-त्याग और विजयी भाव; हम विस्मृत कर चुके, सत्य की अजेय शक्ति प्राणों के सौन्दर्य पर घना कुहरा क्यों छा गया, आलस्य और प्रमाद हमें क्यों भा गया।

सर्वनाशिनीफूट - कलह से प्यार क्यों कर बैठे? अपने घर को स्वयं जला कर हाथ सेकने क्यों बैठ गये ? यह सभी प्रश्न मानस को मथ रहे है।

अकेले बैठकर जब भी स्थिति पर विचार किया है, इतनी पीड़ा हुयी है कि सिर फोड़ कर मरना भी अच्छा लगता है वर्तमान दुर्दशा देखने से।

आर्यसमाज हमारी माँ है। मां का

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गौरव मिटे, क्या कोई सपूत यह सहन कर सकेगा ? माँ की धवल यश पताका पर कलंक पंक दीखे, क्या इससे पहले सिर कटाने की इच्छा नहीं जागेगी।

सोचिए हमारी माँ पर प्रहार हों और हम सहते रहें, यह जीवित मृत्यु आपको क्यों स्वीकार है। हमारे मन में केवल यही हाहाकार है कि आर्यों की करनी कथनी में क्यों नहीं हुंकार है।

मेरे प्राण आर्य बन्धु ! आर्यसमाज को यशस्वी बनाने के लिए प्रस्ताव-योजना नहीं कार्य - त्याग - बलिदान चाहिए। ज्ञान ज्योति से ज्योतिर्मय, दयानन्द के गौरव से दीप्तिमान, वैदिक विचारधारा से दीप्त व्यक्ति जिस दिन जागेंगे उस दिन आर्यसमाज विजय पथ पर अग्रसर होगा।

आर्यसमाज की विजय मानवता की विजय होगी। उसकी सफलता विश्व इतिहास को नयी दिशा देगी। उसका प्रकाश अज्ञान-तिमिर नष्ट करेगा। इसलिए कहता हूं - आर्य समाज को प्राणदान दो ताकि वह प्राणों की आहुति या दयानन्द के यज्ञ तो सफल कर सके।

मुझे विश्वास है विजय का, हम दयानन्द का झंडा वैटिकन-मास्को-अरब तक पहुंचायेगे। नई दुनियाँ बनायेंगे, सर्वत्र ओ३म् पताका लहरायेंगे, आओ हमारे साथ खड़े होकर आर्यसमाज की जय के लिए अपने प्राणों को दयानन्द के चरणों में अर्पित करो।

हमारी प्रचार यात्राएं

भीषण गर्मी में भी स्वास्थ्य ठीक न होते हुये भी कार्य संचालन हेतु हमें यात्राएं करनी पड़ीं। तिलहर हापुड़-सिकन्दराबाद-मिर्जापुर, गढ़वा-जयपुर-अजमेर रानी आदि स्थानों पर हमने अप्रैल व-मई में रविवार का समय प्रचार के लिये दिया। हमें यह देखकर प्रसन्नता होती है कि हम जहाँ भी गये सर्वत्र सभी ने अपना स्नेह आशीर्वाद हमें प्रदान किया। वस्तुतः सबका प्यार ही हमारा धन है।

भ्रमण से जहां हमें वास्तविकता का ज्ञान होता है वहाँ कार्य करने की शक्ति और प्रेरणा भी मिलती है। देश की दुर्दशा का सजीव चित्र सामने आता है और मन तड़पता है कुछ कर डालने को।

हमारा बस चले तो हम देश का भाग्य बदल दें। मत-वाद और अज्ञान को जला दें, पाखंडों को मिटा दें—बस नहीं चलता यह आपकी नहीं हमारी दुर्बलता है। हम अभी तक अपनी परीक्षा दे रहे है। कुछ की दृष्टि में हम उत्तीर्ण हैं कुछ अभी तक परख रहे हैं।

जो विरोध करते हैं वे हमारे सच्चे मित्र हैं, क्योंकि उनकी कृपा से हम अग्नि परीक्षा भी देते रहते हैं एक पल के लिये भी हमें उन पर क्रोध नहीं आया क्योंकि प्यार इतना अधिक मिला है कि गालियों की बौछार असर ही नहीं करती।

हम प्यार बाँटते हैं। प्यार में रहते हैं और चाहते है कि प्यार मनुष्य की एकता को जन्म देने में समर्थ हो।

घृणा-द्वेष-ईर्ष्या की अग्नि प्यार के अमृत से शान्त होगी। यह हमारा विश्वास है। हम जानते हैं कि हमारे गुरू दयानन्द को तो न जाने क्या-क्या सहना पड़ा था, हमें तो अभी केवल कुछ की आलोचना ही मिली है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हमारा विश्वास है कि आज प्रत्येक आर्य को सब कुछ भूलकर रचनात्मक प्रचार कार्य में लग जाना चाहिये। प्रचार केवल प्रचार। वेद के भावों का प्रसार यही वह लक्ष्य है जो हमें जीवन दे चुका है।

धन-साधन शून्य होते हुये भी प्रभु का आशीर्वाद और जन मानस का स्नेह-सुधा युत अपनापन हमें मिला है। वही हमारी पूंजी है। इसका ज्ञान दिल्ली से बाहर जाकर होता है और हम समझते है कि हम अकेले नहीं हैं –

लाखों की शुभ कामनाएं वरदान बनकर हमें गति दे रही हैं।

जन-ज्ञान के सदस्य बनाएं

हम ने जन-ज्ञान के नए सदस्य बनाने के लिए सभी से अनेक बार आग्रह किया है हमारी इच्छा है कि श्रावणी तक जन-ज्ञान की सदस्य संख्या दुगनी हो जाये।

इस इच्छा की पूर्ति आपके द्वारा ही संभव है। सभी पुराने सदस्य एक-एक नया सदस्य बना कर भेजें तो लक्ष्य पास आ सकता है।

क्या सभी इधर ध्यान देंगे।

वेद-प्रचार सप्ताह मनाने की अभी से तैयारी करो

श्रावणी (रक्षाबन्धन) से जन्माष्टमी तक सर्वत्र वेद प्रचार सप्ताह मनाया जाता है। आर्यों का यह सबसे बड़ा पर्व और आयोजन होता है।

कल्याणी वाणी वेद के प्रचार का लक्ष्य सामने रखकर इस सप्ताह का नाम वेद प्रचार सप्ताह रखा गया है। अतः सभी आर्यसमाजों के अधिकारियों का यह पुनीत कर्तव्य है कि वे इस सप्ताह को पूरे बल तथा उत्साह से मनाएं।

प्रचार की उदात्त कामना हृदय में जगाकर वेदनाद गुंजाने का संकल्प लीजिए। यज्ञ-प्रवचन-उपदेश-सत्संग का आयोजन कीजिए।

प्रत्येक आर्यसमाज अधिक से अधिक परिवारों में परमात्मा की अमरवाणी पहुंचाने का व्रत लें। आर्य सभासद के घर में तो वेद होना ही चाहिये किन्तु अपने स्थान में सभी योग्य व्यक्तियों के परिवारों को भी पवित्र करें।

सत्संग आकर्षक बनाएं

आर्यसमाज को शक्ति सम्पन्न बनाने के लिए प्रथम और आवश्यक कर्तव्य है साप्ताहिक सत्संगों को आकर्षक बनाना। किसी भी आर्यसमाज की शक्ति उसके सत्संगों से ही जानी जा सकती है। इस के लिये हमारा सुझाव है कि—

१: साप्ताहिक सत्संग में सभी सदस्य सपरिवार जाएं। घर में प्रातः २ घंटे के लिए ताला लगाकर जायें।

२. सत्संग का वातावरण शांत-आध्यात्मिक और भक्ति भावना से पूर्ण होना चाहिए।

३. कोई भी विवाद, निन्दा-स्तुति परक प्रसंग सत्संग में नहीं होना चाहिये।

४. भजन-उपदेश सभी सरस हों, और जीवन के लिए उपयोगी भी।

५. बच्चों का स्वागत विशेष रूप से सत्संग में करें।

आप अपने साप्ताहिक सत्संग पर ध्यान दीजिए। उपस्थिति बढ़ाइए। फिर देखिए आप का आर्यसमाज किस तेजी से प्रगति करता है।

पर क्या आप इधर ध्यान देंगे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बुद्धि के द्वार बन्द मत करो

मैं जीवन के अन्तिम कगार पर खड़ा हूं। डाक्टरों ने मधुमेह और अलसर बता दिया है। पैरों में सूजन रहती है। पिछले वर्ष पक्षाघात का आक्रमण भी हो चुका है, फिर भी मन से स्वस्थ रहकर कार्य में लगा हूं।

बहुत कुछ करने की इच्छा है। पिछले २८ वर्षों से निरन्तर आर्यसमाज का संदेश फैला रहा हूं। कभी भी आराम नहीं किया। अपने लिए, परिवार के लिए, कुछ भी नहीं जोड़ा। सभी को काम में लगाया और जो सम्भव हुआ किया।

सफलता भी अपूर्व मिली। असफलता मिली नहीं, जो सोचा वह पूरा हुआ। अब संसार में वैदिक विचारधारा के साम्राज्य की स्थापना के उद्देश्य से वेद मन्दिर बनाने में जुट गया हूं।

भीषण गर्मी में भी बिहार-उत्तर प्रदेश-राजस्थान गया। दिन रात एक ही इच्छा है कि प्रकाश स्तम्भ के रूप में वेद मन्दिर बन जाए। बनेगा यह मेरा विश्वास है।

पूज्यपाद महात्मा आनन्द स्वामी जी ने कहा था बिरला मन्दिर से भी सुन्दर बनाना वेद मन्दिर। मैं इसे संसार के सभी व्यक्तियों का तीर्थ बनाना चाहता हूं। मत-वाद-जाति-देश से ऊपर उठकर मनुष्य को मानवता के धर्म का सन्देश देने में वेद मन्दिर समर्थ हो, यह मेरी इच्छा है

जो कहा वह सदा किया। मैं आप से कहता हूं, कि न मेरी सुनो न किसी और की, अपनी बुद्धि से परखो हमारे काम को,यदि आप यह स्वीकार करें कि दयानंद संस्थान सचमुच दयानन्द का कार्य कर रहा है, तो सहयोग दें। हमें करोड़ों अरबों रूपये चाहियें। हमें इस्लाम-ईसाइयत-कम्यूनिज्म और सारी दीवारों को उखाड़ फैंकना है, क्या यह बिना साधनों के होगा? बताओ—आप ही कहो, क्या बिना हथियार युद्ध जीता जा सकता है।

हम लड़ रहे हैं और लड़ेंगे, जीवन के अन्तिम सांस तक लड़ेंगे। काल से भी लड़ेंगे और जीतेंगे, प्रश्न केवल यह है कि क्या आप इस युद्ध में एक सैनिक बन कर हमारे साथ नहीं चल सकते।

आप जो देंगे, हम स्वाहा कर देंगे, परिणाम आपके सामने है। देश में वेद का डंका बज रहा है। अब संसार में भी बजाना है!

ब्राह्मण हूं जन्म से भी, कर्म से भी। ब्राह्मण का काम है झोली फैलाना।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

देश धर्म-और वेद की रक्षा के लिए आप से माँगता हूं यह कहकर कि आँखें खोलो सत्य को परखो—और यदि विश्वास हो तो मूक दर्शक मत बनो, हमारी झोली भर दो, हम वचन देते है संसार में वैदिक पताका लहराने के लिए अपने प्राणों की अंतिम स्वांस तक भी हमारा संघर्ष जारी रहेगा। हम ही नहीं जो भी हमारे बाद हमारा स्थान ग्रहण करेगा उसे भी सर्वस्व की आहुति देनी होगी।

बात बातों से बनती नहीं है कभी
प्राण अर्पित करो,बात बन जाएगी।
जिन्दगी का सफ़र अब है थोड़ा बचा,
साथ दे दो सभी, राह जगमगाएगी।
साथ अपने चलो, बांधो कफन शीश पर,
शहीदों की टोली, जमाने को बदल जाएगी।

सोचने का समय नहीं हम काम कर रहे हैं। काम के लिए—

तन दो, मन दो, धन दो,
कुछ भी नहीं दे सकते तो आशीर्वाद दो।

पहुंचेगे मंजिल पर !

यह धरती बहुत बड़ी है। नाना देश-वेश-परपंराएं बोलियां अलग-अलग पर मूल आकांक्षाएं सब की एक। यह एकता अनेकता को समाप्त कर सकती है।

जिन बातों में सब सहमत हैं, उन पर शक्ति लगाओ और अनेकता मिटाओ। प्यार के गीत से घृणा का विष मिटाओ। स्नेह के अमृत से द्वेष की अग्नि बुझाओ यही मानव सुधार का कार्यक्रम है।

हमें नाम नहीं विचार बदलने हैं। मज़हब की अर्थी उठाकर जलानी है और धर्म की बारात सजानी है।

हम सब एक हैं। धरनी एक, सूरज एक चंदा एक, सब की आवश्यकताएं एक इसलिए हम सब एक बनें। यह हमारा मंत्र है।

आप-मैं-वे सब ऐसे गीत गाएं कि आनन्द रसधार बरसने लगे। दीप जलें मन मंदिर में, अन्धकार दूर हो, उभरे विहान, गूजे गगन आओ चलें धरती को स्वर्ग बनाने।

आप के मन को झंकृत करने के लिए वीणा बजा रहा हूं—अन्धेरा भगा रहा हूं ज्योति जगा रहा हूं - काम बहुत है पर करेंगे—चलेंगे पहुंचेंगे मंजिल पर।

—भारतेन्द नाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उत्सव समाचार

गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ में विशाल ब्रह्मचर्य योग शिविर

२१ से ३० जून तक समारोह पूर्वक लगने जा रहा है। इस शिविर में भाग लेने वालों पर भोजन आदि व्यय सहित ५०) व्यय आएगा। जो निर्धन होगें उन्हें रियायत दी जा सकेगी।

अखिल भारतीय प्रतिनिधि सभा के प्रधान पं० भारतेन्द्र नाथ ने देश के सभी आर्य समाजियों व आर्य बन्धुओं से आग्रह किया है कि वे भारी संख्या में शिविर में भाग ले बढ़ती गुण्डागर्दी-चरित्रहीनता की रोक थाम का दायित्व निभाएं।

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान आचार्य विश्व बंधु जी ने सभी आर्यसमाजों को शिविर में भाग लेने का आग्रह किया है।

इच्छुक सज्जन अपने पहुंचने की सूचना श्री प्रेम पाल शास्त्री संयोजक सार्वदेशिक आर्य युवक परिषद् पो० आ० गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ नई दिल्ली-४४ को पत्र लिखें।

आर्य युवक परिषद्, लाडनूं

आर्य युवक परिषद् लाडनूं के तत्त्वाधान में भारतवर्षीय आर्य विद्या परिषद् अजमेर द्वारा संचालित धार्मिक परीक्षाओं क्रमशः विद्यावाचस्पति, विद्याविशारद, विद्या-रत्न तथा विद्या विनोद का आयोजन गत जनवरी ७८ में किया गया। जिनका परीक्षाफल १४ अप्रेल, ७८ को अजमेर में घोषित किया गया।

उक्त सभी परीक्षाओं का परीक्षाफल शत प्रतिशत रहा। विद्यावाचस्पति की परीक्षा में लाडनूं के श्री सुखवीर आर्य व प्रेमप्रकाश आर्य ने प्रथम श्रेणी, विद्या-रत्न की परीक्षा में सुजानगढ़ के श्री शशि कुमार शर्मा ने प्रथम श्रेणी प्राप्त की। अन्य परीक्षार्थियों ने द्वितीय एवं तृतीय श्रेणी प्राप्त की।

परीक्षा मंत्री —हरजी सैनिक

लाडनू! आर्य युवक परिषद् के तत्वाधान में दिनांक २२-१-७८ को श्री कमला देवी की पौत्री का नामकरण-संस्कार वैदिक पद्धति से सपन्न किया गया। इसका संयोजन सुश्री किरण कुमारी आर्या ने किया। इस अवसर पर श्री देव मित्र जी आर्य, श्री चमन लाल जी आर्य तथा परिषद् के सभी सदस्यों ने बालिका के दीर्घ जीवन की कामना की।"

—सुखवीर आर्य

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

संस्कृत के लिए आर्यसमाज का योगदान सराहनीय

एक मासीय निशुल्क शिक्षण शिविर का दीक्षान्त समारोह जनता पार्टी के नेता श्री हरी कुमार औदीच्य की अध्यक्षता में आर्य समाज मन्दिर आर्य समाज मार्ग कोटा में सम्पन्न हुआ। समारोह में विशेष अतिथि के रूप में भूतपूर्व विधायक श्री देवीदत्त गाड़िया भी उपस्थित थे। सर्व प्रथम यज्ञ हुआ। श्री सोमेश्वर भूलियान प्रधान आर्य समाज ने अतिथियों का फूल माला पहना कर स्वागत किया। समारोह में छात्र छात्राओं के संस्कृत श्लोक पाठ, मन्त्रोच्चारण संस्कृत भाषण आदि हुए। श्री कृष्ण कुमार गोयल केन्द्रीय राज्य मंत्री ने प्रमाण पत्र वितरित किए। श्री गोयल ने दीक्षान्त भाषण में कहा कि आर्य समाज प्राचीन भारतीय साहित्य को सुरक्षित रखने, देव वाणी संस्कृत भाषा को जन सामान्य तक सरल एवं सुलभ बनाने का प्रशंसनीय कार्य कर रहा है। आर्य समाज का स्वातन्त्रय आन्दोलन में त्यागमय इतिहास रहा है।

इस अवसर पर राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा के उपमंत्री श्री वेद प्रकाश सक्सेना ने बताया कि श्री सोमदेव शास्त्री ने एक मासीय निशुल्क संस्कृत शिविरों को सफलता पूर्वक आयोजन व्यावर, पाली, अजमेर, बीकानेर, प्रतापगढ़, कुशलगढ़ कोटा में किया है। श्री सक्सेना ने बताया कि विद्यार्थियों को एक मास के अल्पकाल में ही संस्कृत व्याकरण का सामान्य ज्ञान करवा दिया जाता है, परिणामत: वह अपने प्राचीन ग्रन्थों का रसास्वादन कर सकता है। इस योजना से हजारों अनभिज्ञ विद्यार्थी को भी देव वाणी संस्कृत को सीख रहे हैं।

श्री केदारनाथ मंत्री आर्यसमाज ने आगुन्तक अतिथियों एवं समस्त विद्यार्थियों एवं जनता को समारोह को सफल बनाने एवं विद्यार्थियों के उत्साह वर्धन के लिए धन्यवाद दिया।

रानी में आर्यसमाज

रानी (राजस्थान) में दयानन्द संस्थान के अधिष्ठाता पं० भारतेन्द्र नाथ जी २६ मई को प्रात: १० बजे जनता से पहुंचे। रानी के नागरिकों ने स्टेशन पर पुष्प मालाओं से आपका भव्य स्वागत किया।

जाते ही पंडित जी ने यज्ञ कराया। मध्यान्ह ३ बजे कार्यकत्ताओं की उपस्थिति में आर्यसमाज की स्थापना की। सर्व सम्मति से श्री उम्मेदसिंह जी प्रधान निर्वाचित हुए। पिछले १०० वर्षों में प्रथम बार रानी में आर्यसमाज का धूमधाम से प्रचार हुआ।

सायं पुन: यज्ञ हुआ और रात्रि में शीतला चौक में जन सभा सम्पन्न हुई। उल्लेखनीय यह है कि सारा कार्य सनातन धर्म की धर्मशाला में हुआ। और वहीं पर आर्यसमाज की स्थापना भी हुई।

पंडित भारतेन्द्र नाथ जी ने अपने भाषण में कहा कि समय आ गया है जब सभी राम-कृष्ण, वेद-शास्त्रों के अनुयायी एक ओ३म् के झंडे के नीचे खड़े होकर आसुरी शक्तियों का सामना करें। नगर में आर्यसमाज स्थापना से उत्साह की लहर दौड़ गयी है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भिक्षा देहि

—भारतेन्द्र नाथ

सब के लाभ के लिए

कोई भी सर्वहितकारी कार्य बिना दान के नहीं चल सकता। प्राचीन शास्त्रों में दान की महिमा इसलिए गायी गयी है कि दान से वह सब कार्य संपन्न होते हैं जो मानव को ऊंचा उठाते हैं।

वेद-प्रचार, अज्ञान विरोध, सत्य प्रसार क्या बिना धन के हो सकता है? लाखों पादरी क्या बिना दान के प्रचार कर सकते थे? कोई भी विचार प्रचार के लिए शक्ति चाहता है। काम छोटा हो या बड़ा बिना अर्थ के संम्भव नहीं।

दयानन्द संस्थान का सारा कार्य दान से ही आगे बढ़ा है। स्वर्गीय पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज ने हमें १००) का दान दिया। उनका पवित्र दान लाखों रु० के साहित्य प्रसार का कारण बना।

महात्मा गाँधी चार-चार आने की भिक्षा लेते थे। महामना मालवीय जी ने भिक्षा न ली होती तो क्या हिन्दू विश्व-विद्यालय बनता? जो भी करना होता है उस के लिए धन चाहिए। देखना यह उचित है कि आप का दान उसी उद्देश्य में लग रहा है या नहीं।

दयानन्द संस्थान दान-भिक्षा मांगता रहता है—मांगता रहेगा। आप उस की झोली में जितना डालेंगे, उतना ही वह काम कर सकेगा। बिनाधन के काम नहीं होगा। अगर आप आंखें खोल कर देखें तो स्वयं आप का मन संस्थान के प्रति दान देने को उत्सुक होगा।

१) मासिक या १०००) मासिक जो भी आप दे सकते हों, दीजिए। प्रति माह पहली तारीख को आप दान भेजिए। प्रत्येक शुभ अवसर पर, पर्व पर संस्थान को स्मरण रखिए।

धरती पर वेद की विचारधारा फैलाने के लिए, अज्ञानी मत-वाद मिटाने के लिए संघर्ष में लगे दयानन्द-संस्थान को जितना भी सहयोग मिलेगा, उतनी ही गति से हम आगे बढ़ सकेंगे।

काम चाहिए तो दान चाहिए

यह सत्य जिस दिन भी आप समझ लेगें उस दिन संसार का भाग्यउदय होगा।

घर में दिया जलाते हुए कभी भी यह न भूलें कि आपने संसार को भी ज्योतिर्मय करना है।

यज्ञशाला में कम से कम १०० ईंटें अपनी ओर से लगवाएं

२५) का मनिआर्डर आज ही भेजें

दयानन्द-संस्थान

वेद मंदिर दिल्ली-३६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

८ जून : जन्मदिवस पर

पूजा : वन्दना : क्रांति की त्रिवेणी

दयानन्द संस्थान की अध्यक्ष

पंडिता राकेश रानी

जीवन एक संघर्ष है, जीवन विजय है, जीवन अमरत्व की सिद्धि स्थली है। यह जीवन भाग्य से मिलता है।

मिलता है अनेकों को, भोगते हैं सभी, पर जीते हैं बहुत थोड़े। ऐसे तो बहुत ही कम होते हैं जिनकी ज्योति से जग चमकता है।

अपने गुणों से स्वयं ज्योतिर्मय पूजा-वन्दना और क्राँति की त्रिवेणी तथा मूक सतत साधना रत महिला का नाम है पण्डिता राकेश रानी !

८ जून को उनके जन्मदिवस पर मैं उनके सम्बन्ध में कुछ लिखने लगा हूं। वे मेरी पत्नी हैं। पत्नी को अर्धांगिनी कहा जाता है, इसलिए उनकी प्रशंसा मेरी अपनी प्रशंसा है, जो मेरे स्वभाव के विरुद्ध है।

किन्तु इस बार मैं अपने को लिखने से नहीं रोक पा रहा। मेरा शरीर अब जर्जर हो चला है। दिन रात की चिन्ता, निरन्तर काम और संघर्ष के थपेड़ों ने अब यहाँ से चलने की तैयारी जल्दी करा दी है। इसलिए मेरा मन उस देवी के प्रति अपने भाव प्रगट करना चाह रहा है जिसके कारण मैं कुछ भी कर सका हूं।

मेरे जीवन पर ३ व्यक्तियों ने प्रभाव डाला है---

१—महर्षि दयानन्द।

२—मेरी जननी पूज्या माता पं० विद्यावती शारदा,

३—और मेरी सह धर्मिणी राकेश रानी।

विचारों की दृष्टि से मैंने स्वामी दयानन्द के अतिरिक्त और किसी भी व्यक्ति को अपना आदर्श नहीं माना, न किसी ने मुझे प्रेरणा ही दी।

इन विचारों को कार्यरूप में परिणित करने का निरन्तर आदेश मुझे अपनी माँ से मिला। जीवन की दो घटनाएं नहीं भूलतीं। ८ अगस्त १९४२ को जब गाँधी जी ने करो या मरो का नारा दिया था, वे बम्बई में थीं। मेरी आयु उस समय १२-१३ के मध्य थी। वारन्ट निकले थे उनके। १३ अगस्त को वे किसी तरह घर पहुंचीं—आते ही पहला वाक्य था, क्रोध से भरा—तू अभी तक जिन्दा क्यों है ?---आज के सन्दर्भ में

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कोई इन शब्दों का मूल्य नहीं जान सकता। एक विधवा माँ --इकलौता १३ वर्ष का बेटा और उसे मरने का आदेश देश के लिए—

बात १९४६ की है—गुरुकुल जेहलम का दीक्षान्त भाषण। सब कार्यक्रम सम्पन्न, उपाधि मिल गयी और अन्त में हुआ उनका आशीर्वाद। हजारों व्यक्तियों की उपस्थिति में उनका आदेश—भारतेन्द्र! मैं तुम से भिक्षा माँगती हूं कि जीवन में कोई काम धनोपार्जन के लिए न करना अपना। जीवन देश और आर्य-समाज के प्रति अर्पित कर दो।

बातें बहुत सुनते हैं पर ये दो बातें मेरे जीवन का प्रकाश स्तम्भ रही हैं। मरने तक इन्हें भुला न सकूं यही एक-मात्र कामना है।

विवाह हुआ २३ जुलाई को। २४ जुलाई को रेल के डिब्बे में सारी बातें—जीवन-लक्ष्य की बता गया उस समय उनकी उम्र थी १६ वर्ष, पर पता नहीं कितनी बुद्धि थी, कैसी भावना थी, गाजियाबाद-सहारनपुर की ४ घण्टे की यात्रा में उनका जीवन बदल गया। मेरा सब चिन्तन उनका चिन्तन बन गया।

नया विवाह, पैसे की चिन्ता नहीं किसी भी प्रकार की माँग नहीं—नगर छोड़ ग्राम का जीवन स्वीकार किया और अपने सारे मन को सेवा-साधना में लगा दिया। १९५०-१९७८—२८ वर्ष बीत गए। इन २८ वर्षों की कहानी सघर्षों की भट्टी में जलते जीवन की कहानी है। पता नहीं क्या होता यदि इस लम्बी यात्रा में उनका सहयोग ही नहीं—मार्ग-दर्शन न मिला होता।

मुझ से अनेक बार भूलें हुयी होंगी, शायद भयंकर भूलें भी, पर उन्होंने जिस उदारता से मन में तनिक खोट या मैल लाए बिना सब कुछ भुला दिया, उसकी उपमा नहीं।

उन्होंने सदा मेरे हर काम में सहयोग दिया। मुझ से भी आगे बढ़कर हाथ बंटाया। मुसीबतों में, संघर्षों में, थक जाने पर हिम्मत दिखायी और कुछ चाहा नहीं।

मान-अपमान की चिन्ता से दूर, यश अपयश से निर्लेप, परिणाम कभी सोचा नहीं, आराम कभी किया नहीं, प्रातः ७ से रात के १२-१२ बजे तक काम, चुपचाप काम, कितना विचित्र जीवन है इस नारी का। कितना अद्भुत त्याग है।

बदले में नेताओं की गालियाँ मिलीं, पुरुस्कार में अपमान मिला, सब कुछ हंस कर सहा, एक शब्द भी तो कभी कुछ नहीं कहा। हाँ सब में सहारा रहा जनता का, जिसने मुक्तहस्त होकर अपना आशीर्वाद प्यार सभी कुछ दिया। इसी सम्बल ने एक अजेय शक्ति प्रदान की।

जब दयानन्द संस्थान भारी घाटे के कारण १९७६ में अस्त-व्यस्त होने की स्थिति में आया और ऐसा अनुभव हुआ कि कहीं सारे कार्य बन्द ही न करने पड़ें तब उन्होंने अत्यन्त दृढ़ता से दयानन्द संस्थान का गरिमापूर्ण दायित्व स्वीकार किया और समय साक्षी है कि पिछले ३ वर्षों में उनके नेतृत्व ने संस्थान को नयी शक्ति प्रदान की है।

मेरे उनके स्वभाव में जमीन-आसमान का अन्तर है। वे गम्भीर-चिन्तनशील

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

और अत्यन्त कुशल राजनीतिज्ञ हैं। मैं जल्दी में निर्णय करने में विश्वास रखता हूं और जो मन में होता है सो कह देता हूं। मेरे स्वभाव की प्रखर आलोचक होते हुए भी उन्होंने कभी परस्पर कटुता नहीं आने दी, यही उनकी सफलता का मूलमन्त्र है।

वर्षों रुग्ण रहीं, तब भी प्रसन्न। ब्राँकाइटिस का तीव्र वेग, तब भी कार्य-रत, बुखार हो, सिर दर्द हो, चोट हो या कोई भी कठिन कष्ट उनके चेहरे पर उदासी नहीं आती, काम नहीं छूटता। कभी-कभी नाराज होकर काम बन्द करा देता हूं, सो जाती हैं, रात को नींद खुलती है तो देखता हूं पत्रों के उत्तर दिए जा रहे हैं। नाराज होता हूं तो मुस्कराते हुए उत्तर मिलता है, आखिर काम तो निपटाना ही है। अभी सोती हूं—१-२ घण्टे बाद नींद खुलती है तब भी उन्हें काम में व्यस्त पाता हूं।

क्रोध पिछले २८ वर्षों में शायद २-३ बार ही आया होगा। वे सब सहते हुए भी, स्वयं जलते हुए भी—ऊपर से मुस्कराने की कला में सिद्धहस्त हैं या पता नहीं, यह उनका स्वभाव ही बन गया है।

सब का ध्यान, सैकड़ों पत्रों पर स्वयं विचार अनेकों विभागों का संचालन और दिन रात धन के अभाव में भी काम चलाने की चिन्ता—और फिर भी बढ़ते जाना यह केवल उन्हीं के बस की बात है।

मेरे जीवन की साध थी १० बलि-दानी व्यक्ति। मिल जाते तो धरती बदल देता, पर दुर्भाग्य—यह आर्यसमाज है जहाँ बातें चलती हैं काम जहाँ अपराध है या सबसे बड़ा पाप। फिर भी मुझे एक व्यक्ति ऐसा मिला, जिसने मेरी इच्छा पर अपने जीवन के सारे सुखों की आहुति दे दी, इसलिए मैं मन-ही-मन उनकी वन्दना करता हूं।

वे जब तक हैं तब तक दयानन्द संस्थान सुरक्षित है। मुझे तो एक ही कष्ट है कि हमारे परिवार में अभीतक कोई ऐसा नहीं निकला जिसकी आहुति मैं इस धर्मयज्ञ में दे सकता। समय का प्रभाव नयी पीढ़ी पर अधिक है। हमारी भी त्रुटि हो सकती है पर मेरे मन की यही एक जलती हुई वेदना है।

काश! कि कोई अपने को जीवित जलने के लिए धर्म-यज्ञ में सामग्री बन सकता। यज्ञाग्नि बलिदान चाहती है। बलिदान जितने होंगे, प्रकाश उतना अधिक होगा।

जीवन के ४३ वर्ष में प्रवेश करते हुए मैं मन-ही-मन उनकी वन्दना करता हूं। इसलिए नहीं कि वे मेरी अर्धांगिनी है अपितु, इसलिए कि वे दयानन्द-संस्थान की प्राण हैं। उन्होंने मेरी इच्छा पर अपने जीवन की आहुति दी है।

प्रभु कृपा करें और उन्हें शक्ति दें कि वे अपनी दृढ़ता-गरिमा और उदात्त भावनाओं से संस्थान को आगे बढ़ाकर किसी योग्य व्यक्ति को संस्थान का कार्य-भार सौंप सकें—

मैं उनका कृतज्ञ हूं इसलिए कि उन्होंने मेरा दायित्व सम्भाला और दयानन्द की दिव्य पताका लेकर निर्भय अविराम वे बढ़ी जा रही हैं—

हृदय की समस्त शुभ कामनाओं के साथ—१०० जन्म दिन मना सकें—कामना भी, यह श्रद्धा-सुमन अर्पित है—

—भारतेन्द्र नाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पूज्या माता पंडिता राकेश रानी

जिनके तप-त्याग-उत्साह और कर्मठता के आगे सभी का मस्तक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

और अत्यन्त कुशल राजनीतिज्ञ हैं। मैं जल्दी में निर्णय करने में विश्वास रखता हूं और जो मन में होता है सो कह देता हूं। मेरे स्वभाव की प्रखर आलोचक होते हुए भी उन्होंने कभी परस्पर कटुता नहीं आने दी, यही उनकी सफलता का मूलमन्त्र है।

वर्षों रुग्ण रहीं, तब भी प्रसन्न। ब्राँकाइटिस का तीव्र वेग, तब भी कार्य-रत, बुखार हो, सिर दर्द हो, चोट हो या कोई भी कठिन कष्ट उनके चेहरे पर उदासी नहीं आती, काम नहीं छूटता। कभी-कभी नाराज होकर काम बन्द करा देता हूं, सो जाती हैं, रात को नींद खुलती है तो देखता हूं पत्रों के उत्तर दिए जा रहे हैं। नाराज होता हूं तो मुस्कराते हुए उत्तर मिलता है, आखिर काम तो निपटाना ही है। अभी सोती हूं—१-२ घण्टे बाद नींद खुलती है तब भी उन्हें काम में व्यस्त पाता हूं।

क्रोध पिछले २८ वर्षों में शायद २-३ बार ही आया होगा। वे सब सहते हुए भी, स्वयं जलते हुए भी—ऊपर से मुस्कराने की कला में सिद्धहस्त हैं या पता नहीं, यह उनका स्वभाव ही बन गया है।

सब का ध्यान, सैकड़ों पत्रों पर स्वयं विचार अनेकों विभागों का संचालन और दिन रात धन के अभाव में भी काम चलाने की चिन्ता—और फिर भी बढ़ते जाना यह केवल उन्हीं के बस की बात है।

मेरे जीवन की साध थी १० बलि-दानी व्यक्ति। मिल जाते तो धरती बदल देता, पर दुर्भाग्य—यह आर्यसमाज है जहाँ बातें चलती हैं काम जहाँ अपराध है या सबसे बड़ा पाप। फिर भी मुझे एक व्यक्ति ऐसा मिला, जिसने मेरी इच्छा पर अपने जीवन के सारे सुखों की आहुति दे दी, इसलिए मैं मन-ही-मन उनकी वन्दना करता हूं।

वे जब तक हैं तब तक दयानन्द संस्थान सुरक्षित है। मुझे तो एक ही कष्ट है कि हमारे परिवार में अभीतक कोई ऐसा नहीं निकला जिसकी आहुति मैं इस धर्मयज्ञ में दे सकता। समय का प्रभाव नयी पीढ़ी पर अधिक है। हमारी भी त्रुटि हो सकती है पर मेरे मन की यही एक जलती हुई वेदना है।

काश! कि कोई अपने को जीवित जलने के लिए धर्म-यज्ञ में सामग्री बन सकता। यज्ञाग्नि बलिदान चाहती है। बलिदान जितने होंगे, प्रकाश उतना अधिक होगा।

जीवन के ४३ वर्ष में प्रवेश करते हुए मैं मन-ही-मन उनकी वन्दना करता हूं। इसलिए नहीं कि वे मेरी अर्धांगिनी है अपितु, इसलिए कि वे दयानन्द-संस्थान की प्राण हैं। उन्होंने मेरी इच्छा पर अपने जीवन की आहुति दी है।

प्रभु कृपा करें और उन्हें शक्ति दें कि वे अपनी दृढ़ता-गरिमा और उदात्त भावनाओं से संस्थान को आगे बढ़ाकर किसी योग्य व्यक्ति को संस्थान का कार्य-भार सौंप सकें—

मैं उनका कृतज्ञ हूं इसलिए कि उन्होंने मेरा दायित्व सम्भाला और दयानन्द की दिव्य पताका लेकर निर्भय अविराम वे बढ़ी जा रही हैं—

हृदय की समस्त शुभ कामनाओं के साथ—१०० जन्म दिन मना सकें—कामना भी, यह श्रद्धा-सुमन अर्पित है—

—भारतेन्द्र नाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दयानन्द संस्थान की अध्यक्षा

पूज्या माता पंडिता राकेश रानी

जिनके तप-त्याग-उत्साह और कर्मठता के आगे सभी का मस्तक श्रद्धा से झुका जाता है।

—सुमेधा

Dr. Vidya Vachaspati Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

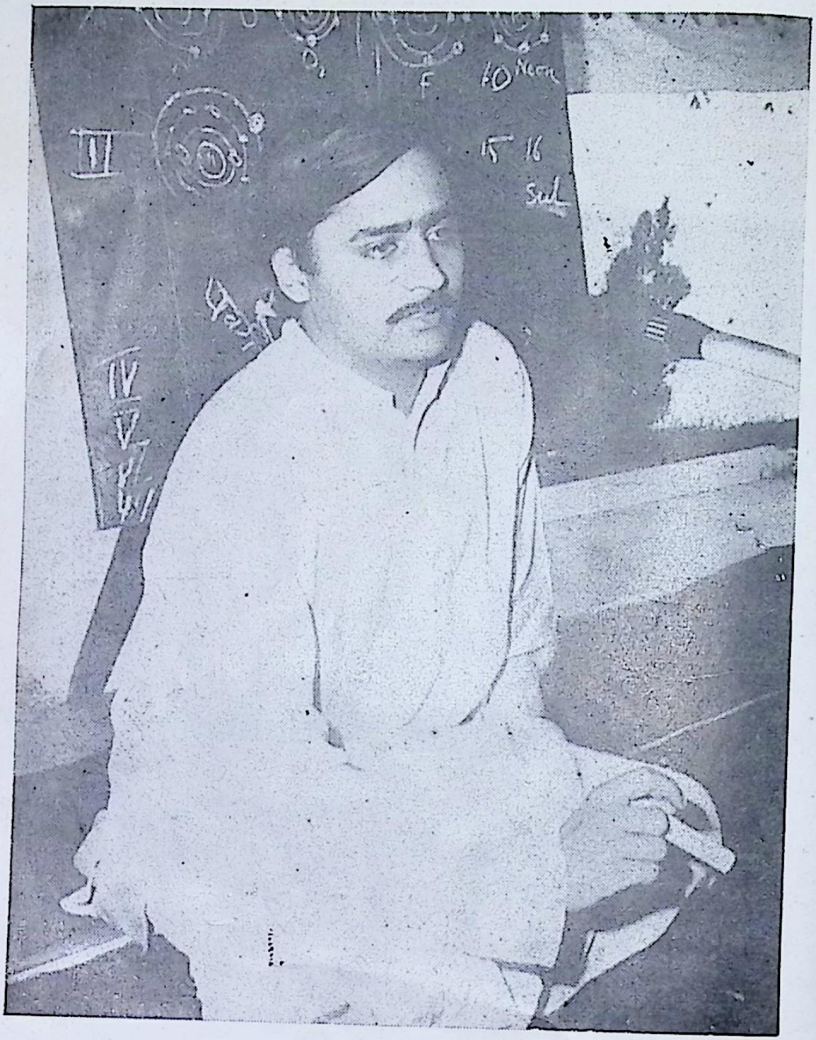

भाषण देते हुए,
दयानन्द कालिज अजमेर संस्कृत विभाग के अध्यक्ष प्रो० धर्मवीर
आपने देश की जनता से आग्रह किया है कि सांस्कृतिक निधि की सुरक्षा हेतु हमें अग्रसर होकर काम करना है। अब समय आ गया है जब सब कुछ दांव पर लगा कर आसुरी शक्तियों के षड़यन्त्र समाप्त करने होंगे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—पं० विश्वनाथ विद्यामार्तण्ड

जीवन को उन्नत कैसे करें ?

ब्रह्मवर्चस की प्राप्ति के उपाय

(१) नियमबद्ध जीवन

सूर्यस्यावृतमन्वावर्ते दक्षिणामन्वावृतम् ।
सा मे द्रविणं यच्छतु सा मे ब्राह्मणवर्चसम् ।।

अथर्व० १०।५।३७।।

(सूर्यस्य) सूर्य की (आवृतम्✡) रीति (अनु) पर (आवर्त्ते) मैं आता हू, (✡दक्षिणाम्) वृद्धि के (आवृतम्) मार्ग (अनु) पर मैं आता हूं, (सा) वह रीति (मे) मुझे (✡द्रविणम्) वल (✡यच्छतु) देवे (सा) वह (मे) मुझे (✡ब्राह्मण-वर्चसम्) सूर्यसम तेज देवे ।।९।।

भावार्थ—सूर्य की रीति है नियम। नियम से सूर्य उदित और नियम से अस्त होता है और नियम से ही ऋतुओं में परिवर्तन लाता है। नियम को यदि हम अपने जीवन में ले लें, तो हम वृद्धि के मार्ग पर पदार्पण करेंगे। और इससे हमें आत्मिक वल प्राप्त होगा, तथा हम भी सूर्यसम तेजस्वी बनेंगे। आदित्य-ब्रह्मचारी का तेज जो सूर्य-सम होता है उसका कारण उसके जीवन का नियमबद्ध होना ही है। इसीलिये उसे आदित्य-ब्रह्मचारी की संज्ञा मिली है।

✡निघण्टु २। ९।। ✡दाण् को यच्छ आदेश ।। ✡ ब्राह्मण—(१) ब्राह्मण वर्ण, (२) ब्रह्म का सूर्य—सूर्य, (३) ब्रह्मैव ब्राह्मणः—ब्रह्म, वर्चस्—दीप्ति या तेज ।।

✡दक्ष वृद्धौ ।। ✡आवर्त्यते इति—नियमः ।।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(२) ब्रह्मोपासना

ब्रह्माभ्यावर्ते तन्मे द्रविणं यच्छतु तन्मे ब्राह्मणवर्चसम् ।
अथर्व० १०।५।४०॥

(ब्रह्म) ब्रह्म (अभि) की ओर (आवर्ते) मैं आता हूं, (तत्) वह ब्रह्म (मे) मुझे (द्रविणम्) बल (यच्छतु) देवे, (तत्) वह ब्रह्म (मे) मुझे (✡ब्राह्मणवर्चसम्) ब्रह्मतेज देवे ॥१०॥

भावार्थ—मैं, प्रकृति के रास्ते से हट कर अब ब्रह्म की ओर आता हूं। ब्रह्म मुझे आत्मिक-बल और ब्रह्म-तेज देवे। ब्रह्म के संग से ब्रह्म के गुण हम में अवश्य आवेंगे, जैसे प्रकृति के संग से प्रकृति के गुण हम में आ जाते हैं। ब्रह्मतेज का ध्यान, उस पर विचार तथा उस की चित्त में उत्कट भावना से हम में भी वह ब्रह्मतेज आता जायगा। ब्रह्म के तेज और सूर्य के तेज में अन्तर है। ब्रह्म का तेज आत्मिक है और सूर्य का तेज प्राकृतिक। आत्मा में ब्रह्मतेज की स्थापना करना होता है और शरीर में सूर्यतेज की। ब्रह्म की उपासना से ब्रह्मतेज प्राप्त होता है और नियमबद्ध जीवन से सूर्य सम तेज प्राप्त होता है।

(३) सत्संग

ब्राह्मणां अभ्यावर्ते। ते मे द्रविणं यच्छन्तु ते मे ब्राह्मणवर्चसम् ॥
अथर्व० १० । ५ । ४१ ॥

(ब्राह्मणान्) ब्राह्मणों की (अभि) ओर (आवर्ते) मैं आता हूं। (ते) वे (मे) मुझे (द्रविणम्) बल (यच्छन्तु) देवें, (ते) वे (मे) मुझे (ब्राह्मणवर्चसम्) ब्रह्मतेज या अपना तेज देवें ॥११॥

भावार्थ—"ब्राह्मणे ब्राह्मणम्" यजु० ३०, ५ में ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति के लिये ब्राह्मण को प्राप्त करने की आज्ञा दी है। ब्रह्म कहते हैं—वेद और परमात्मा को। अतः ब्राह्मण वे हैं जो वेदों को जानते हैं, वेद पढ़ा सकते हैं, वेदानुकूल आचरण रखते हैं, तथा ब्रह्मवेत्ता हैं। ऐसे ब्राह्मणों का सत्संग करना चाहिये। ऐसे ब्राह्मणों के सत्संग से हम में भी (१) वैदिक-तेज, (२) परमात्म-तेज और (३) ब्राह्मण वर्ण का तेज आ जायगा।

सूर्य-सम तेजस्वी बनने की इच्छा

शुक्रोऽसि भ्राजोऽसि। स यथा त्वं भ्राजता भ्राजोऽस्येवाहं भ्राजता भ्राज्यासम् ॥ अथर्व० १७। १ । २० ॥

✡ ब्रह्मात् ब्राह्मणः, अर्थात् ब्रह्म को भी ब्राह्मण शब्द से कहते हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हे सूर्य ! (शुक्रः) तू प्रकाशमान् (असि) है, (भ्राज;) तेजःस्वरूप (असि) है। (यथा) जिस प्रकार (त्वम्) तू (सः) प्रत्यक्ष (भ्राजता) तेज के कारण (भ्राजः) तेजस्वी (असि) है (एवा) इसी प्रकार (अहं) मैं (भ्राजता) तेज के कारण (भ्राज्यासम्) तेजस्वी बनूं ॥१२॥

भावार्थ—सूर्य प्रकाशमान् है, तेजस्वी है। सूर्य का दर्शन कर और सूर्य को आदर्श मान कर अपने आप को भी वैसा ही प्रकाशमान् और तेजस्वी बनाने की दृढ़ इच्छा तथा कोशिश करनी चाहिए। सूर्य का नाम आदित्य भी है। तीसरी कोटि के ब्रह्मचारी का तेज सूर्यसम हो जाता है। इसीलिये उसे आदित्य-ब्रह्मचारी कहते हैं। आदित्य ब्रह्मचर्य ४८ वर्षों का होता है। अतः सूर्यसम प्रकाशमान् तथा तेजस्वी बनने की इच्छा के साथ-साथ उस का उपाय जो ४८ वर्षों का ब्रह्मचर्य है उसे भी आचरणों में लाना चाहिये।

उच्च कोटि के यशस्वी बनो

यशा इन्द्रो यशा अग्निर्यशाः सोमो अजायत।
यशा विश्वस्य भूतस्याहमास्मि यशस्तमः ॥ अथर्व० ६।३९।३॥

(इन्द्रः) सूर्य (यशाः) यशस्वी, (अग्निः) आग (यशाः) यशस्वी और (सोमः) चन्द्रमा (यशाः) यशस्वी (अजायत) हुआ है। (अहम्) मैं (यशाः) यशस्वी (अस्मि) हूं (विश्वस्य) सब (भूतस्य) संसार के बीच (यशस्तमः) अत्यन्त यशस्वी हूं ॥१३॥

भावार्थ—यशस्वी का अर्थ है यश वाला। यश कोई बुरी वस्तु नहीं। अपयश अवश्य बुरा है। प्रत्येक मनुष्य को यश प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिए। परमात्मा के लिये वेद में कहा है "यस्य नाम महद्यशः" यजु० ३२, ३। अर्थात् परमात्मा का बड़ा यश है परन्तु स्मरण रखना चाहिये कि यश "धर्म और सत्कर्मों" का फल है। अधर्म और असत्कर्मों का फल अपयश है, निन्दा है। यशस्वी होने के लिये असत्कार्यों का अवलम्बन नहीं करना चाहिये।

मन्त्र में यश की प्राप्ति में सूर्य, आग और चन्द्रमा का दृष्टान्त दिया है। इन के साथ "अजायत" अर्थात् जन धातु का प्रयोग किया है। जिसका अभिप्राय है कि सूर्य, आग और चन्द्र जन्म से ही यशस्वी हैं। यह क्यों ? कारण यह कि (क) ये तीनों प्रकाशस्वरूप हैं (ख) तथा इन का प्रकाश स्वार्थ के लिये नहीं अपितु परार्थ के लिये है। सूर्य इसलिये प्रकाशित नहीं कि सूर्य को अपने लिये प्रकाश चाहिये अपितु इसलिये कि इस का प्रकाश औरों को चाहिये। इस प्रकार सूर्य ने जन्म-काल

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

से ही स्वोपार्जित वस्तु को दूसरों के उपकार के लिये रख छोड़ा है न कि स्वार्थसिद्धि के लिये। इसी प्रकार आग और चन्द्रमा के सम्बन्ध में भी जानना चाहिये।

संसार में भी उसी व्यक्ति का यश होता है जो (क) प्रकाश मार्ग का अवलम्बन ले, (ख) तथा प्रकाश मार्ग पर चलते हुए उस ने जो भी प्रकाश प्राप्त किया है उस का परोपकार के अर्थ दान करे। दम्भ, द्वेष, कपट, ईर्ष्या, देशद्रोह, मित्रद्रोह, असत्य, नास्तिक्यादि दुर्गुण अन्धकारमार्ग के हैं। प्रेम, परोपकार, विद्या, ज्ञान, सदाचार, ब्रह्मचर्य, सत्य आदि सद्गुण प्रकाश मार्ग के हैं।

प्रथम तो मनुष्य स्वयं इस प्रकाश-मार्ग का अवलम्बन करे और प्रकाश प्राप्त होने पर उसे फिर औरों को दे। सूर्य आदि स्वयं ही यदि प्रकाशित न हों तो वे अन्यों को प्रकाश कैसे देंगे? इसी प्रकार मनुष्य यदि स्वयं ही अन्धकार में ठोकरें खा रहा है तो वह औरों को इन ठोकरों से कैसे बचा सकता है! अतः वेद आज्ञा देता है कि पहिले तुम (क) स्वयं प्रकाश प्राप्त करो (ख) और पुनः प्राप्त हुआ प्रकाश दूसरों को दो। इस प्रकार यशस्वी बनो।

यशस्वीपन की हद्द क्या है? इस के लिये वेद में कहा है कि "विश्वस्य भूतस्य यशस्तमः" अर्थात् मनुष्य को सारे संसार में सब से अधिक यशस्वी बनना चाहिए। संसार में कोई भी पदार्थ मनुष्य की अपेक्षा अधिक यशस्वी न होसके। यदि मनुष्य का यश किसी की अपेक्षा कम हो तो वह केवल एक प्रभु की अपेक्षा से। अन्य सब की अपेक्षा तो मनुष्य को ही अधिक यशस्वी होना चाहिये।

प्रत्येक सद्गुण में अत्यन्त यशस्वी बनो

यथेन्द्रो द्यावापृथिव्योर्यशस्वान्। यथाप ओषधीषु यशस्वतीः।
एवा विश्वेषु देवेषु वयं सर्वेषु यशसः स्याम्॥ अथर्व० ६।५८।२॥

(यथा) जैसे (इन्द्रः) सूर्य (द्यावापृथिव्योः) द्युलोक और पृथिवी लोक में (यशस्वान्) यश वाला है, (यथा) जैसे (आपः) जल (ओषधीषु) औषधियों में (यशस्वतीः) यश वाले हैं। (एवा) इसी प्रकार (विश्वेषु) सब (देवेषु) देवों में और (सर्वेषु) हरेक गुण में (वयम्) हम सब (यशसः) यश वाले (स्याम) हों॥१४॥

भावार्थ—१—इन्द्र—सूर्य द्युलोक और पृथिवीलोक में अपने प्रकाश और तेज के कारण यशस्वी है।

२—आपः-औषधियों में जल यशस्वी है। कारण यह कि ओषधियों में जल-रूप-औषध अधिक गुणकारी है। अतः औषधियों में जल यशस्वी है। जल-रूप-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

औषध का प्रयोग जल-चिकित्सा में होता है। तथा विना जल के अन्न ओषधियों की उत्पत्ति भी सम्भव नहीं। इसलिये भी जल का यश औषधि-जगत् में है।

३ – सूर्य और जल दोनों ही अपने-अपने दिव्यगुणों के कारण यश वाले बने हैं। हमें चाहिये कि इन देवों अर्थात् दिव्यगुणों वाले पदार्थों तथा विद्वज्जनों में, हम भी अपने दिव्य गुणों के कारण यश के भागी बनें। दिव्य गुणों वाले पदार्थों में यशस्वी होने का अभिप्राय यह है कि लोक में तेज के दृष्टान्त में सूर्य का, सौम्यगुण के दृष्टान्त में चन्द्र का तथा शान्ति के दृष्टान्त में जल का नाम लिया जाता है। मनुष्य तेज में सौम्यगुण में तथा शान्ति में इतना प्रसिद्ध हो जाये कि उसी को लोग उस-उस गुण के उत्कर्ष में दृष्टान्त रूप से पेश किया करें। तव हम कह सकते हैं कि अमुक मनुष्य दिव्यगुणों वाले पदार्थों में यशस्वी है। विद्वज्जनों में यशस्वी होने का अभिप्राय स्पष्ट ही है।

४—हम यह भी कोशिश करें कि प्रत्येक दिव्यगुण में हमारा नाम यशस्वी हो अर्थात् हम प्रत्येक दिव्यगुण के उत्कर्ष को प्राप्त करें।

संकल्प शक्ति के गुण

आकूतिं देवीं सुभगां पुरो दधे चित्तस्य माता सुहावा ना अस्तु।
यामाशामेमि केवली सा मे अस्तु विदेयमेनां मनसि प्रविष्टाम्॥

अथर्व० ६।४।२॥

(देवीं) दिव्यगुणों वाली (सुभगाँ) तथा उत्तम भग को पैदा करने वाली (आकूतिम्) संकल्प-शक्ति को (पुरः) आगे (दधे) मैं धरता हूं, चित्तस्य चित्त की (माता) माता रूप वह संकल्प-शक्ति (नः) हमारे लिये (सुहवा) सहज में बुलाने योग्य (अस्तु) होवे। (याम्) जिस (अशम् कामना को (एमि) मैं प्राप्त होऊं (सा) वह (मे) मेरी कामना (केवली) केवल अर्थात् अकेली हो, संकीर्ण न हों, (मनसि प्रविष्टाम्) मन में प्रविष्ट हुई (एनाम्) इस संकल्पशक्ति को (विदेयम्) मैं पाऊं॥१५॥

भावार्थ –ऊपर के मन्त्र में संकल्पशक्ति के विषय में निम्नलिखित बातें कहीं हैं—

(१) मनसि प्रविष्टाम्—संकल्प-शक्ति मन में प्रविष्ट है अर्थात् मन में रहती। संकल्प-शक्ति मन का धर्म है। अतः मन के संयम से हम संकल्प-शक्ति को अपने वश में कर सकते हैं।

(२) विदेयम्—प्रत्येक मनुष्य को संकल्प शक्ति की प्राप्ति के लिये यत्न करना चाहिये।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(३) सुहवा:—संकल्प-शक्ति को सुहव बनाना चाहिये। अर्थात् जिस समय चाहें उस संकल्प-शक्ति को हम बुला सकें, इसे चित्त में उपस्थित कर सकें, संकल्प-शक्ति मृत्यवत् हमारे वश में होकर रहे। कई मनुष्य ऐसे होते हैं कि उन में संकल्प-शक्ति का लगभग अभाव ही होता है। तथा कई ऐसे भी होते हैं जिनमें थोड़ी बहुत संकल्पशक्ति ही होती है परन्तु यथासमय वे अपने मन में संकल्पशक्ति को पैदा नहीं कर सकते। दोनों प्रकार के ये मनुष्य सदाचार तथा कर्त्तव्य में कमजोर होते हैं।

(४) केवली:—मन्त्र में यह भी कहा है कि एक समय में एक ही कामना करो। उस कामना की पूर्ति के लिये अपनी संकल्पशक्ति लगाओ तो कामनासिद्धि अवश्य और शीघ्र होगी। यदि एक ही समय में कई कामनाएं की जाएंगी तो सकल्प-शक्ति बंट जायगी और कार्यसिद्धि में उचित सहायता न दे सकेगी। अत: संकल्पशक्ति के अभ्यास करने वाले को चाहिये कि वह अपनी इच्छाओं का विश्लेषण (Analysis) करे और उन विशिष्ट कामनाओं में से प्रथम एक कामना को ले और मन में धारणा करे कि मैंने अमुक कार्य करना है। इस प्रकार अपना एक लक्ष्य निश्चित करके उस के लिये संकल्प-शक्ति को लगावे तो वह अवश्य सफल हो जायगा। अभ्यासी के चित्त में यदि बहुत कामनाएं एक दम उठ पड़ेंगी और वह अभ्यासी यदि किसी एक कामना को अपना लक्ष्य न बना सकेगा तो उसकी संकल्प-शक्ति उसकी मदद न कर सकेगी। अतः संकल्प-शक्ति के अभ्यासी को यह अभ्यास अवश्य प्राप्त करना चाहिये कि वह अपनी इच्छाओं, कामनाओं या आशाओं को केवल अर्थात् व्यक्ति के रूप में पृथक्-पृथक् कर सके। अर्थात् अनेक इच्छाओं की युगपत् उपस्थिति में भी वह उन संकीर्ण इच्छाओं को अकेला-अकेला कर सके और तत्पश्चात् इस अकेली-अकेली इच्छा को अपना लक्ष्य बनावे। इसी सिद्धान्त के दर्शाने के लिये मन्त्र में केवली पद का प्रयोग है।

(५) चित्तस्य माता—संकल्पशक्ति चित्त की माता है। माता के बिना सन्तति नहीं होती। चित्त को अस्तित्व देने वाली संकल्प-शक्ति ही है। संकल्प-शक्ति के बिना चित्त का स्वरूप ही सम्भव नहीं। क्योंकि चित्त के जितने भी गुण धर्म हैं, उन की कार्यक्षमता संकल्प-शक्ति पर ही निर्भर है। उदाहरण के लिए चित्त के एक धर्म अर्थात् ज्ञान को हम लेते हैं। ज्ञान की प्राप्ति भी दृढ़ संकल्प पर अवलम्बित है। ज्ञान की प्राप्ति के लिये कई कष्ट सहने पड़ते हैं। उन कष्टों पर विजय पाना दृढ़ संकल्प-शक्ति वालों का ही काम है। इसी प्रकार चित्त के अन्य गुणधर्मों को भी हम दृष्टांत रूप से पेश कर सकते हैं और सिद्ध कर सकते हैं कि उन गुणधर्मों की स्थिति संकल्प-शक्ति के बिना असम्भव है। इन गुणधर्मों को चित्त

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

से पृथक् कर के यदि सोचा जाय तो चित्त की स्थिति की कोई भी कल्पना मन में उपस्थित नहीं होती। अतः चित्त की स्थिति, चित्त के गुणधर्मों से पृथक् होकर, न के बराबर है। संकल्प-शक्ति चूंकि चित्त के गुणधर्मों की माता है, अतः वह चित्त की भी माता कही जाती है।

(६) देवीः—संकल्प-शक्ति देवी है। देवी का अर्थ है दिव्य गुणों वाली। वास्तव में संकल्प-शक्ति के बड़े-बड़े दिव्य गुण हैं। संकल्प-शक्ति के द्वारा हम आश्चर्यजनक कामों को कर सकते हैं। संकल्प-शक्ति के प्रभाव को देखने के लिए योगदर्शन के सिद्धिपाद का अवश्य स्वाध्याय करना चाहिए।

(७) सुभगाः—संकल्प-शक्ति सुभगा है। यह भग को पैदा करती है। भग के ६ अर्थ हैं—ऐश्वर्य, धर्म, यश, श्री, ज्ञान और वैराग्य। इन में से किसी की भी प्राप्ति संकल्प-शक्ति के बिना नहीं हो सकती। इसीलिये संकल्प-शक्ति को सुभगा कहा है।

(८) मन्त्र के "पुरोदधे" पदों पर भी ध्यान देना चाहिये। "विदेयम्" और "पुरोदधे" का अभिप्राय एक सा ही है। तो भी कुछ फर्क है। "विदेयम्" पद द्वारा संकल्प-शक्ति की प्राप्ति के लिये केवल इच्छा ही प्रकट की गई है और "पुरोदधे" पद द्वारा उस संकल्प-शक्ति को आगे रखने का प्रण किया गया है। आगे रखने का अभिप्राय यह है कि प्रथम कार्य करने के पूर्व दृढ़-संकल्प-शक्ति का प्रयोग किया जाय। यथा 'मैं इस कार्य को अवश्य करूंगा' 'इस कार्य को पूरा करने के लिये मुझ में शक्ति अवश्य है' 'मैं इस कार्य में उपस्थित होने वाली सब बाधाओं को हटा सकता हूं' इत्यादि प्रकार से संकल्पशक्ति को, प्रत्येक कार्य के करने के पूर्व, हम अपने चित्त में रक्खें। अथवा 'पुरोदधे' का यह भी अभिप्राय हो सकता है कि मैं संकल्प-शक्ति को सर्वदा अपने सामने रखता हूं। कभी उसे भुलाता नहीं।

(९) संकल्प-शक्ति का थोड़ा-सा और भी वर्णन हम पाठकों के विचारार्थ रखना चाहते हैं, ताकि पाठकों के चित्त में इस शक्ति का यथार्थ गौरव बैठ सके।

क—संकल्प पद "सम्+क्लृप्" से बनता है। सम् का अर्थ है—अच्छे प्रकार और क्लृप् का अर्थ है—सामर्थ्य। संकल्प से मन में अच्छा सामर्थ्य पैदा हो जाता है, यह भाव संकल्प पद की रचना से ही सूचित हो रहा है।

ख—शब्दस्तोममहानिधि में संकल्प का लक्षण निम्नलिखित शब्दों में किया है 'अभीष्टसिद्धये इदमित्थमेव कार्यमित्येव रूपे मनसो व्यापारभेद' जिसका अर्थ यह है कि "इष्टवस्तु की सिद्धि के लिये यह इस प्रकार ही करना चाहिये, इस प्रकार मन का जो

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

एक व्यापार विशेष है, उसे संकल्प कहते हैं।" आगे चलकर वही कोष फिर लिखता है "कर्मसाधनायामितापवाक्ये"। अर्थात् कर्म की सिद्धि के लिये दृढ़ निश्चय का द्योतक जो एक प्रकार का मानस-कथन है उसे संकल्प कहते हैं।" इसीलिये वेद में इस संकल्प-शक्ति का नाम आकूति दिया है। आकूति पद में जो "कु" धातु है उस का अर्थ है—शब्द करना। मन में जो दृढ़तासूचक वाक्य बोले जाते हैं यथा—"मैं ऐसा करूंगा" "यह अवश्य किया जा सकता है" इन्हीं का नाम आकूति या संकल्प है।

शब्दस्तोम में और भी लिखा है कि "मानससंकल्पो द्विविधः, भावाभाव-विषयभेदात्। तत्राद्यः मयैतत्कर्तव्यमित्येवंरूपः, द्वितीयः मयैतन्न कर्तव्यमित्येवंरूपः"। इस का अभिप्राय यह है कि 'मानसिक संकल्प के दो भेद हैं। एक प्रकार के मानसिक संकल्प का विषय भाव रूप है और दूसरे प्रकार के मानसिक संकल्प का विषय है अभाव रूप। यथा मुझे अमुक कार्य अवश्य करना चाहिए यह तो भावरूप संकल्प है और मुझे अमुक कार्य न करना चाहिये यह संकल्प अभाव रूप है। इसीलिये धर्म के भी दो भेद हैं विधिरूप और निषेधरूप। यथा—संध्या करना विधिरूप धर्म है और चोरी न करना निषेधरूप धर्म है।

ग—पद्मपुराण में भी लिखा है कि **"संकल्पेन बिना राजन्! यत्किंचित्कुरुते नरः। फलस्याल्पाल्पकं तस्य धर्मस्यार्वक्षयो भवेत्॥**

अर्थ—हे राजन्! संकल्प के बिना मनुष्य जो कुछ भी करता है उस का धर्म आधा रह जाता है, और उस के कार्य का फल भी अल्पाल्प होता जाता है।

कारण क्या? कारण यही है कि धर्म दो प्रेरक भावों द्वारा किया जा सकता है। या तो धर्म का गौरव जान कर स्वयं अपनी इच्छा द्वारा और या लोक-लज्जा अथवा लोकैषणा के द्वारा। जब अपनी इच्छा द्वारा धर्म किया जाता है तब तो उस के साथ संकल्प-शक्ति रहती ही है, और इस प्रकार उस धर्मकृत्य का भी उत्तम फल होता है। परन्तु जब यही धर्मकृत्य लोकलज्जा अथवा लोकैषणा से प्रेरित होकर किया जाता है, तब इस धर्मकृत्य के साथ कर्त्ता की वास्तविक इच्छा या संकल्प-शक्ति नहीं होती। धर्मकृत्य का करना केवल इस समय ढोंग मात्र होता है। अतः इस का फल भी उत्तम नहीं हो सकता। यही पद्मपुराण का यहां अभिप्राय है।

घ—लिंगार्चनतन्त्र के पांचवें पटल में लिखा है कि—

संकल्पं मानसं देवि! चतुर्वर्गप्रदायकम्।

अर्थः—हे देवि! मन का संकल्प चतुर्वर्ग का साधक है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष, यह चतुर्वर्ग है। सुभगा पद की व्याख्या का इसके साथ मुकाबिला करो।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ङ—मनुमहाराज ने भी संकल्प की महिमा दर्शाई है। यथा:—

संकल्पमूलः कामो वै यज्ञाः संकल्पसम्भवाः।
व्रतानि यमनियमाश्च सर्वे संकल्पजाः स्मृताः॥

अर्थः—संकल्प, इच्छा-सिद्धि का मूल है, संकल्प से यज्ञ होते हैं। व्रत, यम और नियम भी संकल्पजन्य हैं।

च—इसी प्रकार यजुर्वेद अध्याय ३४ मन्त्र १ से ६ में भी "तन्मे मनः" शिवसंकल्पमस्तु" द्वारा मानसिक शिवसंकल्पों की प्राप्ति के लिये कहा है। 'मैंने संसार भर का दुःख हटाना है" "मैंने पाप कभी नहीं करना" ये तो शिवसंकल्प है। इससे विपरीत 'मैंने इसका बदला अवश्य लेना है" "मैं उसको अवश्य सताऊंगा" ये अशिवसंकल्प हैं।

(१०) आकूति=आ×कूज् (शब्दे)×क्तिन्। अर्थात् अपने चित्त में शब्द उठाये कि "मैं कार्य कर सकता हूं" "यह कार्य उत्तम है" "इसे करना चाहिये" 'मेरी शक्ति प्रतिबन्धों पर अवश्य विजय पा लेगी' ये शब्द संकल्प शक्ति या आकूति के उदाहरण हैं।

(११) आशा=आङ्+शासु इच्छायाम्। अतः आशा का अर्थ है—इच्छा, कामना।

आशामय जीवन

पश्येम शरदः शतम्।१। जीवेम शरदः शतम्।२।
बुध्येम शरदः शतम्।३। रोहेम शरदः शतम।४।
पूषेम शरदः शतम्।५। भवेम शरदः शतम्।६।
भूषेम शरदः शतम्।७। भूयसीः शरदः शतात्।८।
अथर्व १९।६७।१-८॥

(शतम्) सौ (शरदः) वर्ष (पश्येम) हम देखते रहें।१।
(शतम्) सौ (शरदः) वर्ष (जीवेम) हम जीते रहें।२।
(शतम्) सौ (शरदः) वर्ष (बुध्येम) हम बोध प्राप्त करते रहें।३।
(शतम्) सौ (शरदः) वर्ष (रोहेम) हम बढ़ते रहें।४।
(शतम्) सौ (शरदः) वर्ष (पूषेम) हम पुष्ट होते रहें।५।
(शतम्) सौ (शरदः) वर्ष (भवेम) हम बने रहें।६।
(शतम्) सौ (शरदः) वर्ष (भूषेम) हम देह-भूषा करते रहें।७।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(शतात्) सौ से भी (भूयसीः) अधिक (शरदः) वर्षों तक हम उपरोक्त कार्य करते रहें ।१६।

भावार्थः—(१) आज कल छोटी आयु में ही इन्द्रियां काम देना बन्द कर देती हैं। वेद में लिखा है कि हमारी आंख की शक्ति १०० वर्षों तक बनी रहे।

(२) वेद का जीवन इतना आशामय है कि वेदों का भक्त १०० वर्षों तक लगातार ज्ञान प्राप्त करते रहने का अभिलाषी है।

(३) हमारे बढ़ने की शक्ति आजकल लगभग २५ सालों की उम्र तक सीमित है। परन्तु मन्त्र में सौ वर्षों तक निरन्तर बढ़ते जाने का कथन है।

(४) तथा साथ ही सौ वर्षों तक निरन्तर पुष्टि प्राप्त करते जाने का भी कथन है।

(५) वेद मनुष्यों के जीवन में से आनन्द और मोद-प्रमोद का रस निकाल कर उन्हें सूखी लक्कड़ नहीं बनाना चाहता। इसीलिए ७वें टुकड़े या मन्त्र में यह इच्छा प्रकट की गई है कि हम सौ वर्ष तक अपना भूषण तथा शोभा-सौन्दर्य स्थिर रखें। बल्कि —

(६) भूयसीः अर्थात् सौ वर्षों से अधिक भी उपरोक्त कार्यों को करें। वैदिक धर्म के आशामय जीवन का थोड़ा सा नमूना ऊपर के मन्त्रों में दिया है। उनके पढ़ने से पाठकों के चित्तों में उस आशामय जीवन का चित्र अवश्य अंकित हो गया होगा।

जीवन की पवित्रता

पुनन्तु देवजनाः पुनन्तु मनवो धिया। पुनन्तु विश्वा भूतानि पवमानः पुनातु मा॥ अथर्व० ६। १९।१॥

(देवजनाः) दिव्यगुणों वाले जन (मा) मुझे (पुनन्तु) पवित्र करें, (मनवः) मननशील मनुष्य मुझे (धिया) बुद्धि और कर्म द्वारा (पुनन्तु) पवित्र करें। (विश्वा) सब (भूतानि) भूत (पुनन्तु) मुझे पवित्र करें (पवमानः) पवित्र परमात्मा (मा) मुझे (पुनातु) पवित्र करे ॥१७॥

भावार्थः—(१) देवजनाः—वे जन जो दिव्यगुणों वाले हैं, दिव्यगुणों को देकर मुझे पवित्र करें। सत्यभाषण, परोपकार, दया आदि दिव्यगुण हैं। इन गुणों के धारण करने से मनुष्य पवित्र हो जाता है। जिन जनों में ये दिव्यगुण रहते हैं उन्हें देवजन कहते हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(२) मनवः-- मननशील मनुष्य मेरी बुद्धि को पवित्र कर मुझे पवित्र करें। पवित्र और अपवित्र कर्मों का मूल बुद्धि है। इसीलिए श्रेष्ठ गायत्री मन्त्र में भी बुद्धि के लिए प्रार्थना है। बुद्धि के पवित्र हो जाने पर कर्म स्वयं पवित्र हो जाते हैं। मन्त्र में बुद्धि और उसके द्वारा जीवन को पवित्र करने का सामर्थ्य 'मानव' को दिया है। मनवः का अर्थ है—मननशील मनुष्य। अतः इस वर्णन से स्पष्ट प्रतीत हो रहा है कि बुद्धि को पवित्र करने का मुख्य साधन मनन है। जैसे-जैसे हम सत्कर्मों और सद्-विचारों का मनन करेंगे, वैसे-वैसे हम में मानसिक स्थिरता के साथ-साथ, उन सत्कर्मों तथा सद्विचारों में अनुराग बढ़ता जायगा जिसका कर्मों पर भी अवश्य असर होगा।

(३) विश्वाभूतानिः— विश्वभूत मुझे पवित्र करें, यह तीसरा प्रक्रम है। जब हमारे जीवनों में विश्व-भूत-हित का भाव जागृत होता है तो यह भाव हमें पवित्र बना देता है। जैसे-जैसे स्वार्थ के भावों के स्थान में परार्थ के भाव आतेजाते हैं जीवन भी वैसे ही शनैः शनैः पवित्र होता जाता है।

(४) पवमानः—चौथा प्रक्रम है, परमात्मा से पवित्रता का मांगना। परमात्मा पवित्र से भी पवित्र है, इससे बढ़कर कोई पवित्र नहीं। अतः परमात्मा की स्तुति, प्रार्थना और उपासना द्वारा अपने जीवन को पवित्र बनाना, यह अन्तिम साधन है। इस प्रकार इस मन्त्र में पवित्रता के चार साधन माने हैं १—देवजनों की सत्संगति द्वारा दिव्यगुणों का लाभ, २—मननशीलों की सत्संगति द्वारा मनन का लाभ, ३—विश्वभूतहित, ४—परमात्मा की स्तुति, प्रार्थना और उपासना। इन चारों साधनों से हमारा जीवन पवित्र हो सकता है।

पवित्रता के बिना उत्तम बुद्धि, उत्तम कर्म, उन्नत जीवन तथा अहिंसा असम्भव है

पवमानः पुनातु मा क्रत्वे दक्षाय जीवसे। अथो अरिष्टतातये।
अथर्व० ६।१९।२॥

(पवमानः) पवित्र परमेश्वर (मा) मुझे (पुनातु) पवित्र करे, (क्रत्वे) बुद्धि और कर्म के लिये, (दक्षाय) वृद्धि तथा बल के लिये, (जीवसे) जीवन के लिये, (अथो) और उसके बाद (अरिष्टतातये) अहिंसा के विस्तार के लिये ॥१८॥

भावार्थः—मन्त्र में पवित्र परमात्मा से पवित्रता मांगी है। बिना पवित्रता के बुद्धि-शक्ति तथा कर्मयोग, चहुंमुख वृद्धि तथा शारीरिक मानसिक, और आत्मिक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बल तथा उत्तम जीवन नहीं हो सकते। और इनकी प्राप्ति के बिना अहिंसाभाव का विस्तार हम नहीं कर सकते। पवित्रता साधन है क्रतु, दक्ष और पवित्र जीवन में। क्रतु दक्ष तथा उत्तम जीवन साधन हैं अरिष्टताति अर्थात् अहिंसाभाव के विस्तार में। अतः प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है कि वह पवित्रता को प्राप्त कर क्रतु, दक्ष तथा उत्तम जीवन को प्राप्त करे और इनको प्राप्त कर संसार में अहिंसा का प्रचार करे। अहिंसा वृत्ति के मूल में पवित्रता का निवास है। जीवन में पवित्रता के बिना अहिंसा का भाव जागृत नहीं हो सकता। एक बात और स्मरण रखनी चाहिये। हिंसकों के प्रति हिंसा का व्यवहार न करने में ये दो भाव हैं —(क) कायरता, (ख) अहिंसा वृत्ति। यदि मनुष्य कायर है तब तो वह हिंसकों के प्रति हिंसा का व्यवहार कर ही नहीं सकता। यदि वह प्रत्युपकार के लिये बल रखता हुआ भी हिंसा नहीं करता तो वह इसलिये नहीं कि वह कायर है, अपितु इसलिये कि वह इस मार्ग का अवलम्बन करना ही नहीं चाहता। यही वृत्ति अहिंसा भाव की है। बल न होने पर क्षमा कर देना क्षमा नहीं, अपितु कायरता है। और बल के रहते हुए क्षमा कर देना वास्तव में क्षमा है। यही अहिंसा है। इसीलिये मन्त्र में दक्ष अर्थात् बल की प्राप्ति के बाद अरिष्टताति अर्थात् अहिंसा का वर्णन है। अतः बिना पवित्रता के क्रतु, दक्ष और जीवन का पूर्ण विकास नहीं हो सकता और बिना इनके पूर्ण विकास के अहिंसा धर्म का विस्तार नहीं हो सकता।

पाप निराकरण के उपाय

(१) पापों से अलग होने की दृढ़ इच्छा

वि देवा जरसावृतन् वि त्वमग्ने अरात्या। व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा। अथर्व० ३।३१।१।

(देवाः) देव लोग (जरसा) बुढ़ापे से (वि) अलग (अवृतन्) रहे हैं, (अग्ने) हे आग हैं (त्वम्) तू (अरात्या) अदान से (वि) अलग रही है। (अहम्) मैं (सर्वेण) सब (पाप्मना) पाप से (वि) अलग रहूं, (आयुषा) उत्तम तथा पूर्ण आयु से (सम्) संयुक्त रहूं।१६।

भावार्थः —(१) इस मंत्र में व्यक्ति, पापों और रोगों से अलग रहने की इच्छा प्रकट करता है। इस इच्छा की पूर्ति के लिये वह संसार के दो प्रसिद्ध दृष्टान्तों को अपने सन्मुख रखता है। पहिला दृष्टान्त देवों का और दूसरा अग्नि का है। देव बुढ़ापे से और आग अदान से जैसे सदैव अलग रहते हैं, कभी इनसे संबद्ध नहीं होते, इसी प्रकार मैं भी पापों और रोगों से अलग हो जाऊं, यही दृढ़ेच्छा इस मन्त्र द्वारा की गई है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(२) मन्त्र में कहा है कि देवों को बुढ़ापा नहीं आता। वे सदैव बुढ़ापे से उन्मुक्त रहते हैं। यूं तो बुढ़ापा सभी को आता है, भेद इतना ही है कि देवों को केवल शरीर का बुढ़ापा आता है और वह भी देर में, परन्तु हम लोगों को शरीर और मन दानों का बुढ़ापा आता है और वह भी शीघ्र। यदि मन में बुढ़ापा नहीं तो शरीर का बुढ़ापा कोई बुढ़ापा नहीं। देव कहते हैं "दिव्य गुण वालों को"। सदाचारी, परोपकारी, निर्भय, उदार, शूर तथा विद्वान् देव हैं। इन को मानसिक बुढ़ापा कभी भी नहीं आता। जैसे ये बुढ़ापे से छूटे हुए हैं इसी प्रकार पापों और रोगों के सम्बन्ध से मैं भी सदा छूटा रहूं।

(३) दूसरा दृष्टान्त है अग्नि का। अग्नि अदान से सदोन्मुक्त है। अग्नि ताप और प्रकाश के साथ ही पैदा होता है। पाप और प्रकाश से शून्य अग्नि की सत्ता ही नहीं हो सकती। अग्नि पैदा होते ही ताप और प्रकाश का दान भी करने लगता है। ऐसा कभी नहीं हो सकता कि अग्नि पैदा हो, उसके पास ताप और प्रकाश हों और वह उस ताप और प्रकाश का दान न करे। दीपक जलते ही वह ताप और प्रकाश का दान करने लगता है। अतः अग्नि अदान से सर्वथा और सर्वदा अलग है। इसी प्रकार इस अग्नि में जो वस्तु लायी जावे उसे यह अपने लिये नहीं रखता अपितु उसे पूर्णरूप में वायु, जल तथा ओषधि आदि को दान कर देता है। जैसे अग्नि अदान से अलग है इसी तरह मैं भी पापों और रोगों से अलग हो जाऊं, इस प्रकार की इच्छा पाठक किया करें, यह मन्त्र में सूचित किया है।

(४) मन्त्र में दूसरी यह इच्छा की गई है कि मैं उत्तम तथा पूर्ण आयु वाला होऊं। इस प्रसंग में मन्त्र के पिछले आधे हिस्से पर पुनर्विचार की अत्यन्त आवश्यकता है। मन्त्र के इस हिस्से में तीन इच्छाओं का वर्णन है। (क) मैं सभी पापों से पृथक् हो जाऊं। पाप तीन तरह के होते हैं – मानसिक, वाचिक और कायिक। किसी का बुरा चाहना, कुविचार करना आदि मानसिक पाप हैं। कठोर बोलना, निन्दा करना, असत्य बोलना आदि वाचिनक पाप हैं। व्यभिचार, हिंसा, कुचेष्टा आदि कायिक पाप हैं। (ख) दूसरी इच्छा यह है कि मैं रोगों से मुक्त हो जाऊं (ग) तीसरी इच्छा यह है कि मैं उत्तम और पूर्ण आयु के साथ संयुक्त हो जाऊं। इन तीनों इच्छाओं में कार्यकारणभाव है। तभी इन का इस क्रम से वर्णन मन्त्र में किया है। पापों से हटने पर रोगों से मुक्ति हो सकती है और रोगों से मुक्ति मिलने पर आयु की उत्तमता और पूर्णता हो सकती है। पापी मनुष्य कभी रोगों से मुक्त नहीं हो सकता और रोगी कभी भी उत्तम तथा पूर्ण आयु को प्राप्त नहीं कर सकता। अतः प्रथम पापों से हटना चाहिये, पुनः हम रोगों से मुक्ति पा सकेंगे और तत्पश्चात् हम उत्तम तथा पूर्ण आयु प्राप्त कर सकेंगे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(५) परन्तु प्रश्न पैदा हो सकता है कि इस मन्त्र में पापों से अलग होने का कोई तरीका या साधन तो बतलाया नहीं, फिर पापों से छुटकारे का वर्णन कैसा? इसका उत्तर यह है कि "मैं पापकर्मों से अलग रहूं" यह दृढ़ेच्छा ही मनुष्य को पाप-कर्मों से बचाती है। यह सदिच्छा ही मनुष्य को पाप-पंक से बाहिर निकाल देती है। "मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः" मन ही मनुष्यों के बन्ध और मोक्ष का कारण है। यदि सदिच्छा से मनोभूमि को परिष्कृत कर लिया जाय तो इसमें पाप की जड़ लग ही नहीं सकती। मनुष्य के मन में यदि पापों से छुटकारा पाने की दृढ़ेच्छा हो गई है तो वह अवश्य ही पापबन्धन से मुक्ति पा सकता है। और इस प्रकार पापों से छुटकारा पाने पर जब शरीर, मन और आत्मा रोगों से मुक्त होकर स्वस्थ हो जावें तो मनुष्य की आयु उत्तम तथा पूर्ण हो सकती है। इसलिये इस मन्त्र में पापों से छूटने की इच्छा करने मात्र का ही उपदेश है।

पाप-निराकरण के उपाय

(२) पवित्रता और (३) शक्ति

व्यार्त्या पवमानो वि शक्रः पापकृत्यया। व्यहं सर्वेण
पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा॥ अथर्व० ३। ३१। २॥

(पवमानः) पवित्र करने वाला (आर्त्या) दुःख-पीड़ा से (वि) अलग है, (शक्रः) शक्तिशाली (पापकृत्यया) पाप-कर्म से (वि) अलग है। (अहम्) मैं (सर्वेण) सब (पाप्मना) पापों से (वि) अलग रहूं, (यक्ष्मेण) क्षयरोग से (वि) अलग रहूं, (आयुषा) उत्तम और पूर्ण आयु से (सम्) संयुक्त होऊं॥२०॥

भावार्थ—(१) इस मन्त्र में वि और सम् के साथ पूर्व मन्त्र में पठित वृत् धातु का सम्बन्ध करना चाहिये।

(२) मन्त्रगत पवमान और शक्र पद परमात्मा के नाम हैं। परमात्मा स्वयं पवित्र है और अन्यों को पवित्र करता है, अतएव दुःख-पीड़ा उसे नहीं होते। दुःख और कष्ट अपवित्र कर्मों के फल हैं, पवित्र कर्मों के नहीं। पवित्र कर्मों का फल सुख और आनन्द होता है। परमात्मा साधुकर्मा है, पवित्रकर्मा है, अतः उसे सर्वदा आनन्द होता है। उसके साथ दुःख और कष्ट का सम्पर्क नहीं। वह दुःख और कष्ट से सर्वदा अलग है। इस ऊपर लिखे सत्य सिद्धान्त के दर्शाने के लिये "व्यार्त्या पवमानः" ऐसे शब्द मन्त्र में रक्खे हैं; जिनका यह भाव है कि चूंकि परमात्मा पवमान है इसीलिये वह आर्ति अर्थात् कष्टों से अलग है। इसी प्रकार जो कोई भी

पूङ् पवने। (२) ऋ हिंसायाम्। (३) शक्लृ शक्तौ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पवमान होगा अर्थात् स्वयं पवित्र होकर औरों को भी पवित्र बनावेगा वह दुःख और कष्टों से अवश्य छुटकारा पालेगा।

(३) मन्त्र का दूसरा टुकड़ा है "वि शक्रः पापकृत्यया"। जिसका अर्थ यह है कि शक्तिशाली, पाप-कर्म से अलग रहता है। धर्मशास्त्रों में पापवृत्तियों को शत्रु कहा है। ये पापवृत्तियां बाह्यशत्रु नहीं अपितु अन्तःशत्रु हैं। बाह्यशत्रु, धन माल घर नगर पर प्रहार करते हैं और अन्तःशत्रु मन पर। शत्रुओं के रोकने के लिये समाज और राष्ट्र में शक्ति चाहिये। इस शक्ति के अभाव में शत्रु अवश्य ही उस समाज तथा राष्ट्र को दबा लेंगे। इसी प्रकार जिस मनुष्य में शक्ति नहीं कि वह अपने अन्तःशत्रुओं को रोक सके, उसके अन्तःशत्रु उसे अवश्य दबा लेंगे। परमात्मा शक्र है। वह शक्तिमान् है। अतएव वह पापकृत्या से अलग है। पाप का बल, शक्तिशाली परमात्मा पर कुण्ठित हो जाता है। इसी प्रकार जो मनुष्य पाप को परास्त करने के लिये अपने अन्दर शक्ति का संचय कर लेता है पाप उसे भी नहीं सताता। अतः प्रत्येक मनुष्य को आत्मिक बल का और मनःशक्ति का संचय करना चाहिये। शारीरिक बल का क्षय होना भी पाप का साधन बन जाता है।

(४) अतः पापों से अलग रहने के दो उपाय इस मन्त्र के पूर्वार्ध में बताये हैं।

(क) पवित्र होना, (ख) शक्ति प्राप्त करना। मन्त्र के उत्तरार्ध में पाप से अलग होने का (ग) तीसरा उपाय "पाप से अलग होने की इच्छा" बतलाया है। इस प्रकार इन उपायों द्वारा सब पापों से मुक्त होकर रोगों से मुक्त हो, हम उत्तम तथा पूर्ण आयु को पा सकते हैं।

पाप-निराकरण के उपाय

(४) ब्रह्म

यथा वातश्च्यावयति भूम्या रेणुमन्तरिक्षाच्चाभ्रम्। एवा मत्सर्वं दुर्भूतं ब्रह्मनुत्तमपायति॥ अथर्व० १०। १। १३॥

(यथा) जैसे (वातः) वायु (भूम्याः) भूमि से (रेणुम्) धूलि को (च) और (अन्तरिक्षात्) अन्तरिक्ष से (अभ्रम्) मेघ को (च्यावयति) विच्युत कर देता है। (एवा) इसी प्रकार (ब्रह्मनुत्तम्) ब्रह्म द्वारा धकेला हुआ (सर्वम्) सब (दुर्भूतं) पाप (मत्) मुझ से (अपायति) दूर हट जाता है॥२१॥

भावार्थ—(१) वैदिक साहित्य में ब्रह्म शब्द द्वारा तीन अर्थ लिये जाते हैं। परमात्मा, वेद और ब्राह्मण। परन्तु इस मन्त्र में ब्रह्म शब्द द्वारा परमात्मा का ही ग्रहण प्रतीत होता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(२) मन्त्र में चित्त को भूमि और अन्तरिक्ष से, दुर्भूत अर्थात् पाप को रेणु और अभ्र से, तथा वायु को ब्रह्म से उपमित किया गया है। वायु, भूमि से मृत्कणों को और अन्तरिक्ष से मेघों को, अनायास ही स्थानभ्रष्ट कर देता है। इसी प्रकार ब्रह्मरूपी वायु भी, चित्तरूपी भूमि और अन्तरिक्ष से, पापरूपी रेणु और अभ्र को धकेल कर दूर कर देता है।

(३) वायु के दृष्टान्त द्वारा ब्रह्म में पापों को दूर करने की स्वाभाविक शक्ति वतलाई है। पाप, रजोगुण और तमोगुण का धर्म है। योगदर्शन में लिखा है कि आराधना द्वारा ब्रह्म जब प्रसन्न हो जाता है तो वह भक्तों पर अनुग्रह करता है और भक्तों के रज तथा तम को दूर कर उन को समाधिलाभ शीघ्र कराता है। देखो योगदर्शन पा० १, सू० २३, तथा उस पर भाष्य। जब रज और तम दूर हुए तो रज और तम के धर्म भी दूर हो जाते हैं। पाप, रज और तम का ही धर्म है। पाप, सत्य का धर्म नहीं। अतः ब्रह्म द्वारा या ब्रह्मोपासना द्वारा पाप दूर हो जाते हैं यह सिद्धान्त स्पष्ट है।

(४) नुत्तम् पद पर विशेष ध्यान देना चाहिये। इस पद से स्पष्ट प्रतीत होता है कि ब्रह्म अपने भक्तों के पापों को धकेलता है। अतः पापों को दूर करने में ब्रह्म, कृति-प्रधान-साधन (Active agent) है। अतः जिन लोगों की यह कल्पना है कि उपासना केवल Acto suggestion (स्वोद्बोधन) द्वारा ही उपासक को फल देती है, वे भ्रम में हैं। उपासना में स्वोद्बोधन के आंशिक सामर्थ्य से इन्कार किसी को नहीं। परन्तु उपासना का मुख्य प्रयोजन, उपास्य देव को प्रसन्न कर उस की प्रसन्नता का भाजन वनाना ही है। जब परमात्मा उपासना द्वारा प्रसन्न हो जाते हैं, तो वे, भक्त के पापों को दूर करते और उसकी सत्य मनोवाञ्छा को पूरा करते हैं। उपासना में परमात्मा के इस Active रूप का निर्देश करने के लिये ही मन्त्र में नुत्तम् पद दिया प्रतीत होता है।

(५) जब मनुष्य पाप कर लेता है उस के वाद उस के मन में थोड़ा बहुत दुःख अवश्य होता है। और वह कहता है कि "बुरा हुआ" अर्थात् मैंने अच्छा नहीं किया। दुर्=बुरा, भूतम् हुआ। मनुष्य पाप को दृष्टि में रख कर ही "दुर्भूतम्" कहता है; अतः पाप का नाम ही 'दुर्भूतम्' पड़ गया है।

(६) ओषधि कोई तो एक बीमारी को दूर हटाती है कोई दूसरी को। परन्तु परमात्मा की भक्ति एक ऐसी औषध है जो कि सभी पापरूपी रोगों को दूर हटाता है। अतएव मन्त्र में 'सर्वम्' पद रक्खा है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पाप निराकरण के उपाय

(५) पापवृत्ति को वशीभूत करना

अव मा पाप्मन् सृज दशी सन् मृडयासि नः। आ मा भद्रस्य लोके पाप्मन् धेह्यविहुतम् ॥ अथर्व० ६।२६।१॥

(पाप्मन्) हे पाप ! (मा) मुझे (अवसृज) छोड़ दे, (वशी) हमारे वशीभूत (सन्) होकर (नः) हम को (मृडयासि) सुखी कर। (मा) मुझे। (अविहुतम्) कुटिलता से जुदा करके (भद्रस्य) कल्याण और सुख के (लोके) लोक में (आधेहि) स्थापित कर ॥२२॥

भावार्थ—(१) जिस प्रकार कोई मनुष्य किसी हत्यारे के चुंगल में फंसा हुआ, उस से छूटने के लिए किसी अन्य उपाय को हस्तगत न जान, उसी से अनुनय-विनय करने लगता है इसी प्रकार की अवस्था का वर्णन इस मन्त्र में है। जब मनुष्य पाप की पकड़ से निकल नहीं सकता, परन्तु निकलना चाहता है तब वह पाप से ही छुटकारे के लिये विनय करता है कि हे पाप ! तू कृपा कर, मुझे छोड़ जा। परन्तु जब वह विनय से भी नहीं मानता, तब छुटकारा पाने वाला धैर्य्यावलम्बन कर उसे अपनी इच्छाशक्ति के आधीन करना चाहता है, और कहता है कि तू हमारे वशीभूत हो, और वशीभूत होकर हम को सुखी कर। पापवृत्तियों को जब वश में कर लिया जाता है तब मनुष्य को सुख होता है। उसका चित्त शान्त और सन्तुष्ट हो जाता है। परन्तु इस प्रयत्न के करने के बाद भी पाप जब वशीभूत नहीं होता, तब मनुष्य पुनः अनुनय-विनय का मार्ग पकड़ता है। और पाप से कहता है कि हे पाप ! तू कृपा कर, मुझे कुटिल मार्ग से पृथक् कर, मुझे भद्रमार्ग में स्थापित कर। इस प्रकार, पाप से छूटने की इस प्रथम अवस्था में, डाँट-डपट, अनुनय-विनयरूपी साधन का ही आश्रय लेना पड़ता है। जिन लोगों ने अपनी पापमयी वृत्तियों के जीतने में कुछ भी प्रयत्न किया है, वे इस साधन की खूबी को अच्छे प्रकार समझ सकते हैं।

(२) पाप भी हमें पुण्य का रास्ता दिखलाता है। पाप जब अन्तिम कोटि तक पहुंच जाता है तब चित्त में प्रतिक्रिया (Re-action) पैदा होने लगती है। और पापी उस समय पुण्य मार्ग पर पग रखने लगता है। इसी अभिप्राय से मन्त्र में कहा है कि भद्रलोक में पहुंचाने की शक्ति पाप में भी है। भद्रलोक का अर्थ श्रेय और प्रेयमार्ग है।

(३) 'अविहुतम्' पद द्वारा यह सूचित किया गया है कि मन में जबतक कुटिलता रहती है तब तक मनुष्य भद्रलोक में नहीं जा सकता अर्थात् भद्र नहीं बन सकता। कुटिलता सब पापों का पूर्वरूप अर्थात् कारण है। कुटिलता का अर्थ है

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

टेढ़ापन। मन जब सीधा अर्थात् अपनी स्वाभाविक अवस्था में होता है तब वह पापों की ओर नहीं झुकता। मन जब पाप करने में झुकता है तो उसे अपने स्वाभाविक रूप को छोड़ना पड़ता है और एक टेढ़ा रूप धारण करना पड़ता है। अतः मन को अपनी स्वाभाविक सरल अवस्था में रखना भी पापों से छूटने का उपाय है।

पाप निराकरण के उपाय

(६) दृढ़ संकल्प

यो नः पाप्मन् न जहासि तमु त्वा जहिमो वयम् ।। अथर्व० ६।२६।२।।

(पाप्मन्) हे पाप ! (यः) जो तू (नः) हम को (न) नहीं (जहासि) छोड़ता है (तम्) उस (त्वा) तुझ को (वयम्) हम (उ) ही (जहिमः) छोड़ देते हैं ।।२३।।

भावार्थ—(१) इस मन्त्र में पाप के निराकरण के लिये दृढ़ संकल्प अथवा दृढ़ इच्छाशक्ति रूपी उपाय का अवलम्बन किया है। "यदि पाप हमें नहीं छोड़ता तो हम ही पाप को छोड़ देते हैं" यह दृढ़ संकल्प का एक स्वरूप है। इस प्रकार का दृढ़ निश्चय कि "अब हम ने पाप को छोड़ दिया है" "पाप अब हमारे पास नहीं आवेगा" पापमयी वृत्तियों पर अवश्य विजय पा लेता है।

(२) मन्त्र में "नः" और "वयम्" पद आये हैं। इन से प्रतीत होता है कि यह मन्त्र पाप के विरुद्ध अनेक व्यक्तियों के युगपद् दृढ़ निश्चय की ओर भी निर्देश करता है। अर्थात् इस मन्त्र से स्पष्ट ज्ञात होता है कि "पापों के निराकरण के लिये कई मनुष्यों को चाहिये कि वे एक स्थान में बैठकर एक साथ मन की वृत्तियों को मजबूत करें और पुनः पाप न करने के लिये दृढ़ संकल्प करें तथा वृत्त्यारूढ़ पाप और उनके संस्कारों के समूल नाश के लिये दृढ़ेच्छा-शक्ति का प्रयोग करें"। दृढ़ संकल्प की यह विधि वैदिक कर्तव्यशास्त्र का मूल है।

पाप निराकरण के उपाय

(७) यज्ञ और (८) सत्यसंकल्प

मह्यम् यजन्तां मम यानीष्टाकूतिः सत्या मनसो मे अस्तु। एनो मा निगां कतमच्चनाहं विश्वे देवा अभिरक्षन्तु मेह ।। अथर्व० ५।३।४।।

(मम) मेरे (यानि) जो (इष्टा)१ किये हुए देवपूजन, सत्संग और दान हैं वे (मह्यम्) मुझे (यजन्ताम्) प्राप्त रहें, (मे) मेरे (मनसः) मन का (आकूतिः) संकल्प (सत्या) सत्य (अस्तु) हो। (अहम्) मैं (कतमत्) किसी (चन) भी (एनः) पाप को (मा) न (निगाम्) प्राप्त होऊं, (इह) इस विषय में (विश्वे) सब (देवाः)

१-इष्ट शब्द यज् धातु से बना है जिसके हैं अर्थ देवपूजा, सत्संग और दान।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

देव (मा) मेरी (अभिरक्षन्तु) पूर्ण रक्षा करें ॥२४॥

भावार्थ—इस मन्त्र द्वारा तीन इच्छाएं प्रकट की गई हैं।

(१) मैंने भूतकाल में जो देवपूजन, सत्संग तथा दान किया है, उसे मैं अब भी करता रहूं, वे कर्म मुझे सर्वदा प्राप्त रहें, मैं उन्हें कभी मत छोड़ूं।

(२) मेरा मानसिक संकल्प सत्यरूप हो। मैं कभी असत्य संकल्प न करूं। जो इच्छाएं करूं वे सर्वदा सत्यरूप ही हों।

(३) मैं किसी भी पापकर्म को न करूं।

ये तीन इच्छायें हैं। सदिच्छाओं के करने से प्रवृत्तियाँ भी सत् होती हैं, क्योंकि इच्छा ही प्रवृत्ति का कारण है। देवपूजन, सत्संग और दान से प्रवृत्त्यात्मक विधिरूप धर्म का निर्देश किया है। इन में प्रवृत्त रहने से मनुष्य का चित्त एक ओर लगा रहता है, अतः वह पापकर्मों की ओर नहीं झुकता। देवपूजन से अभिमान और दान से स्वार्थ का भाव भी शिथिल हो जाता है। अभिमान और स्वार्थभाव स्वयं भी पापों की ओर ले जाने वाले हैं। इनके हट जाने से मन पापों से भी हट जाता है। सत्संग द्वारा सद्गुणों का संक्रम सत्संग करने वाले के चित्त में होता है। इस प्रकार देवपूजन, दान और सत्संग ये तीनों ही पापमार्ग से हटाने वाले हैं। देवपूजन, दान और सत्संग ये चेष्टारूप अर्थात् क्रियारूप धर्म हैं।

इस चेष्टारूप धर्म के साथ-साथ इच्छारूप धर्म भी होना चाहिये। सत्य और शुभ इच्छाओं के करने और बारम्बार करने से भी मन पापों की ओर नहीं जाता। अतः चेष्टारूप सत्कर्म और सदिच्छारूप सत्कर्म (सत्यसंकल्प) जब मिल जाते हैं तो वे अवश्य ही मनुष्य को पापकर्मों से हटा देते हैं। मैं किसी पापकर्म को न करूं, इस प्रकार की तीसरी इच्छा भी मनुष्य की पापकर्मों से रक्षा करती है। इस प्रकार की इच्छा भी पापकर्म की साक्षात् विरोधिनी है।

अतः उपरोक्त तीनों इच्छाओं के प्रबल हो जाने पर मनुष्य की फिर पापकर्मों में प्रवृत्ति नहीं होती। इन तीन इच्छाओं के होते हुए एक और वस्तु भी अपेक्षणीय है जो सदाचार के लिये अत्यावश्यक है। वह है "देवसंरक्षण"। दिव्य गुणों वाले सज्जनों की संरक्षा में रहना, उन द्वारा निर्दिष्ट मार्ग पर चलना, सदाचारी होने का अतिसुगम और निश्चित उपाय है। इसीलिये वैदिक सिद्धान्त में सदाचार आदि की शिक्षा के लिये ब्रह्मचारी को आचार्य देव की संरक्षा में छोड़ने का विधान पाया जाता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पाप निराकरण के उपाय

(९) पापों में दोषदर्शन और (१०) पापों की कामना का त्याग

परोपेहि मनस्पाप किमशस्तानि शंससि। परेहि न त्वा कामये, वृक्षां बनानि संचर गृहेषु गोषु मे मनः॥ अथर्व० ६।४५।१॥

(मनस्पाप) हे मानसिक पाप ! (परः) दूर (अपेहि) हटजा, (किम्) क्यों (अशस्तानि) अप्रशस्त कामों की (शंससि) तू प्रशंसा-स्तुति करता है। (परेहि) दूर चला जा, (त्वा) तुझे (न, कामये) मैं नहीं चाहता, (वृक्षान्) वृक्षों और (बनानि) बनों में (संचर) फिरता रह, (मे) और मेरा (मनः) मन (गृहेषु) गृह-कृत्यों और (गोषु) गौ आदि पशुओं की सेवा में लगा रहे॥२५॥

भावार्थ—(१) पाप तीन प्रकार के होते हैं। मन के, वाणी के और काय के। मानसिक पाप, वाणी और काय द्वारा किये जाने वाले पापों के कारण हैं। मन में यदि कोई पाप नहीं तो वचन और काय भी पापरहित रहेंगे। अतएव इस मन्त्र में मानसिक पापों के हटाने का दर्शन है।

(२) पापरूपी जाल में फंसा हुआ मन सर्वदा अकर्तव्य कर्मों की प्रशंसा किया करता है। यथा:—"इस काम को कर लेना चाहिये" "यह काम अच्छा है" "देखो उसने भी किया था" "संसार में ऐसा ही चला आया है" "देखो संसार में ऐसे काम करने वाले कितने समृद्ध बने हुए हैं" इत्यादि कई वाक्यों में मन पाप की प्रशंसा किया करता है।

(३) इस मन्त्र में मानसिक पाप को सम्बोधित किया है। उस के हटाने के लिए उसे कल्पना द्वारा मन के सन्मुख खड़ा किया है। और उस के लिये कहा है कि तू दूर हट जा, बुरे कार्यों की प्रशंसा मत कर, चला जा, मैं तुझे नहीं चाहता। इन और इस प्रकार के अन्य वाक्यों के वाग्भाषण अथवा मनोभाषण से प्रवक्ता के चित्त में पाप के विरुद्ध दृढ़ भावना पैदा हो जाती है। इस प्रकार से पापों के विरुद्ध यदि मनुष्य लगातार अभ्यास करेगा तो वह अवश्य ही उन पर विजय पा लेगा, इस प्रकार अभ्यास करते-करते अभ्यासी के मन में पापों के लिये घृणा पैदा हो जाती है। अतः ऊपर कहे हुए प्रकार से प्रत्येक मनुष्य को अभ्यास करना चाहिये।

(४) यह मन्त्र गृहस्थ के सम्बन्ध का प्रतीत होता है। यतः मन्त्र में "गृहेषु गोषु मे मनः" ये पद आये हैं। वह यह कि "पापवृत्तियों के जीतने के लिये यह आवश्यक है कि मनुष्य सुस्त न बैठे। किसी न किसी उत्तम काम में अवश्य लगा रहे"। इसीलिये मंत्र में कहा है कि मेरा मन गृहकृत्यों और गोसेवा में लगा रहे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

क्योंकि मानसशास्त्र का यह नियम है कि (क) मन निकम्मा नहीं रह सकता। (ख) उसमें दो भाव इकट्ठे नहीं रह सकते। (ग) तथा जिस भाव पर विजय पाना हो उससे विरोधी भाव को मानसस्थली में उपस्थित रखना चाहिये"। मन्त्र में के 'परेहि' 'न त्वा कामये' आदि सद्भाव पाप भावों के विरोधी हैं। अतः पापवृत्तियों के हटाने के लिये ऐसे भावों को चित्त में स्थान देना चाहिये।

कामना की प्रबलता से अन्तःशत्रुओं का पराजय

जहि त्वं काम मम ये सपत्ना अन्धा तमांस्यव पादयैनान्। निरिन्द्रियाः अरसाः सन्तु सर्वे मा ते जीविषुः कतमच्चनाहः॥ अथर्व० ९।२।१०॥

(काम) हे इच्छा-शक्ति! (मम) मेरे (ये) जो (सपत्नाः) शत्रु हैं उनको (त्वम्) तू (जहि) मार डाल, (एनान्) इनको (अन्धा=अन्धानि) गाढ़ (तमाँसि) अन्धकार में (अवपादय) नीचे गिरा दे। (ते) वे (सर्वे) सब (निरिन्द्रियाः) इन्द्रिय-शून्य तथा (अरसाः) नीरस-निर्वीर्य (सन्तु) हो जावें, और (कतमत्) किसी एक (अहः) दिन (चन) भी (मा) न (जीविषुः) जीवें॥२६॥

भावार्थः—(१) इस मन्त्र में इच्छाशक्ति का सामर्थ्य बतलाया है। इस समय सूक्त का पढ़ना बहुत लाभकारी होगा। समग्र सूक्त ही इच्छाशक्ति की महिमा का वर्णन करता है। इस मन्त्र के आध्यात्मिक भाव पर विशेष ध्यान देना चाहिये। मनु महाराज ने ६ अन्तःशत्रुओं को गिनाया है। यथा (१) काम (२) क्रोध (३) लोभ (४) मोह (५) मद (६) अहंकार। ये ही ६ सपत्न हैं। सपत्न शब्द सपत्नी से बना प्रतीत होता है। सपत्नियों में पारस्परिक विरोध प्रसिद्ध है! चित्त-रूपी पति की भी दो स्त्रियाँ है एक शुभवृत्ति और दूसरी अशुभवृत्ति। इन में भी परस्पर विरोध है। काम क्रोधादि ६ शत्रु अशुभवृत्तिरूप हैं। अतः ये मनुष्य या मनुष्य की शुभवृत्तियों के शत्रु हैं।

(२) मनु महाराज के दर्शाये ६ शत्रुओं में से काम का अर्थ है शत्रुरूप काम अर्थात् विषय-कामना। परन्तु मन्त्रगत काम शत्रुरूप नहीं, वह परम मित्र है। इस काम का अर्थ है इच्छाशक्ति। यह इच्छाशक्ति उपरोक्त ६ शत्रुओं का नाश कर सकती है। इन ६ शत्रुओं के हनन के लिये दृढ़ इच्छाशक्ति के सिवाय अन्य कोई उपाय नहीं। यम नियमादि साधनों का पालन भी दृढ़-इच्छा-शक्ति के बिना नहीं हो सकता। दृढ़-इच्छाशक्ति ही इन अन्तःशत्रुओं के नाश का अमोघास्त्र है।

(३) मंत्र में "निरिन्द्रियाः" का एक विशेष भाव है। कामादि अन्तःशत्रु इन्द्रियों द्वारा ही भोग भागते या भुगवाते हैं। मन में रहते हुए भी जब तक ये

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इन्द्रियों पर अधिकार नहीं जमाते तब तक इन के विषय भोगे नहीं जा सकते। कामी के मन में काम-चेष्टा का भाव तो जागृत हुआ, परन्तु इस कुचेष्टा की इच्छा से प्रेरित हुआ मनुष्य जब तक काम के विषय को इन्द्रियारूढ़ नहीं करता, तब तक वह कामरूपी शत्रु द्वारा पराजित हुआ नहीं समझा जाता। परन्तु काम के विषय के इन्द्रियारूढ़ होते ही मनुष्य पूर्णरूप में काम से पराजित हो जाता है। इसी प्रकार क्रोधादि के विषय में भी जानना चाहिये। ये शत्रु भी काम की न्याई अपनी-अपनी इन्द्रियों को द्वार बनाकर ही अपने-अपने विषयों का भोग कराते हैं। मनुष्यों को परास्त करने के लिये, इन्द्रियाँ मानो इन ६ शत्रुओं के द्वार अर्थात् रास्ते हैं। इसीलिये मंत्र में "निरिन्द्रिया:" पद से इन शत्रुओं का वर्णन किया है। ये शत्रु निरिन्द्रिय हों। इन शत्रुओं का हमारी इन्द्रियों के साथ संबन्ध न हो। मार करने में ये इन्द्रिय-द्वारों के प्रभु न हों। अर्थात् उन की सत्ता केवल मन तक ही सीमित रहे, वे इस सीमा को लांघ कर इन्द्रिय सीमा पर प्रहार न करें - उनका निवास केवल मनोभूमि में ही हो, वे इन्द्रियभूमि में अपना पग न रख सकें। इस प्रकार "निरिन्द्रिया:" पद से इन शत्रुओं के प्रावल्य रूप का निषेध किया है। भाव जा मन में उठ कर मन में ही लीन हो जाते हैं, उनकी अपेक्षा वे भाव अधिक बली होते हैं जो कि मन में पैदा होकर बाह्य इन्द्रियों की क्रियाओं या व्यापारों में भी परिणत हो जाते हैं।

(४) परन्तु कामादि की सत्ता इस निर्बल अर्थात् निरिन्द्रय अवस्था में भी न रहनी चाहिये। निर्बल शत्रु समय पाकर प्रबल हो सकता है। अतः मन में भी इन का निवास सदाचार-शास्त्र की दृष्टि से अभीष्ट नहीं। इसी सिद्धान्त के दर्शाने के लिये मन्त्र में "अरसा:" यह पद दिया है। शरीर में जब तक रस का संचार है तब तक जीवन है। रस प्राण-शक्ति का सहचारी है। रस के क्षीण होते ही प्राण-शक्ति भी जवाब देने लगती है। अत: रस, जीवन का प्रतिनिधि है। अतः "ये शत्रु अरस हों" इसका अभिप्राय यही है कि इन शत्रुओं का नाश हों। ये सूख जायें। इनमें रस बिलकुल न रहे। इन का प्राणान्त हो जावे। कुसंस्कार ही इन शत्रुओं के रस हैं। इसी रस से इन शत्रुओं के देह की स्थिति होती है। यदि मनोभूमि से इन कु-संस्कारों को निकाल दिया जावे तो ये शत्रु भी मनोभूमि को छोड़ जायेंगे। अतः "अरसा:" पद से कुविचार तथा कुसंस्कार रूप से भी स्थित इन शत्रुओं के विनाश के लिये प्रेरित किया गया है। दृढ़-इच्छा-शक्ति के कुठार से, अन्तःशत्रु रूपी वृक्ष की, कुसंस्कार रूपी जड़ भी काटी जा सकती है। इसलिये इस दृढ़-इच्छा-शक्ति की प्राप्ति के लिये मनुष्य को अवश्य ही यत्नवान् होना चाहिये।

(५) मनुष्य को यत्न करना चाहिए कि ये शत्रु एक दिन भी जीवित न

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रह सकें। अर्थात् मनुष्य एक दिन भी कामादि के वशीभूत न हो। (कतमच्चनाहः) यह उत्तम जीवन का आदर्श है।

कामना दो प्रकार की है

(१) भद्र और (२) अभद्र

यास्ते शिवास्तन्वः काम भद्राः याभिः सत्यं भवति यद्वृणीषे। ताभिष्ट्वमस्मां अभि संविशस्वान्यत्र पापीरप वेशया धियः॥ अथर्व० ६। २। २५।

(काम)[1] हे कामना ! (याः) जो (ते) तेरी (शिवाः) शुभ तथा (भद्राः) सुख और कल्याण के देने वाली (तन्वः) तनु हैं, (याभिः) जिन से (यद्) जो (वृणीषे) तू चाहती है वह (सत्यम्) सत्य (भवति) हो जाता है, (ताभिः) उन तनुओं के साथ (त्वम्) तू (अस्मान्) हम में (अभिसंविशस्व) अच्छे प्रकार प्रवेश कर। और (पापीः) पापयुक्त (धियः) विचारों को (अप) हम में से निकाल कर (अन्यत्र) अन्यत्र कहीं (वेशया) प्रविष्ट कर॥२७॥

भावार्थः—(१) इस मंत्र में इच्छा का ही वर्णन है। इच्छा की तनु अर्थात् देह दो प्रकार की है। यहां तनु का अर्थ है, स्वरूप अथवा प्रकार। अतः अभिप्राय यह हुआ कि इच्छा के दो स्वरूप हैं या इच्छा दो प्रकार की है। एक शुभ और दूसरी अशुभ। एक शिव और दूसरी अशिव। एक भद्र और दूसरी अभद्र। इच्छा के इन दो प्रकारों का वर्णन व्यास ऋषि ने योगभाष्य में निम्नलिखित रूप से किया है। "चित्तनदी नामोभयतो वाहिनी, वहति कल्याणाय च वहति पापाय च" योगदर्शन १। १२॥ इसका अभिप्राय यह है कि चित्त एक नदी है जो दो ओर बहती है। कल्याण की ओर और पाप की ओर। मन्त्र में भी काम अर्थात् इच्छा के दो रूप दर्शाये हैं। एक "शिवास्तन्वः" इन शब्दों से और दूसरा "पापी धियः" इन शब्दों से। शिव का अर्थ होता है कल्याण और पाप पद मंत्र तथा योगभाष्य दोनों में समान है।

(२) मन्त्र में यह भी कहा है कि शुभ इच्छाओं में बहुत बल होता है। शुभ इच्छाओं वाला मनुष्य जो चाहता है वह पूरा हो जाता है। इसीलिये मन्त्र में "सत्यं भवति यद्वृणीषे' कहा है। पापी जन की इच्छाओं में वह बल नहीं होता। योग की आश्चर्यकारी सिद्धियां भी इसी शुभ इच्छा के परिणाम हैं। अतः शुभ इच्छाओं की प्राप्ति और अशुभ इच्छाओं का त्याग करना चाहिये।

---

१ कमु कान्तौ, कान्तिरिच्छा॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

संसार-ग्राह से बचने का उपाय

संसार में लिप्त न होना

इदमह रुशन्तंग्राभं तनूदूषिमपोहामि । यो भद्रो रोचनस्तमुदचामि ॥
अथर्व० १४ । १ । ३८ ॥

(अहम्) मैं (इदम्) इस (रुशन्तम्) चमकीले भड़कीले (तनूदूषिम्) शरीर को दूषित करने वाले (ग्राभम्) संसार-ग्राह को (अपोहामि) त्यागता हूं। (यः) जो (भद्रः) सुखकर और कल्याणमय तथा (रोचनः) रुचिररूप है (तम्) उसको (उत्) उत्तम होकर (अचामि) प्राप्त होता हूं ॥२८॥

भावार्थः—ग्राभ पद में ग्रह धातु है। वस्तुतः यह ग्राह शब्द है। ह को भ हो गया है। ग्राह का अर्थ नाका (मगरमच्छ) होता हैं इस मन्त्र में संसार का ग्राह-रूप से वर्णन है।

(१) यह संसारग्राह बड़ा चमकीला-भड़कीला है। वह अपनी चमक से जनता को अपनी ओर खींच लेता है।

(२) जो मनुष्य इस संसारग्राह की ओर खिच जाते हैं उन की देह दूषित हो जाती है। भोग का यह परिणाम स्वाभाविक ही है।

(३) और अन्त में वे भोगी इस संसार-ग्राह के मुख के ग्रास बनकर नष्ट हो जाते हैं। रुश् का अर्थ हिंसा भी है। जिससे यह भाव सूचित होता है कि चमकीला संसार-ग्राह हिंसक है। यह हुआ प्रेयमार्ग का वर्णन।

श्रेयमार्ग का वर्णन मन्त्र के अगले आधे भाग में हैं। प्रकृति में न फंस कर परमात्मा की ओर झुकना यह श्रेयमार्ग है। परमात्मा भद्र है, रुचिर है उस को प्राप्त होने के लिये प्रथम संसार-ग्राह का त्याग करना चाहिये। इस प्रकार मनुष्य प्रथम अपने आप को उत्तम बना कर, पुनः उस परमात्मा की प्राप्ति कर सकता है।

परन्तु प्रश्न पैदा होता है कि संसार का त्याग क्या वैदिक सिद्धान्तानुकूल है ? । उत्तर है, नहीं। अपितु संसार साधन है परमात्मा की प्राप्ति का। संसार परमात्मा का निवास-गृह है। संसार और परमात्मा ये दो विरोधी मार्ग नहीं।

तो पुनः इस मन्त्र में संसार-त्याग के लिये क्यों प्रेरित किया ? उत्तर यह है कि मंत्र में संसार-त्याग के लिये कोई प्रेरणा नहीं। संसार को ग्राह नहीं बनने देना चाहिये, केवल इतना ही मन्त्र में कहा है। ग्राहरूपी ससार का त्याग करना चाहिये, न कि अग्राह-रूपी संसार का भी। संसार में ग्राहपन न आने दो, संसार

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

त्याग का यही अभिप्राय है। संसार के भोगने से संसार ग्राह नहीं बनता, अपितु संसार के भोगों में लिप्त होने से संसार ग्राह बन जाता है। यह न होने देना चाहिये। यही मन्त्र का अभिप्राय है।

ईर्ष्या मननशक्ति को मार देती है

यथा भूमिर्मृतमना मृतान्मृतमनस्तरा। यथोत मम्रुषो मन एवेर्ष्योर्मृतंमनः॥ अथर्व० ६। १८। २॥

(यथा) जैसे (भूमिः) पृथिवी (मृतमनाः) मननशक्ति से शून्य है, (मृतात्) मुर्दे से भी अधिक (मृतमनस्तरा) मननशक्ति से शून्य है। (उत) तथा (यथा) जैसे (मम्रुषः) मरे हुए का (मनः) मन होता है (एवा) इसी प्रकार (ईर्ष्योः) ईर्षा करने वाले का (मनः) मन (मृतम्) मरा हुआ होता है॥२९॥

भावार्थः—(१) ईर्ष्या कहते हैं "पराभ्युदयासहनम्" दूसरे के अभ्युदय अर्थात् उन्नति को न सहना ईर्ष्या कहाती है।

(२) ईर्ष्या की चित्तवृत्ति से बहुत हानियां होती हैं। यथा (क) वेद में ईर्ष्या को "हृदय्य अग्नि" अथर्व० ६।१८।१॥ कहा है। हृदय्य अग्नि का अर्थ है हृदय की आग। ईर्ष्या वास्तव में अग्निरूप है। यह प्रेमभाव को भस्मीभूत कर देती है। (ख) मनुष्य ईर्ष्याबद्ध होकर कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य के विवेक से शून्य हो जाता है। (ग) ईर्ष्यावृत्ति के कारण मनुष्य में न्यायवृत्ति नहीं रहती। (घ) और उसमें स्वार्थ की मात्रा दिनोंदिन बढ़ती जाती है। (ङ) वह दूसरे को नुकसान पहुंचाने में धर्माधर्म के मार्ग का ख्याल नहीं करता। (च) लोकलज्जा की भी उसे परवाह नहीं रहती।

(३) ईर्ष्या का ऐतिहासिक दृष्टान्त यदि चाहिये तो हम दुर्योधन को पेश कर सकते हैं। उसके सुवीर होते हुए भी, जो वह दुर्गुणों की खान बना हुआ था, उसमें मूल उसका ईर्ष्याभाव ही था अतः ईर्ष्या से सर्वदा दूर रहना चाहिये।

(४) ईर्ष्या से मन मारा जाता है। ईर्ष्यालु में मननशक्ति नहीं रहती। मननशक्ति और विचारशक्ति का अभिप्राय एक ही है। इस अवस्था को समझाने के लिये मन्त्र में दो दृष्टान्त दिये हैं, एक तो भूमि का और दूसरा मम्रुष का। भूमि अर्थात् मिट्टी में मननशक्ति नहीं होती। मिट्टी में कभी भी मननशक्ति नहीं हुई वह मृतमना है। उसमें मननशक्ति हमेशा से मरी हुई है। अतएव वह मृतों से भी मृतमनस्तर है। मृतों में मरने से पूर्व तो मननशक्ति रहती ही है। मरने पर उनमें मननशक्ति नहीं रहती। मट्टी मरे हुओं की अपेक्षा भी अधिक मरे हुए मन वाली है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यतः इसके साथ मननशक्ति का कभी भी सम्बन्ध नहीं हुआ। मिट्टी में मननशक्ति का लेशमात्र भी नहीं। अतः वह मृतान्मृतमनस्तर है। वह मनुष्य जो प्रथमतः ही ईर्ष्यालु है, जिसमें ईर्ष्या के कारण मननशक्ति का अंकुर उगा ही नहीं, वह मिट्टी के समान है। मिट्टी जिस प्रकार विचारशक्ति से हमेशा से शून्य है वैसे ही वह मनुष्य भी विचारशक्ति से हमेशा से शून्य रहता है जो उत्पत्ति काल से ही ईर्ष्यालु है। दूसरा दृष्टान्त है मम्रुष का मम्रुष का अर्थ है मर गया हुआ; जो कि पहिले जीवित था, पर अब जीवित नहीं। अर्थात् जिसमें जीवितावस्था में मन काम करता थ', परन्तु अब मृतावस्था में वह काम नहीं करता। इसी प्रकार की अवस्था उस मनुष्य की हो जाती है जो कि पहिले तो ईर्ष्यालु न था, किन्तु अब किसी कारण से ईर्ष्या वाला हो गया है। मनुष्य जब तक इर्ष्यालु नहीं तब तक वह जीवित मनुष्य के समान है जिसमें कि मन कार्य कर रहा है, परन्तु मनुष्य जब ईर्ष्यालु हो जाता है तब वह उस मनुष्य के समान हो जाता है, जो कि मरा हुआ है। जिसमें अब मन काम नहीं करता। जो कि अब लोथमात्र शेष रह गया है। वास्तव में ईर्ष्यालु मनुष्य मिट्टी और लोथ के समान है। ईर्ष्यालु मनुष्य का मन बिलकुल मारा जाता है। ईर्ष्या से जकड़े रहने के कारण उसके मन का पूर्ण विकास नहीं हो सकता। अतः ईर्ष्यावृत्ति से अवश्य छुटकारा पाना चाहिये।

वैदिक मेधा से दिव्य गुणों की रक्षा

मेधामहं प्रथमां ब्रह्मण्वतीं ब्रह्मजूतामृषिष्टुताम्। प्रपीतां ब्रह्मचारिभिः देवानामवसे हुवे ॥ अथर्व० ६। १०८। २ ॥

(अहम्) मैं (प्रथमाम्) अनादि (ब्रह्मण्वतीम्) वेदप्रतिपादित (ब्रह्मजूताम्)१ ब्रह्मज्ञानियों द्वारा सेवित (ऋषिष्टुताम्) ऋषियों द्वारा प्रशंसित (ब्रह्मचारिभिः) ब्रह्मचारियों द्वारा (प्रपीताम्)२ अच्छे प्रकार पान की गई (मेधाम्) मेधा का (देवानाम्) दिव्यगुणों की (अवसे) रक्षा के लिये (हुवे) आह्वान करता हूं ॥३०॥

भावार्थः—इस मन्त्र में उस मेधा का वर्णन किया है जिसका वेद में प्रतिपादन है। वह अनादि काल से वर्तमान है चूंकि वेद अनादि हैं। ब्रह्मज्ञानी लोग ऐसी मेधा का ही सेवन करते हैं। ऋषिजन ऐसी मेधा की ही स्तुति करते हैं। ब्रह्मचारी इसी वैदिक मेधा की प्राप्ति के लिये तप तथा ब्रह्मचर्यव्रत में निष्ठावान् होते हैं। इसी मेधा की प्राप्ति से हम में दिव्यगुण आ सकते हैं। मनुष्यगत दिव्यगुणों की रक्षा इस मेधा की प्राप्ति के बिना असम्भव है। इस वैदिक मेधा की प्राप्ति के लिये वेदों का स्वाध्याय नित्य करना चाहिये।

---

(१) जूति का अर्थ है—गति तथा प्रीति, निरु० १०।२८॥ (२) पा—पीना।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मन, वाणी और कर्म में मधुरता

जिह्वाया अग्रे मधु मे जिह्वामूले मधूलकम्। मगेदह क्रतावसो मम चित्तमुपायसि ॥ अथर्व० १ । ३४ । २ ॥

(मम) मेरी (जिह्वायाः) जिह्वा के (अग्रे) अगले भाग पर (मधु) मधु हो, (जिह्वामूले) और जिह्वा की जड़ में (मधूलकम्) माधुर्य्य हो। हे माधुर्य्य ! तू (मम) मेरे (क्रतौ) कर्म में (अह) अवश्य (इत्) ही (असः) हो, (मम) मेरे (चित्तम्) चित्त में (उपायसि) तू प्राप्त होता है ॥ ३१ ॥

भावार्थः—(१) इस मन्त्र में सह दर्शाया है कि माधुर्य की प्राप्ति के लिये दृढ़-इच्छा-शक्ति या दृढ़-संकल्प का प्रयोग करना चाहिये। यदि मनुष्य दृढ़-संकल्प करले कि मैंने कभी भी कटु-वचन नहीं बोलने, सर्वदा मधुर वचन ही बोलने हैं, तो वह मनुष्य कटुवचनों पर या अपनी वाणी पर अवश्य विजय पा लेगा।

(२) मन्त्र में जिह्वा. क्रतु[1] और चित्त इन तीन का वर्णन है। परन्तु इनका आर्थिक क्रम निम्न प्रकार से होना चाहिये, चित्त-जिह्वा-क्रतु। जैसे कि कहा है "यन्मनसा मनुते तद्वाचा वदति यद्वाचा वदति तत्कर्मणा करोति"। अर्थात् मनुष्य मन से जिसका मनन करता है उसे वह वाणी द्वारा बोलता है, और जो वाणी द्वारा बोलता है उसे कर्म से करता है। मन्त्र में चित्त शब्द से मन का, जिह्वा से वाणी का और क्रतु से कर्म का ग्रहण करना चाहिये। अतः इस मन्त्र में मन, वाणी और कर्म इन तीनों की मधुरता का वर्णन है। इस मधुरता के लिये किसी बाह्य औषध की आवश्यकता नहीं। और न कोई ऐसी बाह्य औषध है भी कि जिसके खान पान से मनुष्य दूसरों के लिये भला सोचने, बोलने और करने लग जाय। इसके लिये तो आन्तरिक औषध ही चाहिये। उसी के निरन्तर श्रद्धापूर्वक सेवन से मधुरता हमें मिल सकती है। यह आन्तरिक औषध, दृढ़-इच्छा-शक्ति या दृढ़ संकल्प मात्र ही है।

माधुर्यमय जीवन

मधोरस्मि मधुतरो मदुधान्मधुमत्तरः। मामित्किल त्वं वनाः शाखां मधुमतीमिव ॥ अथर्व० १ । ३४ । ४ ॥

(मधोः) मधु से (मधुतरः) अधिक मधुर (अस्मि) मैं हूं, (मदुधात्) मधुमहे पदार्थ से (मधुमत्तरः) मैं अधिक मधुर हूं। हे मधु ! (त्वं) तू (माम्) मुझ को (इत्) अवश्य (वनाः) प्राप्त हो, (इव) जैसे (मधुमतीम्) मधु वाली (शाखाम्) शाखा को मधु प्राप्त होता है ॥ ३२ ॥

---

१ क्रतु—कर्म, निघं० २ । १ ॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भावार्थः—मधु का अर्थ है शहद, जिसे माखों भी कहते हैं। मनुष्य अपने चित्त में ऐसी भावना करें कि मैं वास्तव में शहद से भी मीठा हूं। और शहद-भरे पदार्थ से भी अधिक मीठा हूं। जो पदार्थ अंग-प्रत्यंग में शहद से व्याप्त हो रहा है मैं उससे भी अधिक मधुर हूं—ऐसी भावना करने पर मनुष्य अवश्य ही अपने विचारों, वचनों और कर्मों में मधुर बन जायेगा। भावना में बड़ी शक्ति होती है। प्रबल भावना के फलों का यदि अनुभव करना हो तो योगदर्शन का सिद्धिपाद देखो। मनुष्य को अपने हरएक अवयव को ऐसा मधुर बनाना चाहिये जैसे किसी मधुभरी शाखा का प्रत्येक अवयव। बिना मधुरता के यह देह नीरस स्थाणुरूप है।

चेष्टा, स्वाध्याय और वाणी में माधुर्य

मधुमन्मे विक्रमणं मधुमन्मे परायणम्। वाचा वदामि मधुमद् भूयासं मधुसंदृशः॥ अथर्व० १। ३४। ३॥

(मे) मेरा (विक्रमणम्) पादविक्षेप अर्थात् चलना-फिरना (मधुमत्) मधुर हो, (मे) मेरा (परायणम्) स्वाध्याय (मधुमत्) मधुर हो। (वाचा) वाणी से (मधुमत्) मधुर (वदामि) मैं बोलता हूं, (मधुसंदृशः) मधुदृष्टि या मधु के सदृश (भूयासम्) मैं हो जाऊं॥ ३३॥

भावार्थः—(१) इस मंत्र में भी भावना का वर्णन है। मधुर बनने की भावना को प्रबल बनाना चाहिये। चलने-फिरने, उठने-बैठने में मधुरता होनी चाहिये।

(२) स्वाध्याय में मधुरता का अभिप्राय है कर्कश आवाज से न पढ़ना। पढ़ने में अतिशीघ्रता, अस्पष्टोच्चारण, शब्दों का मध्य-मध्य में अनुच्चारण आदि दोष भी स्वाध्याय में माधुर्य गुण के विरोधी हैं।

(३) वाणी से भी मीठा बोलना चाहिये।

(४) क्रूरदृष्टि मनुष्य मधुरदृष्टि नहीं हो सकते। मधुरदृष्टि वे मनुष्य होते हैं जिनकी आँखों से प्रेमधारा निकले। मनुष्य के प्रत्येक अंग में मधुरता होनी चाहिये। उसे अपने आप को मधुरूप बनाना चाहिये। मधु जिस प्रकार मीठा होता है उसी प्रकार व्यवहार में जिसके सारे अंग दूसरों के लिये मीठे हैं वह मधुरूप कहलाता है।

जीवन की सात मर्यादाएं

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुस्तासामिदेकामभ्यंहुरोऽगात्। आयोर्ह स्कम्भ उपमस्य नीडे पथां विसर्गे धरुणेषु तस्थौ॥ अथर्व० ५। १। ६॥

(कवयः) ऋषियों ने (सप्त) सात (मर्यादाः) मर्यादाएं अर्थात् सीमाएं

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(ततक्षुः) बनाई हैं, (तासाम्) उनमें से (एकाम्) एक को (इद्) भी (अभ्यगात्) जो प्राप्त होता है वह (अंहुरः) पापी होता है। (स्कम्भः) स्कम्भरूप परमात्मा (उपमस्य) उपमीभूत (आयोः) मनुष्य के (नीडे) हृदयरूपी घोंसले में, (पथां) मार्गों की (विसर्गे) समाप्ति पर और (धरुणेषु) धारक वस्तुओं में (तस्थौ) स्थित है। ३४॥

भावार्थः—(१) मनुष्य के जीवन के लिये वेद ने ७ मर्यादाएं निश्चित की हैं। जिनका वर्णन यास्कमुनि ने निरुक्त में किया है। वे निम्नलिखित हैं—(१) स्तेय=चोरी, (२) तल्पारोहण=व्यभिचार, (३) ब्रह्महत्या=नास्तिकता, (४) भ्रूणहत्या=गर्भघात, (५) सुरापान=शराब पीना, (६) दुष्टस्य कर्मणः पुनः पुनः सेवा=दुष्ट कर्म का बार-बार सेवन, (७) पातकेऽनृतोद्यम्—पाप करने के बाद उसे छिपाने के लिये झूठ बोलना। मर्यादा कहते हैं सीमा को। कर्त्तव्य-शास्त्र की ये सात सीमाएं हैं। कर्त्तव्य-शास्त्र इन सीमाओं के अन्दर रहता है। इन हद्दों का अतिक्रम न करना सत्कर्त्तव्य या धर्म है।

(२) इन मर्यादाओं में से एक मर्यादा का भी जो उल्लंघन करता है वह पापी होता है।

(३) जो इन सातों मर्यादाओं में रहता है वह परमात्मा का उपम अर्थात् अधिक सदृश बन जाता है। परमात्मा में और उसमें परस्पर उपमानोपमेय भाव हो जाता है।

(४) परमात्मा जो स्कम्भरूप अर्थात् भुवनप्रासाद का स्तम्भरूप है, वह उपमीभूत मनुष्य के हृदय-नीड़ में रहता है। इसी हृदय-मन्दिर में मर्यादाबद्ध मनुष्य परमात्मा का भजन और उसका प्रत्यक्ष कर सकता है।

मनुष्य के हृदय में ही परमात्मा का भान क्यों होता है, इस प्रश्न के उत्तर के लिये ही मंत्र में "उपमस्य" यह पद दिया है। जीवात्मा की उपमा परमात्मा से और परमात्मा की जीवात्मा से है। ये दोनों ही अप्राकृतिक हैं, प्रकृति से विलक्षण हैं। इसीलिये वेद तथा उपनिषदों में प्रकृति-वृक्ष पर बैठे दो पक्षियों से जीवात्मा और परमात्मा को रूपित किया गया है। रूपक का अभिप्राय यही है कि जीवात्मा और परमात्मा परस्पर सदृश हैं और प्रकृति से विलक्षण हैं। तभी तो जीवात्मा और परमात्मा में परस्पर सादृश्य, अर्थात् उपमानोपमेय भाव है। जब साधारण जीवात्मा जो कि मनुष्य की देह में है, परमात्मा के साथ सादृश्य रखता है, तब मनुष्य का वह आत्मा तो, जिसने कि सात मर्यादाओं में रह कर अपने आप को पवित्र कर लिया है, अवश्य ही परमात्मा का उपमीभूत होना चाहिये।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(५) परमात्मा पथों की समाप्ति पर है। सभी धर्मपन्थों का केन्द्र-स्थान वेद है। इसी केन्द्र से धर्म के भिन्न-भिन्न पथ निकले हैं। इन सब पथों का विसर्ग अर्थात् समाप्ति वेद पर होती है। इसी समाप्ति पर परमात्मा बैठा हुआ है। अर्थात् परमात्मा के सत्यस्वरूप का ज्ञान सब धर्मपथों के केन्द्रीभूत वेदों द्वारा ही सम्भव है। ''पथां विसर्गे'' का एक और अभिप्राय भी सम्भव है। वेदों में जगत् और ब्रह्म में व्याप्यव्यापकता दिखलाई है। जगत् व्याप्य और ब्रह्म व्यापक है। ब्रह्म में जगत् व्यापक नहीं। अपितु सम्पूर्ण जगत् ब्रह्म के एकदेश में विद्यमान रहता है। इसी आशय को अधिक स्पष्ट करने के लिये वेदों में ब्रह्म और जगत् की दैशिक सत्ता का दृष्टान्त नीड़ और वृक्ष दिया जाता है। उसमें ब्रह्म को वृक्ष और जगत् को नीड़ बताया है। नीड कहते हैं घोंसले को। घोंसला वृक्ष के एक देश पर आश्रित रहता है और वृक्ष घोंसले से बहुत बड़ा होता है। इसी प्रकार परमात्मा रूपी वृक्ष इस जगत् रूपी नीड का आश्रय है और जगत् से बहुत बड़ा है। ग्रह, उपग्रह, नक्षत्र, तारादिकों के समुदाय को ही जगत् कहते हैं। ये ग्रह नक्षत्रादि अपने-अपने नियत पथों पर घूम रहे हैं। इनमें से कोई भी विपथगामी नहीं होता। अतः जहाँ जगत् की सत्ता है वहां-वहाँ हम पथों की सत्ता की कल्पना भी कर सकते हैं। परन्तु जहाँ जगत् की अन्तिम सीमां है, जिस से परे जगत् की सत्ता नहीं, वहां पृथिव्यादि के घूमने का कोई पथ भी नहीं, यह स्पष्ट है। वह स्थान 'पथां विसर्ग' है। वहां पथों का विसर्ग अर्थात् समाप्ति हो जाती है। उस से आगे कोई पथ नहीं। परन्तु परमात्मा वहां भी विद्यमान है। अतः परमात्मा की स्थिति 'पथां विसर्ग' पर भी है।

(६) वह स्कम्भ रूप परमात्मा धारक पदार्थों में भी स्थित है। स्कम्भ का अर्थ है—धारण करने वाला, थामने वाला। परमात्मा के स्कम्भरूप का वर्णन अथर्व० १०, ७ में बहुत उत्तम शब्दों में किया है। सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, तारा, वायु, पृथिवी आदि पदार्थ संसार में धारक रूप से प्रसिद्ध हैं। ये सब प्राणी जगत् के तथा परस्पर के धारण करने वाले हैं। परमात्मा इन धारकों का भी धारक है। वह इन धारकों में भी स्कम्भरूप (धारक रूप) से स्थित है। अर्थात् संसार का मूलाधार या सूल-धारक परमात्मा ही है। अतः भक्ति, उपासना और मनन इसी महान् शक्ति का करना चाहिये। चूंकि यह सर्वोच्च है, सर्वश्रेष्ठ है, सर्वाधार है।

सत्य और प्रियभाषण

यद्वदामि मधुमत्तद्वदामि यदीक्षे तद्वनन्ति मा। त्विषीमानस्मि जूतिमानवान्यान् हन्मि दोधतः॥ अथर्व०। १२। १। ५८॥

(यद्) जो (वदामि) मैं बोलता हूं (मधुमत्) मीठा बोलता हूं, (तद्) यह

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(वदामि) बोलता हूं (यदीक्षे) जो देखता हूं, (तद्) यह (मा) मुझ को (वनन्ति)१ उपदेश देते हैं। (त्विषीमान्) तेजस्वी (अस्मिन्) हूं, (जूतिमा)२ क्रियाशील हूं, (दोधतः)३ क्रोधी (अन्यान्) शत्रुओं को (अवहन्मि) मार गिराता हूं ॥ ३५ ॥

भावार्थः—(१) यदीक्षे—मनुष्य कैसा बोले यह प्रश्न है? । मन्त्र में उत्तर दिया है कि जैसा देखे वैसा बोले, उलटा न बोले। अर्थात् सदैव सत्य बोले। (२) मधुमत्:—प्रश्न हो सकता है कि क्या सत्य को कड़वे रूप में भी बोल दे, उत्तर है, नहीं। अपितु मीठा बोले। कड़वा न तोले। इस प्रकार बोले कि सत्य भी हो और मीठा भी हो।

(३) त्विषीमान्:—मनुष्य तेजस्वी बने। सत्य के पालन से मनुष्य में तेज आ जाता है। इस तेज की प्राप्ति अवश्य करनी चाहिये।

(४) जूतिमान्:—मनुष्य को क्रियाशील होना चाहिये। सुस्त होना और समय खराब करना मनुष्य के लिये उचित नहीं।

(५) दोधतः—क्रोधी शत्रुओं का नाश भी करना चाहिये। जिनके स्वभाव में ही क्रोध है ऐसे शत्रुओं के साथ उदासीनता या क्षमावृत्ति नहीं रखनी चाहिये।

सत्य वचनों के पुजारी बनो

को अद्य युंक्ते धुरि गाः ऋतस्य शिमीवतो भामिनो दुर्हृणायून्।
आसन्निषून् हृत्स्वसो मयोभून् य एषां भृत्यामृणधत् स जीवात् ॥ अथर्व० १८ । १ । ६ ॥

(कः) कौन (अद्य) आज कल (शिमीवतः)४ कर्म वाले (भामिनः)५ तथा तेजः स्वरूप (ऋतस्य) सत्य की (धुरि) धुरा में (दुर्हृणायून्)६ रोषयुक्त तथा (आसन्) मुख में (इषुन्) वाणरूप (हृत्स्वसः) परन्तु हृदयों में लग जाने वाली (मयोभून्) (और परिणाम में) सुखोत्पादक (गौः)७ वाणियों को (युंक्ते) जोड़ता है, (यः) जो मनुष्य (एषाम्) इन वाणियों की (भृत्याम्) नौकरी (सेवा या धारण) (ऋणधत्)८ करता है((सः) वह (जीवात्) जीता है ॥ ३६ ॥

१—वन शब्दे। पैप्पलाद शाखा में वनन्ति के स्थान में "वदन्तु" पाट है। अन्य पुस्तकों में "वदन्ति" पाठ भी मिलता है ॥ २—जू गतौ ॥ ३—दोधतिः क्रुध्यातकमा, निघं० २ । १२ ॥

४—शिमी—कर्म, निघं० २ । १ ॥ ५—भा दीप्तौ ॥

६—निघं० १ । १७ ॥

७—गो—वाणी, निघं० १ । ११ ॥

८—ऋणद्धिः परिचरणकर्मा निघं० ३ । ५ ॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भावार्थः—(१) मन्त्र में ऋत का वर्णन गाड़ी रूप से किया गया है। धुः का अर्थ है—धुरा अर्थात् जुआ। गाः के दो अर्थ हैं, बैल और वाणियाँ। गाड़ी को चलाने के लिये गाड़ी की धुरा में बैल बाँधे जाते हैं। ऋतरूपी गाड़ी के चलाने के लिये भी ऋत – गाड़ी के आगे वाणी रूपी बैलों को लगाना पड़ता है। ऋत अर्थात् सत्य के प्रचार के लिये ऋत की धुरा में वाणियां ही जुड़ती है। वचन द्वारा ही सत्य का प्रचार हो सकता है। सत्य की गाड़ी को, एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुंचाने के लिये, वचन रूपी बैलों की आवश्यकता होती है। चूंकि सच्चाई का प्रकाश वचनों द्वारा ही होता है।

(२) मन्त्र में ऋत के दो विशेषण दिये हैं—

(क) शिमीवतः, (ख) भामिनः। ये दोनों पद षष्ठी विभक्ति के एकवचन के रूप हैं, अतः 'ऋतस्य' के विशेषण हैं।

क—शिमीवान् का अर्थ है 'कर्मवाला'। शिमीवान् पद से सत्य का लक्षण किया गया है। सत्य वह है जो शिमीवान् है। रज्जु में हमें सर्प का ज्ञान हुआ। यह ज्ञान सत्य नहीं। क्योंकि यह ज्ञान कर्मवाला नहीं। यह ज्ञान कर्मवाला तब होता जब कि इस ज्ञान द्वारा दिखाये गये सर्प में सर्प के काम होते। अर्थात् यदि रज्जु में सर्प के गुणधर्म रहते। यतः सर्प के गुणधर्म रज्जु में नहीं अतः रज्जु में सर्प का ज्ञान भी सत्य नहीं। प्रत्येक ज्ञान का पर्यवसान कर्म में होता है। ज्ञानसे ज्ञान (अनुपादेय जानकर छोड़ देना), उपादान (उपादेय जानकर ग्रहण कर लेना) या उपेक्षा (न लाभकर है, न हानिकर, यह जानकर उस वस्तु की उपेक्षा करना) हुआ करते हैं। रज्जु में जब सर्प का ज्ञान हुआ तब सर्प दृष्टि से यद्यपि वह रज्जु तात्कालिक ज्ञान का विषय बन जाती है, परन्तु प्रकाशादि की उपस्थिति हो तेही वह रज्जु सर्प-ज्ञान का विषय भी नहीं रहती। परन्तु सर्प में सर्पज्ञान होने से प्रकाशादि के होने पर भी उसमें ज्ञानबुद्धि बनी ही रहती है। उस बुद्धि का नाश प्रकाश की उपस्थिति में भी नहीं होता। अतः सर्प में सर्पबुद्धि तो सत्य है और रज्जु में सर्प-बुद्धि असत्य है। चूंकि पूर्वबुद्धि कर्म बाली और दूसरी बुद्धि कर्म से शून्य है। अर्थात् पूर्वबुद्धि ने जो सर्प दिखाया है वह सर्प सर्प के कार्यों को कर सकता है और दूसरी बुद्धि ने जो सर्प दिखाया है वह सर्प सर्प के कार्यों को नहीं कर सकता। सत्य की परख कार्य से ही हुआ करती है। अतः सत्य वह है जो शिमीवान् है। इसी लक्षण को बौद्ध लोग "अर्थक्रियाकरित्वं सत्यत्वम्' इन शब्दों द्वारा निर्दिष्ट करते हैं।

(ख) सत्य का दूसरा विशेषण है—'भामिनः'। भामी का अर्थ है "तेजयुक्त"। भा-दीप्ति, यथा प्रभा। सत्य, प्रकाशस्वरूप है और असत्य, अन्धकार-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्वरूप। प्रकाश अन्धकार पर अवश्य विजय पाता है, इस सिद्धान्त के दर्शाने के लिये मन्त्र में सत्य का 'विशेषण' भामिनः दिया है। इसलिये ऊपर कहे दो विशेषणों से सत्य के दो गुण दिखाये हैं—(१) सत्य कर्म वाला है, (२) सत्यमार्ग प्रकाश का मार्ग है।

(३) बचे हुए विशेषण गाः पद के हैं। यथा—

(क) दुर्हणायून्, (ख) आसन्निपून्, (ग) हृत्स्वसः, (घ) मयोभून्। मन्त्र में गाः पद पुल्लिग है अतः इसके विशेषण भी पुल्लिग में रक्खे हैं, गाड़ी के आगे गौओं का लगाना वैदिक-सिद्धान्त के विरुद्ध है। गाड़ी के आगे बैलों को लगाना चाहिये न कि गौओं को। गाः पद के विशेषणों के अभिप्राय यथाक्रम निम्नलिखित हैं—

(क) दुर्हणायून्। दुर् का अर्थ है- बुरा। हृणीङ् धातु का अर्थ है—रोष और लज्जा। वर्तमान स्थल में केवल रोष अर्थ का ग्रहण संगत प्रतीत होता है। अतः दुर्हणायु का अर्थ हुआ- बुरे रोषवाली या अधिक रोषवाली। सत्य की वाणियों में यतः छल कपट नहीं होता, वे ऋजु होती हैं, अतः वे उग्र या कठोर प्रतीत होती हैं। सत्यवादी यह परवाह नहीं करता कि उसकी वाणियाँ दूसरों को बुरी लगेंगी या या अच्छी। वह सत्य का प्रचार करता ही है। और चूंकि सर्वसाधारण जनों का व्यवहार असत्य पर अवलम्बित रहता है, अतः उन्हें सत्यवादी के वचन कठोर और रोषयुक्त प्रतीत होते हैं।

(ख) गाः का दूसरा विशेषण है- आसन्निपून्। आसन् पद अस्य शब्द की सप्तमी विभक्ति का रूप है। इषु का अर्थ है—बाण। अतः "आसन्निपून्" का अर्थ है --मुख में बाणरूप। सत्यवाणियों का यह स्वरूप वास्तव में यथार्थ है। सत्य वाणियां जब मुख में होती हैं अर्थात् जब वे बोली जाती हैं, तब असत्यवादियों को वे बाण के समान प्रतीत होती हैं। अतः सत्य वाणियों का यह विशेषण भी उचित ही है।

(ग) गाः का तीसरा विशेषण है— हृत्स्वसः। हृत्सु का अर्थ है --हृदयों में, और असः का अर्थ है—फैंके गये। अतः हृत्स्वसः का अर्थ हुआ--हृदयों में फैंके गये। सत्यवचन, बोलते समय भले ही कटु या कठोर प्रतीत हों तो भी श्रोता अपने हृदयों में उन वचनों की सच्चाई को अवश्य मानते हैं। वे वचन श्रोताओं के हृदयों में अवश्य फैंके जाते हैं। अर्थात् वे वचन उनके हृदयों में अवश्य घर कर लेते हैं। चाहे कई आदमी संसार में ऐसे भी मिल जायें जो हृदय में पत्थर-सम होते हैं। उन में सम्भव है कि सत्यवचन अपना स्थान न भी बना सकें। तो भी जन साधारण ऐसे नहीं हो सकते। इसलिये 'हृत्सु' में बहुवचन रक्खा है। जो कि सर्वसाधारण का सूचक है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(घ) गाः का चौथा विशेषण है—मयोभून्। जिसका अर्थ है—सुखों के उत्पादक। सत्यप्रचार, सत्यव्यवहार, सत्यवचन और सत्यविचार का परिणाम सुख अवश्य है। चाहे वह सुख शीघ्र हो या देर में। अतः ऊपर के चार विशेषण सत्य की वाणियों में अच्छे प्रकार घटते हैं।

(४) मन्त्र के चौथे चरण में यह कहा है कि जो मनुष्य इन सत्यवाणियों की नौकरी स्वीकार करता है वही जीता है। नौकर वह है जो अपने स्वामी की आज्ञा में रहे। जो कि अपने स्कामी का भक्त हो। मनुष्यों को चाहिये कि वे सत्यवचनों को अपना स्वामी समझें और अपने आपको सत्यवचनों के नौकर। अर्थात् वे नौकर बनकर सत्यवचनों की सेवा-शुश्रूषा करने वाले हों और सदैव उनके आज्ञानुवर्त्ती हों। इस प्रकार जो मनुष्य सत्य का नौकर बनकर उसकी आज्ञाओं का सदा पालन करता है वह ही वास्तव में जीता है। उसीकी दीर्घायु तथा उत्तम आयु होती है।

परमात्मा सत्यरक्षक और असत्यनाशक है

सुविज्ञानं चिकितुषे जनाय सच्चासच्च वचसी पस्पृधाते।
तयोर्यत्सत्यं यतरदृजीयः तदित्सोमोऽवति हन्त्यासत्।
अथर्व० ८।४।१२॥

[चिकितुषे]१ तत्त्वज्ञानी [जनाय] मनुष्य के लिये [सुविज्ञानम्] यह सुविज्ञेय है कि [सत्] सत्य [च] और [असत्] असत्य [वचसी] वचन [पस्पृधाते] परस्पर विरुद्ध हैं। [तयोः] उनमें [यत्] जो [सत्यम्] सत्यवचन है [यतरत्] और जो [ऋजीयः] अधिक ऋजु अर्थात् सरल है [तत्] उसकी [इत्] ही [सोमः]२ प्रेरक परमात्मा [अवति] रक्षा करता है, और [असत्] असत्य का [आहन्ति] नाश करता है॥३७॥

भावार्थः—इस मन्त्र में सत्य और असत्य सम्बन्धी चार सिद्धान्तों का वर्णन है।

(१) सत्यवचन और असत्यवचन परस्पर विरोधी हैं।

(२) असत्य की अपेक्षा सत्य अधिक ऋजु अर्थात् सरल है।

(३) संसार का प्रेरक परमात्मा सत्य की रक्षा करता है।

(४) वही परमात्मा असत्य का नाश करता है।

१—किती संज्ञाने। २—षू प्रेरणे॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

परमात्मा पापी और हिंसक क्षत्रिय की वृद्धि नहीं करता, वह राक्षस और झूठे का नाश करता है

न वा उ सोमो वृजिनं हिनोति न क्षत्रियं मिथुया धारयन्तम्।
हन्ति रक्षो हन्त्यासद्वदन्तमुभाविन्द्रस्य प्रसितौ शयाते॥

अथर्व० ८।४।१३॥

[सोमः] प्रेरक परमात्मा [वृजिनम्] पापी को [न वै उ] कभी भी नहीं [हिनोति] बढ़ाता, [न] और न [क्षत्रियम्] क्षत्रिय को [मिथुया] जो कि हिंसा-व्यवहार को [धारयन्तम्] धारण करता है। [रक्षः] राक्षस को [आहन्ति] मारता है, [असत्] असत्य [वदन्तम्] बोलने वाले को [आहन्ति] मारता है। [उभौ] दोनों [इन्द्रस्य] इन्द्र के [प्रसितौ] बन्धन में [शयाते] शयन करते हैं॥ ३८॥

भावार्थः—इस मन्त्र में निम्नलिखित भाव दर्शाए हैं—

(१) सोम अर्थात् जगत् का प्रेरक परमात्मा पापी जनों को कभी भी उच्च गति नहीं देता।

(२) वह अत्याचारी क्षत्रियों को भी उच्च गति नहीं देता।

(३) वह राक्षसवृत्ति वाले लोगों को मारता है।

(४) वह असत्यवादी का नाश करता है।

(५) ये सब इन्द्र अर्थात् जगत् के राजा परमात्मा के बन्धन में सर्वदा रहते हैं। अर्थात् इन्द्र इन के बुरे कर्मों का सदैव फल देता है। ये दुःखों से मुक्ति कभी भी नहीं पाते।

परमात्माश्रय से वाणी का पाप-मोचन

यदुवक्थानृतं जिह्वया वृजिनं बहु।
राज्ञस्त्वः सत्यधर्मणो मुञ्चामि वरुणादहम्॥

अथर्व १।१०।३॥

[यत्] जो [अनृतम्] झूठ और [बहु] बहुत प्रकार के [वृजिनम्] त्यागने योग्य पापवचन [जिह्वया] जिह्वा से [उवक्थ] तूने बोले हैं। [राज्ञः] सब संसार के राजा [सत्यधर्मणः] सत्यनियम वाले तथा [वरुणस्य] श्रेष्ठस्वरूप परमात्मा के आश्रय द्वारा [त्वा] तुझ को [अहम्] मैं [मुञ्चामि] उन पापों से छुड़ाता हूं॥३९॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भावार्थः—(१) इस मन्त्र में पिता अपने पुत्र को, या गुरु अपने शिष्य को अथवा उपदेशक किसी उपदेश्य व्यक्ति को कहता है कि तूने अपनी जिह्वा से जो झूठ या अन्य त्यागने योग्य दुर्वचन बोले हैं मैं तुझे उन दुर्वचनों से—संसार के राजा, सत्य नियमों वाले तथा श्रेष्ठस्वरूप परमात्मा के आश्रय द्वारा—छुड़ाता हूं। "वरुणास्" पद में ल्यब्लोप पञ्चमी है। अतः वरुणात् का अर्थ है "वरुणमाश्रय्य" वरुण का आश्रय करके।

(२) वृजिन पद 'वृज्' धातु से बना है, जिसका अर्थ है—त्याग अर्थात् छोड़ना। त्याज्य कर्मों के करने से पाप होता है अतः संस्कृत साहित्य में वृजिन पद का अर्थ ही पाप होता है।

(३) मन्त्र में वृजिन पद से जिह्वा के पापों का ग्रहण है। जिन में से अनृत को तो मन्त्र में ही लिखा है। अन्य भी कई जिह्वा के पाप होते हैं। यथा[क] निन्दा करना, [ख] दीनवचन बोलना, [ग] चुगली करना, [घ] कठोर बोलना, [ङ] असम्बद्ध वचनों का बोलना आदि। अनृत भी जिह्वा का पाप है जिसका मन्त्र में स्वपद् से वर्णन किया है। मन्त्र में अनृत को स्वपद से इसलिये दर्शाया है चूंकि अनृतभाषण महापाप है।

[४] अब प्रश्न पैदा होता है कि जिह्वा के इन पापों से छुटकारा कैसे हो? मन्त्र में बताया है कि परमात्मा का आश्रय वाणी के पापों से मुक्ति देने वाला है। यतः परमात्मा वरुण अर्थात् श्रेष्ठ है, अतः उसके आश्रय और संग से हम में श्रेष्ठता पैदा होगी। परमात्मा के धर्म सत्य हैं अतः उसके संग से हम भी सत्यधर्मा बन जायेंगे। हम से अनृत छूट जायगा। परमात्मा सब का राजा है अतः श्रेष्ठता और सच्चाई के गुणों को अपने में रखकर हम भी संसार के धार्मिक राजा बन सकते हैं। परमात्मा के आश्रय से इसी प्रकार जिह्वा के अन्य पाप भी छूट सकते हैं। यजुर्वेद में लिखा है कि "वाचो मे विश्वभेषजः"। अर्थात् हे प्रभो! आप ही मेरी वाणी के रोगों के मुख्य औषध हो। अनृतभाषण आदि दोष ही वाणी के रोग हैं। अतः माता-पिताओं, गुरुओं और उपदेशकों को चाहिये कि वे पुत्रों, शिष्यों तथा श्रोताओं को परमात्मा के भक्त बनावें। परमात्मा के सत्संग से वे अपने सब प्रकार के इन्द्रियमलों का निवारण कर सकेंगे।

सत्य का त्रैवार्षिक व्रत

यदर्वाचीनं त्रैहायनादनृतं किं चोदिम।
आपो मा तस्मात्सर्वस्मात् दुरितात्पान्त्वंहसः॥

अथर्व० १० । ५ । २२॥

[त्रैहायनात्] तीन वर्षों से [अर्वाचीनम्] इधर-इधर [यद्] जो [किं च]

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कोई [अनृतम्] झूठ [ऊदिम] हमने बोला है। [आपः] व्यापक परमात्मा [मा] मेरी [तस्मात्] उस अनृतरूपी [दुरितात्] दुष्फल [अंहसः] पाप से तथा [सर्वस्मात्] अन्य सब दुष्फल पापों से [पान्तु] रक्षा करे ॥ ४० ॥

भावार्थः—(१) इस मन्त्र ने "त्रैहायन-अनृतव्रत" का वर्णन है। त्रि—तीन, हायन—वर्ष। तीन वर्ष लगातार झूठ न बोलने के व्रत का नाम "त्रैहायनानृतव्रत" है। यह अभ्यास की एक कोटि है। व्यक्ति जब देख ले कि गत तीन वर्षों में, मैं अपने व्रत में सफल हो गया हूं, तो वह "त्रैहायनानृतव्रत" के लिये फिर दूसरी बार भी प्रण करे। इस प्रकार करते-करते मनुष्य जीवनानृतव्रत की अवधि तक भी पहुंच सकता हैं। हमारी अवस्था इतनी गिर गई है, कि हमारे लिये सत्य का घण्टा-व्रत करना भी दूभर है।

(२) कई व्यक्ति इकट्ठे मिलकर यदि ऐसे व्रतों को करें, तो अधिक लाभ होता है। इससे व्रतपालन में, एक दूसरे की सहायता तथा एक दूसरे पर नजर हो सकती है। इस भाव के दर्शाने के लिये ही सम्भवतः "ऊदिम" में बहुवचन दिया है।

(३) झूठ बोलने का फल बुरा होता है। झूठ बोलना एक दुष्कर्म है। अतः यह दुष्फल भी है। मन्त्र में दुरित पद का भी यही भाव है। दुर—बुरा, इत—फल। अतः दुरित—दुष्फल कर्म।

(४) झूठ बोलने से पाप होता है, इसीलिये मन्त्र में अनृ को 'अंहस्' कहा है। अंहस् का अर्थ है पाप।

(५) पाप मनुष्य को मार डालता है, यह भाव अंहस् पद से सूचित होता है। अंहस् पद 'हन्' धातु से बना है जिस का अर्थ है हिंसा।

(६) इसी प्रकार अन्य दुष्कर्म भी दुष्फल तथा पाप-जनक होते हैं। (सर्वस्मात्)

(७) अनेक व्यक्ति मिल कर चाहे ऐसे व्रतों को करें, परन्तु आत्म-निरीक्षण प्रत्येक व्यक्ति का पृथक्-२ कर्त्तव्य है। आत्म-निरीक्षण में प्रत्येक व्यक्ति अपनी मदद आप ही कर सकता है। और आत्म-निरीक्षण करते हुए यदि अपने व्रत के पालन में कहीं त्रुटि दीख पड़े तो मनुष्य उसे दूर करने के लिये परमात्मा से शक्ति की प्रार्थना करे। इस वैयक्तिक आत्म-निरीक्षण के लिये ही मन्त्र में "मा" पद भी दिया है जो कि एकवचन है।

आत्मिक प्रकाश

यथा मधु मधुकृतः संभरन्ति मधावधि।
एवा मे अश्विना वर्च आत्मनि ध्रियताम् ॥

अथर्व० ९।१।१६॥

(यथा) जैसे (मधुकृतः) मधुकर अर्थात् भौंरे (मधावधि) मधु के छत्ते में

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(मधु) मधु को (संभरन्ति) इकट्ठा करते हैं। (एवा) इसी प्रकार (अश्विता) हे अश्विदेवताओ ! (मे) मेरे (आत्मनि) आत्मा में (वर्चः) क्रान्ति (ध्रियताम्) स्थापित कीजिये ॥ ४१ ॥

भावार्थः—(१) मन्त्र में वर्च की प्राप्ति का वर्णन है। वर्च का अर्थ है—कान्ति, तेज। निरुक्तकार ने अश्विदेवता के वर्णन में 'अश्विनौ' का अर्थ "सूर्याचन्द्रमसौ" भी दिया है। यथाः—तत्कावश्विनौ। सूर्याचन्द्रमसावित्येके ॥ १२। १॥ सूर्य और चन्द्र दोनों वर्चस्वी हैं, क्रान्तिमय हैं। और वर्च की प्राप्ति में उन्हीं को आदर्श माना जा सकता है, जो कि स्वयं भी वर्चस्वी हों। अतः इस मन्त्र में अश्विनौ से सूर्य और चन्द्र का ग्रहण करना ही उत्तम होगा। अभिप्राय यह है कि जिस प्रकार मधु-छत्ता मधु से लबालब भरा होता है, उसी प्रकार मेरा आत्मा सूर्य और चन्द्र की कान्ति से अभिव्याप्त हो।

(२) संभरन्ति=सम्+हरन्ति। 'हृग्रहोर्भः छन्दसि, ड्रस से ह को भ हुआ। भौंरे इकट्ठे होकर मधु के छत्ते को मधु से भरते हैं। इसी प्रकार सूर्य और चन्द्र इकट्ठे होकर मुझ में वर्च स्थापित करें। सूर्य का वर्च एक प्रकार का है और चन्द्र का दूसरे प्रकार का। सूर्य के वर्च में तीक्ष्णता है और चन्द्र के वर्च में सौम्यगुण है। मनुष्य के आत्मा में भी दोनों प्रकार के वर्च होने चाहियें।

———

दान के प्रत्येक अवसर पर

वेद मन्दिर निर्माण के लिए

दान भेजना न भूलें

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्रेष्ठ वैदिक साहित्य

ऋग्वेद (६ मण्डल) महर्षि दयानन्द कृत भाष्य	७१)
आर्ट पेपर पर उपहार संस्करण	१५१)
ऋग्वेद (७-१० मण्डल)	७१)
उपहार संस्करण	१५१)
यजुर्वेद-सामवेद भाष्य	७१)
उपहार संस्करण	१५१)
अथर्ववेद भाषा भाष्य	७१)
उपहार संस्करण	१५१)
यजुर्वेद भाष्य महर्षि दयानन्द कृत	३५)
अथर्ववेद परिचय	५)
अथर्ववेदीय चिकित्सा शास्त्र	१५)
वेदामृत	१०)
सामवेद भाष्य	२५)
अपने प्रभु से : प्रार्थना	१०)
अथर्ववेदीय मन्त्र विद्या	१०)
वेदों का यथार्थ स्वरूप	१०)
उपनिषद् संग्रह	१०)
वेद ज्योति : सजिल्द ६), अजिल्द :	४)
वन्दना के स्वर	१५)
दयानन्द चित्र दर्शन	२०)
ज्ञान दर्शन	१०)
अध्यात्म योग (कपड़े की जिल्द)	८)
वैदिक धर्म ही क्यों ?	५० पैसे
स्वर्ग पथ : सजिल्द :	३)
अजिल्द :	१.५०)
महान् अनुपमेय दयानन्द	१.५०)
प्रभु के चरणों में	१.५०)
ऋषि दयानन्द ने कहा था	१.५०)
वैदिक गृहस्थाश्रम—सजिल्द	८)
धरती का स्वर्ग : गृहस्थाश्रम	२)
ज्योति स्तम्भ	६)
आर्य क्रान्तिकारी	३)
वाल्मीकि रामायण अजिल्द	३)
सजिल्द	४)
बृहस्पति राज धर्म सूत्र	२)
उपनिषद् कथा माला	१)
महर्षि दयानन्द का ऐक्यवाद	१)
राष्ट्रवादी दयानन्द	१)
योग और ब्रह्मचर्य (सचित्र)	१)५०
शपतथ ब्राह्मण (प्रथम काण्ड)	२५)
संक्षिप्त महाभारत	१०)
वैदिक गीता भाष्य	१५)
मोक्ष का वैदिक मार्ग	१)
गायत्री शतक	२)
मां गायत्री	१.५०)
धर्म का मार्ग	१)
शतक-त्रयी	१.५०

प्रकाशक :

जन-ज्ञान प्रकाशन

दयानन्द संस्थान, वेद मन्दिर, दिल्ली-३६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आपका अपना धर्मग्रन्थ
परमात्मा की अमरवाणी

चारों वेदों का हिन्दी भाष्य

आज ही अपने घर में लाकर
प्रभु का आशीर्वाद प्राप्त करें

पूरी जानकारी पत्र लिख कर मंगाएँ

जिसके घर में वेद नहीं
वह हिन्दू का घर नहीं

दूरभाष – ५६६६३९ : ८०१२२१

पंडिता राकेश रानी अध्यक्ष- दयानन्द संस्थान

वेद मन्दिर १५९७, हरध्यान सिंह मार्ग, करौलबाग, नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शोध पूर्ण लेख

ऋषि दयानन्द का निर्णय क्या है ?

सार्वदेशिक सभा उत्तर दे वैदिक सन्ध्या ?

—डा० परमानन्द एम. ए., डी. लिट, पी. एच. डी.
(भू० पू० निर्देशक भाषा विभाग पंजाब)

1. ऋषि दयानन्द द्वारा कर्म-काण्ड में राष्ट्रीय एकता-प्रस्थापन

हमारे भारत में ऋषि दयानन्द से पूर्व वैदिक कर्म-काण्ड के प्रत्येक भाग में विविधता, अनेकता और परस्पर प्रतिद्वन्द्विता हमारे राष्ट्रीय जीवन को विखण्डित कर रही थी। ऋषि दयानन्द सम्पूर्ण भारत को संगठित करना चाहते थे। उन्हें क्रान्त-दर्शी होने से राष्ट्र को ऐक्य-सूत्र में पिरोना अभीष्ट था। हिन्दू जाति की विघटित काया को जरा-जीर्ण देखकर उन्होंने आदि शंकराचार्य के स्वरों में "वेदो नित्यम-धीयताम्" का पांचजन्य शंख बजाया और ऋग्वेद के निम्नलिखित जय-घोष द्वारा भारत की प्रसुप्त राष्ट्रीय भावना को मुखरित किया और स्वराज्य का मन्त्र जनता में फूँका—

समानो मन्त्रः, समितिः समानी, समानं मनः, सह चित्तमेषाम् ।
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः, समानेन वो हविषा जुहोमि ।

(R.X. 191. 3)

हिन्दुओं में उपासना की एकता नहीं थी। दूसरे धर्मों में कुरान या बाईबल पर एकनिष्ठा थी। हमारे यहाँ सन्ध्याएँ भी अनेकों थीं, जैसे कि ऋग्वेदी संध्या, यजुर्वेदी संध्या आदि अनेक प्रकार की संन्ध्याएँ प्रदेश भेद से भिन्न-भिन्न शाखाओं में प्रचलित थीं। ऋषिवर साम्प्रदायिकता को विनष्ट करके राष्ट्रीयता की भावना से भेद या शाखा-पार्थक्य की प्रतिद्वन्द्विता को राष्ट्र से निराकृत करना चाहते थे। समस्त हिन्दू जनता का धार्मिक मूलाधार वेद है। अतः उन्होंने चारों वेदों को (जो पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर प्रदेशों में पृथक्-पृथक् बँटे हुए थे और जिससे देशवासी अपने आपको प्रान्तीयता के रंग में रंग चुके थे), समान स्तर पर लाकर और चारों वेदों को मिलाकर—उनमें एक-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वाक्यता स्थापित करके सारा कर्मकाण्ड निर्धारित किया है। वे चतुर्वेदानुमोदित वैदिक सिद्धान्त-स्थापना के प्रस्तोता थे। राष्ट्रीयता की भावना से ऋषि का यह अभूतपूर्व प्रयास कितना महान् तथा कितना ध्रुवस्थायी है—इसकी कल्पना वैदिक-हृदय, सहृदय, देशभक्त ही कर सकता है। 'पवित्र ज्ञान" (ऋग्वेद), "पवित्र कर्म" (यजुर्वेद), "पवित्रोपासना" (सामवेद) और "चरमब्रह्म ज्ञान" (अथर्ववेद)—ये चार विषय मुख्यतया चारों वेदों के प्रतिपाद्य विषय हैं। इन चारों के समुच्चयन से ही मानव की उन्नति होगी। अतः ऋषिवर ने उल्लिखित सभी एकदेशीय सन्ध्याओं को निरस्त करके वेद-चतुष्टयाश्रित एक वैदिक सन्ध्या का आविष्कार किया। अतः यही भारतीय जनता के लिए एक केन्द्र बिन्दु, मान्य एवं करणीय है। यह समस्त आर्य जाति के लिए धर्मार्थकाममोक्ष-दायिनी मानी गई है। ऋषि ने स्वयं कहा है—

"अनेन जपोपासनादिकर्मणा धर्मार्थकाममोक्षाणां
सद्यः सिद्धिः भवेन्नः" (पंचमहायज्ञविधिः)

इसलिए ऋषि दयानन्द प्रतिपादित, चतुर्वेदाधारित संध्या ही उपादेय है—इसमें कोई सन्देह नहीं। तथापि मैंने प्रश्नात्मक शीर्षक ऊपर क्यों लिखा है ? यह विचारणीय गम्भीर विषय है। आर्यसमाज को स्थापित हुए एक शतक व्यतीत हो चुका है, तथापि ऋषि दयानन्द के निर्णय को जानने का गम्भीर प्रयास नहीं किया गया। यह एक विवेकशील बुद्धिजीवी आस्तिक समाज के लिए अछूता विषय बना हुआ है।

2. सन्देह का कारण

ऋषि दयानन्द भगवत्-उपासना (सन्ध्या) को दैनिक नित्य कर्मों में सर्व-प्रधान कृत्य मानते थे। उन्होंने प्रत्येक मानव के लिए प्रतिदिन पाँच महायज्ञों का करना दैनिक चर्या का अभेद्य एवं अनिवार्य अंग माना है। ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृ-यज्ञ, अतिथि-यज्ञ और बलिवैश्वदेव यज्ञ, ये पाँच महायज्ञ हैं। इन पाँच महायज्ञों की विधि क्या है—इसका विधान दयानन्द ने पंच महायज्ञ विधि, संस्कार विधि, ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका एवं सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों में लिखा है। परन्तु सभी ग्रन्थों में विभिन्नता पाई जाती है। सत्यार्थप्रकाश तथा ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में सन्ध्या या अन्य पांच महायज्ञों के विषय में जो लिखा है—वह केवल आनुषङ्गिक —प्रसंगान्तर्गत—संकेतमात्र ही कहा जा सकता है। इनमें इनकी उपयोगिता, अवश्य-कर्त्तव्यता का महत्व दिखाना ही ग्रन्थकार को अभीष्ट था। विधि या पद्धति लिखना ध्येय नहीं था। पंचमहायज्ञ विधि और संस्कार विधि दो ग्रन्थ हैं जिनमें सन्ध्या या अन्य महायज्ञों की विधि नियमित रूप से विहित की है। पंचमहायज्ञ विधि तो केवल पाँच यज्ञों की प्रशस्त पुस्तक है। संस्कार विधि का प्रतिपाद्य विषय बहुत व्यापक एवं विशाल है। इस ग्रन्थ में "मानव समाज-निर्माण या मानवता-निर्माण" की वैज्ञानिक प्रक्रिया लिखी है। यह एक अमूल्य ग्रन्थ है जो भारतीय संस्कृति का निर्माता है। इसमें

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गर्भाधान से लेकर मृत्युपर्यन्त के 16 संस्कारों की विधि लिखी है। साथ में "गृहस्थाश्रम" प्रकरण में "पाँच महायज्ञों की विधि" भी लिख दी गई है। अतः संस्कारविधि कर्मकाण्ड का प्रमुख ग्रन्थ-रत्न है।

परन्तु जब हम पंचमहायज्ञविधि एवं संस्कार विधि में प्रतिपादित सन्ध्या-पद्धतियों का मिलान करते हैं तो उन दोनों में बहुत विभिन्नताएँ पाई जाती हैं। हम अन्य महायज्ञों की विभिन्नताओं का विवेचन यहाँ न करके केवल अभी सन्ध्या (जो सर्वप्रमुख महायज्ञ है) का विवेचन कर रहे हैं। अब प्रश्न उत्पन्न होता है—कि दोनों ग्रन्थों का कर्त्ता एक ही महापुरुष है—तो यह भिन्नता क्यों ? यदि भिन्नता है तो किस विधि को अपनाया जाये ?

3. सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का निर्णय

कुछ दिन हुए एक पुस्तक जिसका नाम "सन्ध्या पद्धति" है और जिसका सम्पादन सार्वदेशिक धर्मार्य सभा ने किया है और जिसे आर्य जगत् की सार्वभौम मूर्धन्य संस्था "सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द भवन, रामलीला मैदान, नई दिल्ली-1" ने प्रकाशित किया है और उसके ऊपर 'प्रामाणिक संस्करण' भी अंकित किया गया है—मेरी दृष्टि में आई। यह इस पुस्तक का तीसरा संस्करण सभा ने सन् 1970 में छापा है। यह पुस्तक मेरे एक मित्र ने मुझे दी थी। मैंने इसे आद्योपान्त सावधान होकर, जिज्ञासु भावना से श्रद्धापूर्वक पढ़ा। क्योंकि हमारे लिये यह इसलिये आदर की पात्र है कि इस पर 'सार्वदेशिक' सभा की छत्र-छाया एवं मुहर है। परन्तु गम्भीर अध्ययन करने के अनन्तर मुझे मार्मिक अन्तर्वेदना हुई कि इसमें सभा ने जान-बूझकर ऋषि को समझने का प्रयास नहीं किया। मैं व्यक्तिगत रूप से सभा के प्रधान श्री रामगोपाल (शालवाले) वानप्रस्थ एवं धर्मार्य सभा के धर्माधिकारी श्री पं० वैद्यनाथ जी शास्त्री (जो एक सुलझे हुए विद्वान् हैं) का हार्दिक सम्मान करता हूं। मेरी धारणा है कि उन्होंने पर्याप्त प्रयास से ऋषि-ग्रन्थों का अवलोकन किया है और तभी यह 'संध्या पद्धति' उन्होंने तैयार की है। मुझे यह भी बताया गया है कि इस पुस्तिका का प्रथम संस्करण श्री आचार्य विश्वश्रवा जी ने 'धर्माधिकारी' के रूप में लिखा था—उसका यह तृतीय संस्करण मेरी दृष्टि में पड़ा। मेरी दृढ़ सम्मति है कि यह पुस्तक भ्रान्त एवं ऋषि के आदेश के विपरीत है। तो भी सभा ने, इसे ही एक मात्र प्रामाणिक और उपादेय करार दे दिया है। सभा के मन्त्री इसकी भूमिका में लिखते हैं—

> सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा ने अपनी 3-2-1942 की बैठक के निश्चयानुसार धर्मार्य सभा द्वारा निर्मित तथा सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रचारित दैनिक सन्ध्या पर पुनर्विचार करने की धर्मार्य सभा को प्रेरणा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

की थी। धर्मार्य सभा ने पर्याप्त अनुसंधान और विचार के पश्चात् सन्ध्या पद्धति को जो रूप दिया है वह धर्मार्य सभा के मन्त्री जी के (आचार्य वैद्यनाथ) स्पष्टीकरण विषयक आवश्यक नोट के साथ प्रकाशित किया जाता है।

(ह.) रामगोपाल संसद् सदस्य,
मन्त्री,
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

इस 'सन्ध्या पद्धति' को प्रकाशित करने का प्रयोजन सभा के 'धर्माधिकारी' द्वारा निम्नलिखित घोषित किया गया है –

(क) भिन्न-भिन्न प्रकाशकों ने नाना प्रकार से सन्ध्या-पद्धतियों को प्रकाशित करके कर्मकाण्ड में गड़बड़ पैदा कर दी है—अतः सार्वदेशिक सभा द्वारा यह प्रामाणिक पद्धति प्रकाशित की गई है।

(ख) आर्य जनता से प्रार्थना है कि वह सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रकाशित सन्ध्या पद्धति का ही प्रचार करें। और इसके अनुसार ही अपनी-अपनी सन्ध्या की विधियों को ठीक-ठीक पुनः समझ लें।

निवेदक,
वैद्यनाथ शास्त्री (धर्माधिकारी)
(वही पुस्तक)

मुझे दुःख से कहना पड़ता है कि सभा ने ऋषि निर्मित-पद्धति को प्रमुखता न देकर अपनी 'सन्ध्या पद्धति' को जनता पर लादना क्यों ठीक समझा है? सभा के धर्माधिकारी के शब्दों में इसका उत्तर यह है—

धर्मार्य सभा के निर्णयानुसार महर्षि दयानन्द सरस्वती जी कृत 'पंच महायज्ञविधि' को मौलिक मुख्यता देकर यह पद्धति लिखी गई है। परन्तु पंचमहायज्ञ विधि से अवशिष्ट बातें जो सत्यार्थ प्रकाश और संस्कार विधि में हैं वे वहाँ से संग्रह करके पद्धति को पूर्णता दी गई है। अतः यह पद्धति 'सर्वांगपूर्ण' और आर्ष है।

(प्राक्कथन वही पुस्तक)

ऊपर लिखे उद्धरणों से तीन बातें स्पष्ट हो जाती हैं—

(1) सभा ने "पंचमहायज्ञविधि" को मौलिक मुख्यता देकर अपनी पद्धति को लिखा है। (परन्तु विद्वान् धर्माधिकारी लेखक ने इस बात को सिद्ध करने के लिए ऋषि के ग्रन्थों से कोई प्रमाण नहीं दिया, जिससे सिद्ध हो सके कि 'संस्कार विधि' का तिरस्कार क्यों किया गया?)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(2) दूसरी बात यह है कि "सन्ध्या पद्धति" को "पूर्णता" धर्माधिकारी ही दे सके हैं, ऋषि दयानन्द नहीं। क्या ऋषिवर को "पूर्णता" देने की विधि का ज्ञान नहीं था ?

(3) यदि सभा यह "सन्ध्या पद्धति" न छापती तो "सन्ध्या पद्धति" ऋषि के ग्रन्थों के होते हुए भी "सर्वाङ्ग पूर्ण" न हो सकती थी। सभा की छपवाई "सन्ध्या पद्धति" तो आर्ष है और ऋषि प्रतिपादित विधि "आर्ष" नहीं।

उल्लिखित तीनों बातों से मेरा महान् मतभेद है। मैं नहीं समझ सकता हूं कि ऋषि दयानन्द सरीखे "साक्षात् कृत धर्मा" ऋषि को पूर्णता देने की विधि का ज्ञान न था। उन्होंने ये बातें जानीं और समझी हुई थीं। दोष हमारा है जो हम उनके लेखों को ध्यानपूर्वक नहीं पढ़ते और अपनी कपोल-कल्पित धारणाओं को—उनकी सम्मति की अवहेलना करके उन पर लादकर अपने को "पूर्ण ज्ञाता" मान बैठे हैं। सभा का पक्ष कितना निस्सार है और इस विषय में ऋषि का क्या स्पष्ट आदेश है, मैं आगे चलकर उनके ही शब्दों में लिखूंगा। मैं देव दयानन्द के सार-गर्भित प्रमाणानुमोदित वचनों को "अपूर्ण" मानने में असमर्थ हूँ। उन्होंने तो सब कुछ स्पष्ट लिख दिया है। "नैष स्थाणोरपराधो, यदेनमन्धो न पश्यति" ऐसा वचन भगवान् यास्क ने तंग आकर ही निरुक्त में लिखा था।

इस "सन्ध्या पद्धति" को प्रकाशित करके सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने अपनी ओर से संवत् 2002 में एक परिपत्र द्वारा निम्नलिखित घोषणा सब आर्य संस्थाओं और आर्य बन्धुओं को भेजी थी :

(1) इस सभा की सम्मति में सन्ध्या का मुख्य ग्रंथ 'पंचमहायज्ञविधि है।"

(2) "संस्कार विधि और सत्यार्थ प्रकाश" में सन्ध्या का उल्लेख "प्रासंगिक है। इसलिए सभा घोषणा करती है कि—

"ब्रह्मयज्ञ (सन्ध्या) उसी विधि, उसी क्रम और उतने ही मन्त्रों से किया जाया करे जिनको "पंचमहायज्ञविधि" में लिखा गया है। जैसा कि स्वयं ऋषि दयानन्द ने "ऋग्वेदादि भाष्य-भूमिका" के पंचमहायज्ञ विषय में लिखा है—

"सन्ध्योपासनविधिश्च पंचमहायज्ञविधाने यादृश उक्तस्तादृशः कर्तव्यः।

तथाग्निहोत्रविधिश्च यादृशस्तत्रोक्तस्तादृशः कर्तव्यः" (पृ. 567 शताब्दि संस्करण)। सभा की इस घोषणा में तीन बातें कही गई हैं—

(क) पंचमहायज्ञविधि सन्ध्या का मुख्य ग्रन्थ है।

(ख) सत्यार्थ प्रकाश और संस्कार विधि में सन्ध्या का उल्लेख प्रासंगिक (?) है। (भाव यह है कि वह विचारानर्ह है या महत्त्वपूर्ण नहीं है)।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(ग) ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में "पंचमहायज्ञविधि" की ही सन्ध्या करना प्रतिपादित है (जिसका प्रमाण ऊपर लिख दिया गया है) अतः यही सन्ध्या विधि अपनानी चाहिये—ऐसा ऋषि का आदेश सभा की सम्मति में है।

4. सभा की उल्लिखित घोषणा तथा सन्ध्या-पद्धति की आलोचना

सभा का निर्णय या उसकी उल्लिखित घोषणा एवं धर्माधिकारी द्वारा लिखित "सन्ध्या पद्धति" ऋषि के आदेश के सर्वथा विपरीत होने से हेय एवं प्रमाणानर्ह है। ऋषि दयानन्द ने सन्ध्या के विषय में (जहाँ तक उसकी विधि एवं प्रक्रिया का सम्बन्ध है) पंचमहायज्ञ विधि को प्रमुखता नहीं दी। संस्कार विधि ग्रंथ में प्रतिपादित विधि भाग को उपादेय कहा है। पंचमहायज्ञविधि की विधि को नहीं। उसके लिए तो उन्होंने स्पष्ट आदेश दिया है कि मन्त्रों का अर्थ पंचमहायज्ञविधि में देख लिया जाए। इस विषय में प्रमाणादि आगे चलकर मैं दूंगा। मुझे शोक है कि सभा ने ऋषि वचनों की ओर ध्यान भी नहीं दिया। सौ वर्ष तक वही लकीर पीटते रहे हैं।

इससे पहले कि हम ऋषि दयानन्द के अन्तिम निर्णय को उनके ही शब्दों में यहाँ लिखें—यह उचित होगा कि पाठकों तथा अनुसंधान-प्रेमियों की जानकारी के लिए आधारभूत सारी सामग्री का संक्षिप्त विवरण यहाँ दिया जाये।

5. सन्ध्याविषयक ग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय

ऋषि दयानन्द द्वारा विभिन्न कालों में लिखे गये "सन्ध्या" विषयक ग्रन्थ निम्नलिखित हैं—

(क) सन्ध्या की सर्वप्रथम पुस्तक "सन्ध्योपासना" नाम से ऋषि दयानन्द ने संवत् 1921 में लिखी जो ज्वालाप्रसाद प्रैस आगरा में छपवाई गई और यह पुस्तक कुंभ के मेले पर बाँटने के लिए ही थी। इसमें अन्य विधियों के अन्त में पौराणिक "लक्ष्मीसूक्त" भी जोड़ा गया था। (देखिए दयानन्द के ग्रन्थों का इतिहास" पृष्ठ 7) सन्ध्या के विषय में ऋषि दयानन्द का यह सर्वप्रथम प्रयास था।

(ख) "पंचमहायज्ञविधि" नाम की पुस्तक ऋषि दयानन्द ने सर्वप्रथम संवत् 1931 में लिखी जो बम्बई में छापी गई थी। इसका वास्तविक नाम "सभाष्य सन्ध्योपासनादि पंचमहायज्ञविधि" था। इसमें पाँचों दैनिक महायज्ञों का विधान था। इसके 40 पृष्ठ हैं (20×30÷16 साइज की थी) इसकी पाण्डुलिपि वैदिक यन्त्रालय अजमेर में अभी भी सुरक्षित है। द्रष्टव्य—मीमांसक कृत "ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का इतिहास," अध्याय 4, पृष्ठ 46 और 49, इसका मुख पत्र (Title Page) इस प्रकार का था :—

"सभाष्य सन्ध्योपासनादि पंचमहायज्ञविधिः"

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

एतत् पुस्तकं श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्यवर्यत्वादि अनेक गुण सम्पद्विराजमान श्रीमद् वेदविहिताचारधर्म-निरूपक श्री मद्दयानन्द सरस्वतीस्वामिविरचितमिदम्।

तदाशया दाधीचकुलोत्पन्न वेदमतानुयायी व्यासोपनामा वैजनाथ-सूनुः लालजी शर्मा मुद्राकरणार्थोद्योगकर्ता, वेदमतानुयायी केण्युपाह्वनारायणात्मजलक्ष्मण शास्त्रिभिः संशोध्य सर्वलोकोपकारार्थं मुम्बय्यां रघुनाथकृष्णाजीनां आर्य प्रकाश मुद्रणयन्त्रेस्वाम्यर्थं डोगरोपनाम्ना नारायणतनुज भिकोकौरव्यं मुद्रयित्वा प्रसिद्धिं नीतम्। शकाब्द 1796 प्रथमावृत्तिः सभाष्य ॥

(द. ग्र. का. इ. एपैन्डिक्स, पृ० 27)

(ग) पंचमहायज्ञविधि का संशोधित (द्वितीय) संस्करण सं. 1934 में वाराणसी में छपवाया गया। इसके 64 पृष्ठ हैं। (20×30÷16 आकार) इसका मुखपृष्ठ निम्न प्रकार है :—

"पंचमहायज्ञविधिः"

श्रीमद् दयानन्द सरस्वतीस्वामिनिर्मितः, वेदमन्त्राणां संस्कृतप्राकृतभाषार्थसहितः।

श्रीयुत् विक्रमादित्यमहाराजस्य चतुस्त्रिंशोत्तरे एकोनविंशे संवत्सरे भाद्रपौर्णिमायां समापितः।—सन्ध्योपासनाग्निहोत्रपितृ-सेवाबलिवैश्वदेवातिथिपूजानित्यकर्मानुष्ठानाय संशोध्य यन्त्रयितः।

अस्य ग्रन्थस्याधिकारः सर्वथा स्वाधीन एव रक्षितः।

काश्यां लाजरसकम्पन्याख्यस्य यन्त्रालये मुद्रितः।

इसी सम्वत् 1934 के संस्करण के अनुसार ही अब "पंचमहायज्ञविधि" के संस्करण वैदिक यन्त्रालय अजमेर से छप रहे हैं। ये सब इसी का रिप्रिंट मात्र हैं।

(घ) संवत् 1940 में ऋषि दयानन्द ने एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कर्मकाण्ड का विस्तृत ग्रन्थ लिखा था जिसका नाम है "संस्कार विधि"। यह संस्कारविधि का संशोधित संस्करण था। संस्कार विधि का प्रथम संस्करण सम्वत् 1923 में निकला था। स्वामी जी ने इसे निराकृत करके सं. 1940 में शुद्ध संस्करण छपवाया था। आर्यसमाज इसे ही प्रामाणिक मानता है।

इस ग्रन्थ में गर्भाधान से लेकर अन्त्येष्टि तक 16 संस्कारों का वर्णन है।

इसके गृहस्थाश्रम प्रकरण में पाँच महायज्ञों की विस्तृत, परिवर्तित, परिवर्धित एवं संशोधित विधि लिखी है। इसमें "सन्ध्योपासना" का भी विशद वर्णन है।

(ङ) ऊपर लिखी पुस्तकें तो स्पष्ट विध्यात्मक (विधि-प्रतिपादक) ग्रन्थ हैं। इनके अतिरिक्त सत्यार्थप्रकाश तथा ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में भी सन्ध्या का वर्णन है परन्तु इन दो ग्रन्थों में सांकेतिक एवं प्रतीकात्मक ही अभिलेख हैं। उन्हें विधि-निर्धारक नहीं कहा जा सकता। ये लेख अत्यन्त संक्षिप्त एवं आनुषंगिक ही हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अत: पाठकों को इतनी मौलिक जानकारी देने के अनन्तर अब हम सार्वदेशिक सभा की घोषणा एवं इसकी धर्मार्थ सभा द्वारा सम्पादित "सन्ध्या पद्धति" नामक पुस्तक की आलोचना करेंगे जिससे पाठकों को ज्ञात हो सके कि सभा की धारणा भ्रान्त और ऋषि दयानन्द के अपने दिये हुए निर्णय के सर्वथा प्रतिकूल होने से अप्रामाणिक है।

सभा का पक्ष

मैंने ऊपर "सन्ध्या पद्धति" पुस्तक में से जो उद्धरण दिये हैं और सभा ने इस सम्बन्ध में जो घोषणा सम्वत् 2002 में की है—उसके अनुसार सभा का मन्तव्य एवं आदेश निम्नलिखित है :—

(1) "पंचमहायज्ञविधि" सन्ध्या का मुख्य ग्रन्थ है। अत: सन्ध्या इसी पुस्तक के अनुसार करनी चाहिये, अर्थात् उसी विधि, उसी क्रम और उतने ही मन्त्रों से (न अधिक और न न्यून)। अत: सभा ने अपनी "सन्ध्या पद्धति" में पंचमहायज्ञ विधि की विधि को आधार बनाया है और संस्कार विधि में लिखी विधि व मन्त्रों को नहीं।

(2) संस्कार विधि में सन्ध्या का उल्लेख केवल "प्रासंगिक" होने से तत्प्रतिपादित विधि या क्रम या मन्त्रों के परिवर्तन, परिवर्धन एवं संशोधनों को पद्धति का आधार नहीं माना जा सकता।

(3) "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" नामक ग्रन्थ में स्वामी जी ने स्वयं लिखा है कि "पंचमहायज्ञ विधि" के अनुसार ही सन्ध्या करनी चाहिए (अर्थात् संस्कार विधि के अनुसार नहीं) वे निम्नलिखित उद्धरण "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" से देते हैं :—

"सन्ध्योपासनविधिश्च पंचमहायज्ञविधाने यादृश
उक्त स्तादृश एवं कर्त्तव्य:" (पृष्ठ-५६७ शताब्दि संस्करण),

(इसका शब्दार्थ यह है कि पंचमहायज्ञविधान में जैसी विधि प्रतिपादित की गई है, सन्ध्योपासना तदनुसार ही करनी चाहिए)

इससे पूर्व कि इस विषय में स्वयं ऋषिवर ने क्या अन्तिम निर्णय दिया है-यह मैं उन्हीं के शब्दों में यहाँ उद्धृत करूँ, मैं उल्लिखित सभा के पक्ष का सूक्ष्म विश्लेषण करना चाहता हूं जिससे पाठक जान सकें कि सभा की धारणा "विचार-विजृम्भित" नहीं है—

सभा ने ऊपर लिखा है कि सभा ने "पंचमहायज्ञ विधि" की विधि को प्रमुखता दी है—(संस्कार विधि में प्रतिपादित विधि को नहीं) इसके दो कारण वे बतलाते हैं (१) "पंचमहायज्ञविधि" सन्ध्या का मुख्य ग्रन्थ है। संस्कार विधि में "सन्ध्या का

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रतिपादन" प्रासंगिक मात्र है। अर्थात् "संस्कार विधि" केवल मात्र सन्ध्या का ग्रन्थ न होकर अन्य संस्कारों की भी चर्चा करता है।

इसका सीधा और सरल उत्तर यह है कि सभी विषय "प्रासंगिक" होने से ही लिखे जाते हैं। अतः संस्कार विधि के सन्ध्या प्रकरण को "प्रासंगिक" होने से "प्रमाणानर्ह या "अनुपादेय" नहीं कहा जा सकता। बुद्धिमान् ग्रन्थकार "प्रसंग-प्राप्त" विषय ही लिखते हैं—अप्रासंगिक नहीं। अप्रासंगिक विषय-प्रतिपादन ग्रन्थकार की विवेक-शून्यता का परिचायक होता है। विचारणीय बात तो यह है कि "वह प्रासंगिक" विषय-प्रतिपादन युक्ति-युक्त या प्रमाणानुमोदित है या नहीं? क्या सभा "संस्कार विधि" के इस प्रकरण को असंगत, अप्रामाणिक, निर्हेतुक किं वा असम्बद्ध सिद्ध करने का साहस कर सकती है? यदि नहीं तो उसे "प्रमुख" या "आधार" क्यों न बनाया गया?

सभा ने इसका एक समाधान यह दिया है कि स्वामी जी ने स्वयं ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के पूर्वोद्धृत वाक्य में आदेश दिया कि "पंचमहायज्ञविधाने यादृश उक्त स्तादृशः (सन्ध्योपासनविधिः कर्तव्यः) अर्थात् "पंचमहायज्ञ विधि के अनुसार सन्ध्या करनी चाहिए।"

सभा का यह उत्तर भी मीमांसा चाहता है। स्वामी जी ने यहां तो "पंच महायज्ञविधाने" लिखा है "पंचमहायज्ञविधौ" नहीं। विधान और विधि शब्दों में अर्थ-भिन्नता विद्वान् जानते हैं। यह ठीक है कि इस वाक्य का रूपान्तर "पंचमहायज्ञ विधि" हिन्दी अनुवाद में लिखा है परन्तु यह हिन्दी अनुवाद स्वामी जी का अपना किया नहीं है। एतदर्थ नियुक्त "वेतनभोगी पण्डितों" ने यह लिखा है। यह सभी विद्वानों ने मान लिया है कि वेदभाष्य और ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका का हिन्दी रूपान्तर वेतनभोगियों ने जो किया था वह अनेक स्थलों में मूल के विरुद्ध है। स्वामी जी तो संस्कृत में लिखते थे—उसका हिन्दी रूप बाद में किया जाता था। इस बात को मुक्त-कण्ठ से श्री घासी राम जी तथा प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् एवं अनुसंधाता पं० युधिष्ठिर जी मीमांसक ने स्पष्ट अपनी "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" के प्राक्कथनों में लिखा है। अतः "पंचमहायज्ञविधान" का अर्थ "पंचमहायज्ञविधि" ही केवल नहीं हो सकता। विधान तो स्मृतियों, सूत्रों, ऋषि के अन्य ग्रन्थों में बहुत हैं।

अस्तु! यदि हम मान भी लें कि यहां पंचमहायज्ञविधाने पद का अर्थ "पंचमहायज्ञविधि" नामक ग्रन्थ है जिसे स्वामी जी ने स्वयं लिखा था—तो भी बात बनती नहीं! क्योंकि स्वामी जी ने दो संस्करण "पंचमहायज्ञविधि" के प्रकाशित किये थे जिनका स्पष्ट परिचय हम ऊपर दे चुके हैं। दोनों संस्करणों की मूल पाण्डु-लिपियां स्वामी जी द्वारा संस्थापित "वैदिक यन्त्रालय अजमेर" में सुरक्षित हैं। इन दोनों के प्रकाशनों का समय भी हम ऊपर लिख चुके हैं। अर्थात् प्रथम संस्करण संवत्

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

1931 में और दूसरा संस्करण संवत् 1934 में छपा। सभा ने जो संध्या पद्धति छपवाई है उसमें संवत् 1934 की 'पंचमहायज्ञविधि" को ही आधार बनाया गया है। क्योंकि "सन्ध्या पद्धति" सं. 1934 की "पंचमहायज्ञविधि" के अनुकूल नहीं। अब हमें विचार करना होगा कि "ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका" के उल्लिखित वाक्य (पंचमहायज्ञविधाने) में ग्रन्थकार का संकेत किस पंचमहायज्ञविधि की ओर हो सकता है! इसके लिए हमें "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" के निर्माण काल का पता लगाना आवश्यक है।

इसका उत्तर स्वामी जी के ही शब्दों में सुनिए। ऋषि ने निम्नलिखित श्लोक "ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका" के प्रारम्भ में लिखकर उसका निर्माण-काल स्वयं बता दिया है :—

"कालरामाङ्कचन्द्रेऽब्दे (1933) भाद्र मासे सिते दले।

प्रतिपद्यादित्यवारे भाष्यारम्भः कृतो मया। "(ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका)

अर्थात् इसका निर्माण काल संवत् 1933 है और वर्तमान द्वितीय संस्करण की पंचमहायज्ञविधि जिसके आधार पर सभा ने "सन्ध्या पद्धति" लिखी है वह संवत् 1934 में लिखी गई थी—जैसाकि ऋषिवर ने पंचमहायज्ञ विधि के अन्त में लिखा है :—

"श्रीयुत विक्रमादित्यमहाराजस्य चतुस्त्रिंशोत्तरे एकोनविंशे संवत्सरे भाद्र पौर्णिमायां समापितः" इसका परिचय हम ऊपर भी दे चुके हैं।

विज्ञ पाठक अब स्वयं जान सकते हैं कि "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" में यदि "दुर्जनतोषन्याय" से मान भी लें कि पंचमहायज्ञ विधान पद का अर्थ पंचमहायज्ञविधि है तो द्वितीय संस्करण की सं. 1934 में (अर्थात् "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" के एक वर्ष बाद) लिखी गई पुस्तक नहीं हो सकती। क्योंकि जब "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" लिखी गई तब तो यह पुस्तक थी ही नहीं। पण्डित युधिष्ठिर मीमांसक जी ने "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" का एक विवेचनात्मक संस्करण निकाला है। उसमें उन्होंने इस विषय पर स्पष्ट निर्णय दे दिया है:—इस वाक्य की टिप्पणी में उनका यह नोट कितना स्पष्ट है :—

"अयमपि संकेतः 1931 वैक्रमाब्दे प्रकाशिते सभाष्य सन्ध्योपासनादि पंचमहायज्ञविधि ग्रन्थे च सन्ध्योपासनाविधिः लिखितः तं प्रति वर्तते। न तु वाराणसीतः प्रकाशिते पंचमहायज्ञविधि नाम्नि ग्रन्थे विद्यमानं सन्ध्योपासनाविधिं प्रति" इसी बात को विद्वान् लेखक ने हिन्दी टिप्पणी में पुनः भी लिखा है।

(टिप्पणी, पृष्ठ 282)

यह संकेत वि. सं. 1931 में प्रकाशित पंचमहायज्ञविधि की ओर है। 1934 में पुनः प्रकाशित संशोधित संस्करण भूमिका लेखन के पश्चात् छपा।"

(पृ. 284)।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यह यहाँ जान लेना भी अनिवार्य है कि ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका लिखने का प्रारम्भ भाद्र शुक्ला प्रतिपदा सं. 1933 को किया गया था और इसकी एक कापी तीन मास में पूरी हुई। पीछे कई मास परिवर्तन / परिवर्धन होता रहा। ऐसी छः पाण्डुलिपियां अजमेर में पड़ी हैं। इसका मुद्रण फाल्गुन सं. 1933 के आरम्भ में हो गया था। क्योंकि लाजरस प्रेस में छपे प्रथम संस्करण पर सं. 1934 छपा है। और इसके आवरण पृष्ठ के नीचे एक सूचना छपी थी कि "वैशाख सं. 1934 में ऋषि दयानन्द लुधियाना वा अमृतसर में निवास करेंगे।"

इस विज्ञापन से स्पष्ट हो जाता है कि "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" का मुद्रण फाल्गुण सं. 1933 में या इससे पूर्व प्रारम्भ हुआ होगा और यह आवरण पृष्ठ चैत्र सं. 1934 में छपा था।

इससे स्पष्ट हो जाता है कि सं. 1934 वाली पंचमहायज्ञविधि "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" के निर्माण काल में नहीं थी।

अतः सं. 1931 में छपी पंचमहायज्ञविधि का ही संकेत "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में है। जिसको ऋषिवर ने स्वयं 1934 की पंचमहायज्ञविधि को लिखकर निराकृत कर दिया था। यद्यपि ऋषि ने इस निराकरण का उल्लेख नई सं. 1934 वाली पंचमहायज्ञविधि में कहीं नहीं किया और कहीं अन्य भी स्पष्ट ऐसा संकेत नहीं किया गया है।

अन्तरंगसाक्षी

इसके अतिरिक्त सं. 1934 वाली "पंचमहायज्ञविधि" को पढ़ने से ज्ञात होता है कि यह पुस्तक ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के अनन्तर लिखी है। प्रमाण :—

(क) "तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन्" इस यजुर्वेद के मन्त्र का भाष्य करते हुए स्वामी जी पंचमहायज्ञविधि (1934) में लिखते हैं—"एष मन्त्रः सृष्टिविद्याविषये व्याख्यातः।" हिन्दी में स्वामी जी इसका अर्थ करते हैं कि "इस मन्त्र का अर्थ भूमिका के सृष्टि-विद्या विषय में कह दिया है।"

(ख) "पितृभ्यः स्वधायिभ्यो नमः" अस्यार्थः पितृ-तर्पणे प्रोक्तः।" यह संकेत भी ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका की ओर है।

(शताब्दी संस्करण—पृ० 787)

इन दो उद्धरणों से विदित होता है कि वर्तमान पंचमहायज्ञविधि (सं 1934 वाली) ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के अनन्तर लिखी गई है क्योंकि "सृष्टि विद्या विषय" तथा "पितृ-तर्पण" प्रकरण "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" में हैं। वहां इन मन्त्रों का अर्थ किया गया है।

स्वामी जी ने सं. 1931 वाली पंचमहायज्ञविधि को क्यों निरस्त किया ?

उल्लिखित विवेचन को दृष्टि में रखते हुए सभा के धर्माधिकारी से पूछना चाहता हूं:—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(1) क्या सभा की घोषणा एवं "सन्ध्या पद्धति' पुस्तक का आधार सं० 1931 में छपी पंचमहायज्ञविधि की ओर है ? 1934 संवत् में लिखी तथा प्रकाशित पंचमहायज्ञविधि की ओर तो ऋषि ने भी अपनी ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में संकेत किया सिद्ध नहीं होता ? सभा के लिए इस प्रश्न का उत्तर देना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। यह तो उभयतः पाश रज्जु है । यदि सभा कहे कि हमने सं. 1934 की "पंचमहायज्ञविधि" को आधार बनाया है तो "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" का उल्लिखित उद्धरण जो उन्होंने प्रमाण रूप में प्रस्तुत किया है, यह बात सिद्ध होने नहीं देता। क्योंकि उस समय इस पुस्तक का अस्तित्व ही नहीं था। (2) यदि सभा सं. 1931 के प्रथम संस्करण को आधार मानती है तो वह भी तथ्य के विपरीत है । क्योंकि ऐसी स्थिति में सभा की "सन्ध्या पद्धति" पौराणिक छायाक्रान्त होती । सं० 1931 एवं सं. 1934 की संशोधित पंचमहायज्ञविधियों की तुलनात्मक, संक्षिप्त विवेचना यहां लिखना विद्वानों को रुचिकर होगा। इससे वे जान सकेंगे कि ऋषिवर ने क्यों संशोधित संस्करण 1934 में निकाला ? जो इस विषय में ऋषि का अन्तिम निर्णय नहीं था।

तुलना

सं. 1931 की पंचमहायज्ञविधि	सं. 1934 की संशोधित पंचमहायज्ञविधि
1. अवैदिक अनेक-परिक्रमा-मन्त्र (वर्तमान अथर्ववेदीय 6 मन्त्र उसमें नहीं)	1. अवैदिक मन्त्रों को हटाकर अथर्ववेदीय 6 मनसा परिक्रमा के मन्त्र।
2. "समर्पण" नहीं था।	2. समर्पण विधि बढ़ाई गई।
3. 'नमः शम्भवाय च." (यजुः) का मन्त्र नहीं है।	3. "नमः शम्भवाय च" मन्त्र अन्त में जोड़ा गया।
4. प्रातःकाल अग्निहोत्र के मन्त्र नहीं थे।	4. सूर्योज्योतिः आदि प्रातः हवन के मन्त्र बढ़ाये गये।
5. सायंकाल के "अग्नि ज्योति" मन्त्र न थे।	5. सायं हवन के मन्त्र जोड़े गये।
6. अवैदिक विस्तृत तर्पण-विधि।	6. तर्पण में भरपूर संशोधन एवं परिवर्तन।
7. यज्ञोपवीत का "सत्यासत्य" विधान।	7. सत्यासत्य विधि सर्वथा हटा दी गई।
8. "जलाञ्जलि" का स्पष्ट विधान।	8. जलाञ्जलि विधान का सर्वथा अभाव।
9. अमर्यादित विस्तृत "अतिथि यज्ञ"।	9. अतिथिमहायज्ञ मर्यादित तथा सुनिश्चित किया गया।
10. अन्त में अवैदिक लक्ष्मी सूक्त था।	10. लक्ष्मी सूक्त को हटा दिया गया।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आजकल जो सन्ध्या आर्य जनता में प्रचलित है वह बहुत कुछ सं. 1934 की पंचमहायज्ञविधि के अनुकूल है। सभा ने जो 'सन्ध्या पद्धति' बनाई है और जिसके अनुष्ठान के लिए सभा की घोषणा है—उसका आधार भी यही पुस्तक है। चाहे उसमें सभा ने मनमाना "प्रक्षेप" भी किया है। जिसका वर्णन आगे किया जायेगा और जिसे आर्य जगत् ने नहीं अपनाया।

सन्ध्या-विधियों में परिवर्तन, परिवर्धन एवं संशोधन तथा ऋषि का अन्तिम निर्णय

ऊपर लिखे विवेचन से पाठकों को ज्ञात हो जाता है कि स्वामी दयानन्द प्रगतिशील चिन्तक एवं सुधारक थे। उन्होंने सन्ध्या जैसे नित्य कर्म की पद्धतियों में समय-समय पर संशोधन किये थे। सं. 1921, 1931 एवं 1934 में जो महान् परिवर्तन एवं संशोधन अपनी पुस्तकों "संध्योपासना" संवत्, 1921, प्रथम 'पंचमहायज्ञविधि" संवत् 1931, द्वितीय संशोधित "पंचमहायज्ञविधि" सं. 1934 में किये उससे वे सन्तुष्ट नहीं हुए थे—इन सब में पुरानी रूढ़िवादिता एवं पौराणिकता की छाप क्रम से घटती गई परन्तु पूर्णरूपेण 'वैदिक" पद्धति न बन सकी थी। संशोधित पंचमहायज्ञविधि (1934 वाली) में भी कुछ न कुछ छाया विद्यमान रही। अतः उन्होंने संस्कार विधि (सं. 1940) में इस विधि का पुनः परिमार्जन, संशोधन, परिवर्धन भरपूर किया और इस विधि को "पूर्ण" वैदिकता प्रदान की। अपनी पुस्तकों में संशोधन करने का अधिकार ग्रन्थकार को स्वतः सिद्ध होता है। अतः उनका ऐसा करना आपत्तिजनक नहीं माना जा सकता। प्रत्युत हमारे लिए वही प्रमाण है।

ऋषि दयानन्द ने अपने प्रचार-काल में अपनी पुरानी कई धारणाओं को बदला था—ऐसा हम ऋषि की जीवन-घटनाओं में स्पष्ट पाते हैं। पहले वे मुक्त आत्माओं का "पुनरागमन" नहीं मानते थे। अन्त में उन्होंने अधिक विचारानन्तर यह धारणा छोड़ कर यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया कि महाप्रलय के अनन्तर मुक्त आत्माएँ भी पुनः जन्म लेती हैं।

ऋषि का अन्तिम निर्णय

पंचमहायज्ञविधि (सं. 1934) से छः वर्ष बाद सं. 1940 में संस्कार विधि लिखी गई और उसके गृहस्थाश्रम प्रकरण में पांचों महायज्ञों का विस्तृत एवं मर्यादित वर्णन किया गया। क्या उन्हें ज्ञात नहीं था कि ये विषय वे पहले लिख चुके हैं—पुनः उन्होंने जो लिखा वह उसमें विशिष्टता, विलक्षणता एवं सर्वांगीणता लाने के लिए ही है। संस्कार विधि में ऋषि ने स्पष्ट आदेश दिया है कि—

(1) पाँच महायज्ञों की जो विधि संस्कार विधि में दी जा रही है (सन्ध्या सहित) उसे ही अपनाया जावे और

(2) इन कर्मों में पढ़े जाने वाले मन्त्रों के अर्थ पंचमहायज्ञविधि में देख लेवें।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मैं नीचे ऋषि के अपने शब्दों को ही, जो उन्होंने संस्कार विधि में सन्ध्या लिखने से पूर्व लिखे हैं, मूल रूप से यहां उद्धृत करता हूँ जिससे पाठक स्वयं जान सकेंगे कि सभा की घोषणा ऋषि आदेश के प्रतिकूल हैं। ऋषि के शब्द हैं—

"सूर्योदय पर्यन्त अथवा घड़ी आध घड़ी दिन चढ़े घर में आके सन्ध्योपासनादि नित्यकर्म नीचे (संस्कार विधि में) लिखे प्रमाण यथाविधि उचित समय में किया करें और इन नित्य करने योग्य कर्मों में लिखे हुए मन्त्रों का अर्थ और प्रमाण पंच-महायज्ञविधि में देख लें।"

संस्कार विधि—गृहस्थाश्रम प्रकरण, पृ. 192, ग्यारहवां संस्करण, अजमेर, सं. 1975)

इसमें स्वामी दयानन्द ने निम्नलिखित स्पष्ट आदेश दिए हैं—

(1) सन्ध्योपासनादि सभी नित्यकर्म "यथाविधि" किये जाने चाहियें केवल सन्ध्या ही नहीं (अग्निहोत्रादि भी)।

(2) ये सभी कर्म (सन्ध्योपासनाग्निहोत्रादि) संस्कारविधि में लिखी विधि के अनुसार ही करने चाहियें (अर्थात् विधिभाग संस्कार विधि के अनुसार होना उचित है।)

(3) मन्त्रों के केवल अर्थ और प्रमाण 'पंचमहायज्ञविधि" में देख लिए जायें।

(4) पंचमहायज्ञविधि का निर्माण संस्कार विधि से पहले हुआ।

सार्वदेशिक सभा का निर्णय ऋषि के उक्त आदेश के विरुद्ध

उल्लिखित ऋषि के निर्णीत आदेश के विरुद्ध सार्वदेशिक सभा की धर्मार्य सभा ने निम्नलिखित आदेश दिया है—

"धर्मार्य सभा के निर्णय के अनुसार महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी कृत पंचमहायज्ञविधि को मौलिक मुख्यता देकर यह पद्धति लिखी गई है। परन्तु पंचमहायज्ञविधि से अवशिष्ट बातें जो सत्यार्थप्रकाश और संस्कारविधि में हैं वे वहाँ से संग्रह करके पद्धति को पूर्णता दी गई है।

अतः यह पद्धति सर्वांगपूर्ण और आर्ष है।"

(प्राक्कथन—वही पुस्तक)

निष्पक्ष पाठक विचारें कि स्वामी जी के निर्णय और सभा के निर्णय में आकाश-पाताल का अन्तर स्पष्ट दीख रहा है। दोनों परस्पर विरुद्ध हैं। स्वामी जी पंच-महायज्ञविधि के विधि भाग को अप्रमाण करार दे रहे हैं—और संस्कार विधि की विधि को मान्यता दे रहे हैं। सभा इससे सर्वथा विपरीत आदेश दे रही है। ऐसा अवांछनीय अति साहस करने पर भी सभा अपनी पद्धति को "सर्वांगपूर्ण" एवं "आर्ष" कह रही है और स्वामी जी द्वारा साक्षात् आदिष्ट विधि को "अपूर्ण एवं अनार्ष" बता रही

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

है। धन्य है यह आत्मश्लाघा ! मैं यह मानने में असमर्थ हूं कि ऋषिवर के आदेश "अपूर्ण" वा अनार्ष हैं और मैं यह भी नहीं मान सकता कि सभा ने ऐसा जानबूझ कर किया हो। सार्वदेशिक सभा (International Aryan League) ऋषि का सम्मान रखने में किसी से पीछे नहीं। उसे ऋषि का आदेश ही मान्य होगा। परन्तु यह निर्णय उचित नहीं। धर्मार्य सभा ने ऋषि-ग्रन्थों की पूर्ण गवेषणा नहीं की और सभा को भ्रांत निर्णय दे दिया।

संस्कार विधि और पंचमहायज्ञ की विधियों की तुलना

ऊपर मैं पहली "पंचमहायज्ञविधि" (सं. 1931 वाली) और द्वितीय पंचमहायज्ञविधि (सं. 1934 वाली) की सन्ध्या-पद्धतियों का तुलनात्मक रेखाचित्र दे चुका हूं। सं. 1921 की सन्ध्योपासना नामक पुस्तक का भी परिचय ऊपर दिया जा चुका है। ऋषि के विचार क्रमिक एवं उत्तरोत्तर संशोधनात्मक होते रहे हैं। वे हठी नहीं थे। स्थितप्रज्ञ का अर्थ हठवादिता नहीं है। सत्य का प्रतिपादन ही उनके जीवन का ध्येय था। अतः उन का न्यायसिद्ध अधिकार था कि व उत्तरोत्तर संशोधन अपने ग्रन्थों में स्वयं करते रहते। इस प्रगतिशीलता और सत्यनिष्ठा को "परस्पर विरोध" या "मत-भेद" कहना हमारी "विवेक शून्यता" है। उन्होंने "परस्पर विरोध" स्वयं नष्ट कर दिया जब उन्होंने संस्कार विधि में जो पंचमहायज्ञ विधि के बाद 6 वर्ष बीतने पर लिखी और उसमें स्पष्ट निर्णय भी दे दिया। अतः ऋषि के लेख 'सर्वांग-पूर्ण" और आप्त होने से सर्वथा आर्ष हैं। कर्मकाण्ड में जो ऋषि ने अभूतपूर्व बौद्धिक क्रान्ति की है—उसकी उपमा संसार में नहीं मिल सकती। उन्होंने "सत्य" के प्रकाश को प्रमुखता दी और रूढ़िवादिता का सर्वथा संवरण कर दिया। यह ऋषि का महान् उपकार है।

अब मैं पंचमहायज्ञविधि (सं. 1934) तथा "संस्कार विधि" (सं. 1940) की सन्ध्या पद्धतियों की जो भिन्नतायें है—उनका संक्षिप्त दिग्दर्शन तुलनात्मक शैली पर करना चाहता हूं :—

(1) पंचमहायज्ञविधि में "गायत्री मन्त्र से शिखा को बांध कर रक्षा करे" ऐसा लिखा है। "ततो गायत्रीमन्त्रेण शिखां बद्ध्वा रक्षां कुर्यात्।"

इसे संस्कार विधि में छोड़ दिया गया है। पौराणिक सन्ध्या में "जलांजलि" से अपने चारों ओर उपासक जल फेंकता है। इसे रक्षा कहते हैं। इस विधि को "संस्कारविधि" में नहीं अपनाया गया। भगवान् जलरेखा के भीतर ही रक्षा नहीं करता वह तो सर्वत्र सर्वदा सरंक्षण देता है। ऐसा भाव ऋषि का प्रतीत होता है।

(2) "संस्कार विधि" मे शन्नो देवी: मन्त्र से पूर्व 'अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा अमृतापिधानमसि स्वाहा सत्यं यशः श्रीर्मयि' इत्यादि तीन मन्त्रों से तीन आचमन करने के अनन्तर अंग-स्पर्श का विधान है। तदनन्तर पुनः "शन्नो देवीः" मन्त्र

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

से तीन आचमन पुनः करने और तदनन्तर "वाक् वाक्" आदि मन्त्रों से अंग-स्पर्श एवं मार्जन का विधान है।

परन्तु पंचमहायज्ञविधि में पहले तीन मन्त्रों से तीन आचमनादि नहीं लिखे। यह "संस्कार विधि" में परिवर्धन हैं।

(3) प्राणायाम तथा अघमर्षण की विधियां और मन्त्र उभयत्र समान हैं।

(4) इसके अनन्तर "शन्नोदेवीः" मन्त्र से तीन आचमन करना दोनों में समान हैं।

(5) "मनसा परिक्रमा" के 6 अथर्ववेद के मन्त्रों के अनन्तर "संस्कार विधि" और "पंचमहायज्ञविधि" की पद्धतियों में मौलिक एवं गम्भीर भिन्नताएँ एक नहीं, अनेक है जैसे :—

(क) "उपस्थान" के मन्त्रों में एक नया ऋग्वेद का मन्त्र जो नीचे लिखा जाता है—"मनसा परिक्रमा" के मन्त्रों के अनन्तर बढ़ा दिया गया है। यह सारा मन्त्र "पंचमहायज्ञविधि" में नहीं है। इस मन्त्र को लिखने से पूर्व और "मनसा परिक्रमा" के मन्त्रों के अनन्तर महर्षि लिखते हैं :—

"मनसा परिक्रमा" के मन्त्रों को पढ़ते जाना और अपने मन से चारों ओर बाहर-भीतर परमात्मा को पूर्ण जानकर निर्भय निःशङ्क उत्साही आनन्दित पुरुषार्थी रहना, तत्पश्चात् परमात्मा का उपस्थान अर्थात् परमेश्वर के निकट मैं और मेरे अतिनिकट परमात्मा है ऐसी बुद्धि करे। मन्त्र यह है :—

जातवदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदनिदहाति वेदः ॥
स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः ॥

(ऋ. 1-99-1)

यह सारा मन्त्र पंचमहायज्ञविधि में नहीं। यहां इस मन्त्र को बढ़ाकर "पंचमहायज्ञविधि" को अपूर्ण ठहराया है।

(6) इसके अनन्तर उपस्थान के अन्य तीन मन्त्रों का जो क्रम पंचमहायज्ञ-विधि में लिखा है, उसे संस्कारविधि में बदल दिया गया है। ऋषि को पंच-महायज्ञविधि का मन्त्रक्रम उचित प्रतीत नहीं हुआ। उन्होंने गहन मीमांसा के फल-स्वरूप उस क्रम को बदल दिया है। केवल क्रम ही नहीं बदला प्रत्युत एक मन्त्र "चित्रं देवानाम्" का स्रोत बदल कर मन्त्र भी भिन्न कर दिया है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

देखिए :—

पंचमहायज्ञविधि का क्रम	संस्कार विधि का क्रम
1. "उद् वयं तमसस्परि" इत्यादि (यजु० 35—14)	1. "चित्रं देवानाम्" इत्यादि (यजु० 11—46)
2. उदुत्यं जातवदसम्" इत्यादि (यजु० 33—31)	2. "उदुत्यं जातवेदसम्" इत्यादि (यजु० 33—31)
3. चित्रं देवानाम्" इत्यादि (यजु० 7—42)	3. "उद् वयं तमसस्परि" इत्यादि (यजु० 32—14)

यहाँ ध्यान देने योग्य एक परिवर्तन यह भी है कि इन मन्त्रों में "चित्र देवानाम्" मन्त्र ऋषि ने यजुर्वेद के 7—42 का पंचमहायज्ञविधि में लिखा है। जिसके अन्त में "स्वाहा" पढ़ा जाता है। परन्तु संस्कार विधि में यही मन्त्र स्वामी जी ने 7—42 से न लेकर (यजु० 11—46) से लिया है। यजु० 11—46 के मन्त्र के अन्त में "स्वाहा" शब्द नहीं है। स्वामी जी का यह परिवर्तन सर्वथा उचित है। "स्वाहान्त" मंत्र तो "अग्निहोत्र" में पढ़ा जाना होता है, "संध्योपासना" में नहीं। यहाँ कोई अग्नि में आहुति नहीं दी जाती जिसके लिए "स्वाहान्त" मन्त्र स्वामी जी रखते।

यदि यहाँ मन्त्रों के वैदिक क्रम को देखें या इन मंत्रों की गहन मीमांसा करें तो संस्कार-विधि का क्रम ही अधिक युक्तियुक्त प्रतीत होता है। व्याकरण की दृष्टि से भी "तमप्" (उत्तर-उत्तम) प्रत्यय ही अंतिम होता है। इन मन्त्रों के अर्थों का विवेचन यहाँ अभीष्ट नहीं। स्वामी जी ने अपनी संध्या में स्वयं संशोधन—परिवर्तन किये हैं, वे हमें मान्य होने चाहियें।

(7) पंचमहायज्ञविधि में गायत्री मन्त्र से पूर्व "शन्नो देवी:" मंत्र से तीन आचमनों का विधान नहीं। परन्तु संस्कार विधि में यहाँ पुनः इस मंत्र से तीन आचमनों का विधान है।

(8) गायत्री मंत्र के अनन्तर पंचमहायज्ञविधि में "समर्पण" शीर्षक देकर समर्पण का संस्कृत वाक्य लिखा है। परन्तु "संस्कार विधि" में ये दोनों चीजें हटा दी गई हैं। उसके स्थान पर हिन्दी में इतना ही लिख दिया है—"हे परमेश्वर दयानिधे, आपकी कृपा से जपोपासनादि कर्मों को करके हम धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की सिद्धि को शीघ्र प्राप्त करें।"

ऋषि ने यहाँ संस्कृत वाक्य इसलिए हटाया प्रतीत होता है कि भविष्य में यह संस्कृत वाक्य "वेदवाक्य" ही बन कर संध्या का अंग ही न बन जाये। इस से यह भी बताया गया है कि प्रार्थना हिन्दी में भी हो सकती है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(9) पंचमहायज्ञविधि तथा सभा की पद्धति में "नमः शम्भवाय च" इत्यादि मंत्र के अनन्तर आचमन नहीं लिखा। परन्तु संस्कार विधि में यहाँ भी "शन्नो देवीः" मंत्र से तीन आचमन करना लिखा है।

उपसंहार

विज्ञ पाठकों को इतना पढ़ लेने के बाद ज्ञात हो जाएगा कि संस्कारविधि और पंचमहायज्ञविधि की पद्धतियों में मौलिक, आधारभूत, अनुपेक्षणीय एवं महत्वपूर्ण भिन्नतायें हैं। इन अनेकों भिन्नताओं और परिवर्तन-परिवर्धनों को आनुषङ्गिक नहीं माना जा सकता। ऋषि दयानन्द सत्य के पक्षपाती साक्षात् कृतधर्मा आप्त पुरुष थे। जब उन्होंने स्वयं कह दिया कि "संस्कार विधि" को ही अपनाया जावे और पंचमहायज्ञविधि से केवल मंत्रों के अर्थ जान लिये जावें, कोई सन्देह का स्थल ही नहीं रहता। मैं स्वामी जी के शब्दों को पुनः नीचे उद्धृत करता हूं, जो उन्होंने संस्कार-विधि में स्पष्ट लिख कर निर्णय दे दिया और सन्देह या मत-भेद की बात नहीं रहने दी।

वे लिखते हैं :—

"सूर्योदय पर्यन्त अथवा घड़ी आध घड़ी दिन चढ़े तक घर में आके संध्योपासनादि नित्यकर्म नीचे (संस्कार विधि में) लिखे प्रमाणे यथाविधि उचित समय में किया करें। इस नित्य करने योग्य कर्मों में लिखे हुए मन्त्रों का अर्थ और प्रमाण पंचमहायज्ञविधि में देख लेवें।

(देखिये 'संस्कारविधि' पृष्ठ 192 ग्याहरवां संस्करण, अजमेर)

एक विद्वान् ने मुझ से एक बार कहा कि "आपको एक यह वाक्य स्वामी जी का लिखा मिल गया है। उसी की रट लगाते जाना ठीक नहीं। मैं ऐसे तार्किकों से कहना चाहता हूं कि ग्रन्थकार अपने निर्णय को बार-बार नहीं दुहराता। एक बार दिया हुआ आदेश या निर्णय क्या अप्रमाण हो जाता है? निर्णय निर्णय ही होता है और वह एक बार ही किया जाता है। बार-बार कहना तो "पिष्ट पेषण" मात्र रह जाता है। हां, यदि कोई यह कह डाले कि स्वामी जी ने यह निर्णय गृहस्थाश्रम प्रकरण में किया है और यह निर्णय "गृहस्थों" के लिए है, अन्यों के लिए नहीं, तो मैं ऐसे लोगों को कहूंगा कि वे संस्कार विधि में लिखा "वेदारम्भ" संस्कार देखें जहां ब्रह्मचारी को भी यही आदेश दिया गया है कि वे संस्कार विधि में लिखी सन्ध्या विधि के अनुसार सन्ध्या करें। स्वामी जी लिखते हैं :—

(क) "तत्पश्चात् बालक पूर्व रखी हुई भिक्षा का भोजन करें। पश्चात् सायंकाल तक विश्राम और गृहाश्रम संस्कार में लिखी सन्ध्योपासना आचार्य बालक के हाथ से करावें।।"

(संस्कार विधि पृष्ठ 94)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(ख) "आचार्य ब्रह्मचारी को प्रतिज्ञापूर्वक समीप रख के तीन रात्रि पर्यन्त गृहाश्रम प्रकरण में लिखे सन्ध्योपासनादि सत्पुरुषों के आचार की शिक्षा करें .....)

(वही पुस्तक, पृष्ठ 96)

सभा द्वारा प्रक्षेप

अन्त में मैं विचारकों का ध्यान सभा द्वारा सम्पादित 'सन्ध्या पद्धति" की ओर पुनः खींचना चाहता हूं। इस में सभा ने एक ऐसी विधि का प्रक्षेप (Inter Polation) अपनी ओर से कर दिया है कि जिसका विधान न पंचमहायज्ञविधि और न संस्कार विधि में है। इस प्रक्षिप्त विधि को ऋषिवर पर डालना सर्वथा अन्याय है। सभा चाहे तो कोई भी अपनी नवीन विधि बना सकती है। परन्तु उसे यह अधिकार प्राप्त नहीं कि वह स्वामी जी के नाम पर उनकी पद्धति में मिलावट या प्रक्षेप करे। यह विधि "संकल्प" की है ("ओं तत्सत् श्री ब्रह्मणो द्वितीय प्रहरार्धे..." इत्यादि) इसे प्रारम्भ में पढ़ने के लिए सभा ने आदेश दिया है।

इस "संकल्प पाठ" को ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका का हवाला देकर इसे "विधि" बना दिया गया है। मैं पूछना चाहता हूं कि क्या लेखक महोदय "ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका" या स्वामी जी के किसी अन्यत्र भी लिखे लेख से प्रमाणित कर सकते हैं, कि "ऋषि ने सन्ध्याविधि में इसका पढ़ना लिखा है। यदि यह बात होती तो स्वामी दयानन्द ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के बाद में लिखे गये ग्रन्थों (पंचमहायज्ञविधि, संस्कार विधि आदि) में इसका विधान क्यों न करते ?

स्वामी दयानन्द ने तो ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में सृष्टि संवत् की परम्परागत सत्यता एवं ऐतिहासिकता सिद्ध करते हुए इस परिगणना को अकाट्य तथ्य सिद्ध किया है। इससे सृष्टि संवत् की अति प्राचीनता मात्र सिद्ध की है। उन्होंने कहीं भी अपने विशाल साहित्य में यह नहीं लिखा है कि संकल्प पढ़ना विधि-भाग है। यही नहीं, संस्कारविधि में सोलह संस्कार लिखे हैं (पंचमहायज्ञों के अतिरिक्त)। कहीं भी संकल्प पढ़ने की विधि का विधान नहीं किया। यहां तक कि विवाह प्रकरण में जहां कन्यादान के समय अन्य साम्प्रदायिक विवाह पद्धतियों में संकल्प पढ़ा जाता है वहां भी ऋषि दयानन्द ने इसे नहीं लिखा। केवल इतना वाक्य लिख दिया "इमां कन्यां यथा शक्त्यलंकृतां प्रति-गृह्णातु भवान्" संकल्प नहीं लिखा।

सभा को ऐसी अनुचित अनधिकार चेष्टा करके स्वामी दयानन्द के ग्रन्थों में "प्रक्षेप" नहीं करना चाहिये। इससे साहित्य की शुद्धता, पवित्रता एवं प्रामाणिकता धीरे-धीरे नष्ट हो जाती है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मैंने यह आलोचना किसी विरोध या मतभेद के कारण नहीं लिखी। अब विश्वविद्यालयों में "दयानन्द पीठों" की स्थापना हो गई है जो सर्वथा प्रशस्य है। अतः महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों का विश्लेषणात्मक अध्ययन वैदिक स्वाध्याय के लिए आवश्यक है। सभा से प्रार्थना करूंगा कि वह स्वामी जी के भावों को समझने का प्रयत्न करे। सार्वदेशिक सभा देश की मूर्धन्य संस्था है उसने ऋषि के विचारों का प्रसार करने में महान् प्रयत्न किया है। इसकी मैं प्रशंसा करता हूं। सभा सत्य को समझे। ऋषि को "अपूर्ण" न कहे। दोष हमारा है जो हम उन्हें समझने का यत्न नहीं करते।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ईश्वर क्या है ?

—सुमेधा

ईश्वर क्या है ? उसका स्वरूप क्या है ? ऐसे कितने ही प्रश्न मन-मस्तिष्क को आंदोलित किये रहते हैं। मनुष्य जब संसार में आता है तब अपने से बड़ों को किसी न किसी की पूजा-अर्चना करते देखता है, कुछ बड़ा होने पर पड़ौसियों को भी पूजा करते पाता है। किन्तु जब वह अपने घर और पड़ौसी के घर के भगवान में अन्तर देखता है तब उसके मन में शंका उठती है कि भगवान एक है या अनेक। ज्यों-ज्यों हम सोचते हैं, यह शंका उग्र रूप धारण करती जाती है धीरे-धीरे यह शंका और भी उग्ररूप में धारण करती जाती है।

हर व्यक्ति के सोचने का अपनी ढंग ही होता है। अगर वह स्वतन्त्र रूप से सोच नहीं सकता तथा और किसी के सोच के अनुकरण को ही अपने सोचने विचारने तक सीमित कर लेता है तो उसका सोच, सोच न रहकर अनुकरण मात्र ही रह जाता है। ईश्वर के विषय में भी विभिन्न विद्वानों ने, अपने बुद्धि चातुर्य से लिखने बोलने का यथा संभव प्रयास किया है। पुरातन काल से चली आ रहीं सैकड़ों पुस्तकों में ईश्वर के स्वरूप को बहुत सुन्दर रूप में प्रस्तुत किया गया है। सभी ने अपने-२ ढंग से ईश्वर और उसकी सत्ता को अपनी लेखन प्रतिभा से नवीनतम रूप में दर्शाने का प्रयास किया है। हम भी सोचते हैं देखते हैं तो यह आभास होता ही है कि कोई न कोई शक्ति अवश्य है जो इस सकल ब्रह्माण्ड का इतने सुचारू रूप से संचालन करती है। उसी शक्ति को जानने का समझने का प्रयत्न मनुष्य स्वाभाविक रूप से करता ही रहता है।

विज्ञान के क्षेत्र में मनुष्य बहुत उन्नति कर चुका है। कहां तो एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिए अनगिनत कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था और कहाँ अब पृथ्वी से करोड़ों मील दूर अन्य ग्रहों पर मनुष्य पहुंच रहा है। किन्तु इतनी उन्नति के पश्चात् भी आधुनिक वैज्ञानिक ईश्वर को उस रूप में कभी पा सकेगा जिस रूप में वह पाना चाहता है यह एक प्रश्न है, जिसका उत्तर सरल नहीं।

ईश्वर के साकार रूप की पता नहीं किसने खोज की होगी ? वह साकार रूप

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कैसे हो सकता है। साकार रूप नश्वर होता है किन्तु ईश्वर न जन्म लेता है, न मरता है, न खाता है, न पीता है, वह अपने सर्वव्यापक रूप में अलग-अलग एक विशिष्टता लिए विद्यमान है, इससे स्पष्ट है कि ईश्वर साकार तो हो नहीं सकता। निराकार को साकार रूप नहीं दिया जा सकता। 'प्रत्यक्ष किं प्रमाणम्' के अनुसार हम प्रत्यक्ष में ही देखते हैं कि क्या हवा को कोई मूर्त रूप दिया जा सकता है? जल आकार हीन है तो क्या उसे कोई आकार दिया जा सकता है। हाँ, इतना अवश्य है कि यदि जल को किसी में डाला जाये तो उस पात्र का रूप ही जल का रूप लगेगा। समुद्र, नदी, नाले, झील, झरने सभी इस बात का प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। ठीक यही स्थिति ईश्वर के स्वरूप की है। ईश्वर एक है किन्तु उसके रूप अनेक हैं। महर्षि दयानन्द ने ईश्वर के स्वरूप का कितना स्वाभाविक सुन्दर, सर्वग्राही चित्रण किया है आर्य समाज के दूसरे नियम में—

"ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा अनन्त निर्विकार, अनादि अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक सर्वान्तर्यामी अमर नित्य और पवित्र सृष्टिकर्ता है उसी की उपासना करनी योग्य है।

सपर्यगाच्छुक्रम कायम व्रणम स्नाबिर शुद्धम पाप बिद्धम।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथानथ्यतोरर्थान व्यदथाच्छावतीय
यजु० अ० ४० म० ८

ईश्वर के इसी स्वरूप को यजु० में निम्न रूप से स्पष्ट किया है——

अर्थात् वह परमेश्वर सर्वव्यापक और अनन्त बलवान् जो शुद्ध सर्वज्ञ, सर्वान्तर्यामी, सर्वोपरि विराजमान सनातन स्वयं सिद्ध परमेश्वर अपनी जीवरूप सनातन अनादि प्रजा को 'अपनी' सनातन विद्या से यथावत् अर्थों का बोध वेद द्वारा कराता है यह 'सगुण स्तुति' अर्थात् जिस २ गुण सहित परमेश्वर की स्तुति करना वह सगुण तथा (अव्याय) अर्थात् वह कभी शरीर धारण नहीं करता व जन्म नहीं लेता, जिसमें छिद्र नहीं होता, नाड़ी आदि के बन्धन में नहीं आता और कभी पाया चरण नहीं करता, जिसमें क्लेश दुःख कभी नहीं होता इत्यादि जिस जिस द्वेषादि गुणों से पृथक मानकर परमेश्वर की स्तुति करना वह 'निर्गुण स्तुति है। इसका फल यह है कि ईश्वर के गुण के समान ही अपने गुण कर्म स्वभाव करना। हां जो केवल भांड के समान भजन गुण कीर्तन आदि करता है और अपने चरित्र को नहीं सुधारता है और उसका परमात्मा की स्तुति करना बिल्कुल व्यर्थ है।

ईश्वर के व्याख्या योग दर्शन में ईश्वर के गुणों की विशेषता बताते हुए लिखा है—

क्लेश कर्म विपाकाशयै परा भ्रष्ट पुरुष विशेष अविद्यादि क्लेश, कुशल-अकुशल

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इष्ट-अनिष्ट ईश्वर: और मिश्र फलदायक कर्मों की वासना से रहित है, वह सब जीवों से बिशेष ईश्वर है।

इन सभी व्याख्यायों परिभाषाओं को देखते हुए यह तो स्पष्ट ही है कि ईश्वर समस्त सृष्ट से भिन्न है। वह सर्व नियन्ता है। सम्पूर्ण जगत उसकी अंगुली के संकेत पर नर्त्तन करता है। वह सर्वाधार है—समस्त ब्रह्माण्ड, सूर्यचन्द्र सभी का आधार स्वरूप है। किन्तु उसको इन्द्रियों द्वारा नहीं जाना जा सकता। वह इन्द्रियों का विषय न होकर आत्मा का विषय है। देखिए यजु० के इस मन्त्र में—

आत्मा नात्मानमभि संविवेष : यजु० जीवात्मा के द्वारा ही परमात्मा को जाना जा सकता है।

किसी कवि ने कितना सुन्दर कहा है—

हंस के दुनिया में मरा कोई, कोई रोकेमरा।
जिन्दगी पाई मगर उसने, जो कुछ हो के मरा॥
जी उठा मरने से वह, जिसकी प्रभु पर एक नजर।
जिसने दुनिया ही को पाया था, वह सब खोके मरा॥

किन्तु 'जिन खोजा तिन पाईयां' इस सूक्ति के अनुसार ईश्वर की खोज करने वाले कुछ न कुछ अधिक ज्ञान प्राप्त करते ही रहते हैं और यही ज्ञान वृद्धि उनके जीवन को कल्याणकारी बनाने में सहायक सिद्ध होती है।

आज हम देखते हैं सर्वत्र फैलते नास्तिकतावाद को, तो सोचने पर विवश होना पड़ता है, कि क्या कारण है इस नास्तिकता यों इतनी तीव्र गति से अपने घेरे में फँसाता रहा है मनुष्य के हृदय को। तब हम पाते हैं कि इसका मूल कारण हैं भगवानों की बढ़ोत्तरी। जिसके कारण मनुष्य ईश्वर से विश्वास हटता जा रहा है।

यदि हमें फिर से सतयुग लाना है, यदि ईश्वर के प्रति विश्वास जगाना है तो हमें कलियुग के स्वयं भगवानों की असलियत से लोगों को अवगत करना होगा।

तभी हम सच्चे ईश के सच्चे उपासक कहलायेंगे।

अपने क्षेत्र में भारत रक्षा समिति बनाकर

शराब, गुंडागर्दी, भ्रष्टाचार, सांप्रदायिकता के विरुद्ध युद्ध घोषणा करो

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मूल्य २०) किन्तु ८ जून तक
१५) में मँगाएँ

सत्यार्थ प्रकाश

१२५) सैंकड़ा

सत्यार्थ प्रकाश

२५०) सैंकड़ा

दोनों एक साथ बराबर मंगाएँ

५०—५० से अधिक नहीं मिलेंगे

आज ही आदेश भेजें

दयानन्द संस्थान, वेद मंदिर दिल्ली-३६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—नरेन्द्रपाल

सच ही कहा : सच पर डटा

विद्यालय की छठी कक्षा में गुरुजी खड़े एक सवाल का सही हल निकालने की चेष्टा कर रहे थे। उन्होंने पहली बार प्रयास किया किन्तु बात न बनी, फिर कोशिश की किन्तु परिणाम न निकला। अब गुरुजी ने तीसरी बार पुनः अपनी बुद्धि के सारे घोड़े दौड़ाये किन्तु फिर भी वे प्रश्न का हल न खोज पाए। अंत में अपनी असफलता को छिपाने का उपाय उन्होंने यह खोजा कि छात्रों से बोले 'बालको कल तुम इस सवाल को घर से लगाकर लाना।

उन्होंने अपने मन में यह सोचा था कि चलो आज की घड़ी तो टल गई। छात्रों के सामने अपनी भद्द नहीं पिटी। अब आज भर का समय निकल जाएगा। हिसाबी-किताबी से यह सवाल लगाकर कल छात्रों के सामने आयेंगे और इस सवाल को हल करके दिखायेंगे और अपनी धौंस जमायेंगे।

रात बीती दूसरा दिन आया। गुरुजी और छात्र गत दिवस के समान कक्षा में उपस्थित थे। गत दिवस उन्होंने किसी सयाने से सवाल का हल जान लिया था। अतः बड़े रौब से बोले 'सवाल हल करके लाए ?'

छात्रों का समवेत स्वर गूंज उठा 'गुरुजी हम सब सवाल नहीं लगा सकते।'

गुरुजी ने सोचा चलो अब तो हम अपनी बुद्धिमत्ता के झंडे गाड़ ही दें और विद्वत्ता का रौब झाड़ ही दें। वह मुस्कराते हुये बोले 'अरे तुम सभी निरे बुद्धू हो। यह आसान सा सवाल भी नहीं लगा सके।'

किन्तु इसी बीच बालकों में से एक का स्वर गूंजा 'गुरुजी मैंने यह प्रश्न हल कर लिया है।'

गुरुजी चौंके और सकपकाते हुये बोले 'जरा दिखाओ तो। बता कि कहां हल खोजा है ?

छात्र ने अपनी अभ्यास पुस्तिका गुरुजी की ओर बढ़ा दी। उन्होंने प्रश्न और उसका सही हल देखा तो अवाक् रह गए किन्तु तभी अपनी नाक ऊंची रखने के लिए बोले 'यह हो ही नहीं सकता कि यह सवाल

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

तुमने स्वयं लगा दी हो। तुम्हारे पिता जी शिक्षक हैं न ! तुमने उन्हीं से लगवाया होगा।'

किन्तु बालक ने बड़े विश्वास की मुद्रा में उत्तर दिया 'नहीं गुरुजी मैंने इस प्रश्न का हल खोजने में अपने पिताजी से तो क्या, किसी से भी सहायता नहीं ली।'

बालक को यह आत्मविश्वास पूर्ण स्वर सुनते ही गुरुजी क्रोध से तमतमा उठें और बोले 'प्रलाप बन्द करो। तुम झूठ बोल रहे हो। जाओ अपने स्थान पर जाकर खड़े हो जाओ।'

किन्तु बालक तो था असाधारण वह बोल उठा 'मैं इस दंड को स्वीकार नहीं करूंगा। क्योंकि मुझे बिना किसी अपराध के ही दंड सुना दिया गया है। मैंने जो कुछ कहा है सच-सच कहा है।'

बालक के इन शब्दों ने तो गुरुजी की क्रोधाग्नि में घी का काम किया और वह छात्र को पकड़ कर प्रधानाध्यापक महोदय के पास लिवा ले गए। उन्होंने बालक की तथाकथित धृष्टता की कहानी प्रधानाध्यापक महोदय को सुनाई तो भी बालक ने निर्भीकतापूर्वक कहा 'नहीं श्रीमान् यह सवाल मैंने ही हल किया है। अपने पिता जी से मैंने कोई सहायता नहीं ली।'

विचारशील प्रधानाध्यापक महोदय बोले 'इस बालक के पिता जी से ही पूछ लिया जाये। सत्यता सामने आ जाएगी। यदि इसका कथन झूठा हुआ तो इसे नितांत कठोर दंड दिया जायेगा।

अतएव विद्यालय के कर्मचारी को उस 'बालक' के घर भेजा गया और उसके पिता श्री गंगाधर को बुलवाया गया। जब पिता ने भी बालक के कथन की ही पुष्टि की तो शर्म के मारे गुरु जी तो पानी-पानी हो ही गए प्रधानाध्यापक महोदय का माथा भी लज्जा से झुक गया।

बालको, जानते हो यह बालक कौन था ? यह थे निर्भीक और दृढ़ संकल्पी बालगंगाधर तिलक। वही तिलक जिन्होंने कांग्रेस के मंच से सबसे पहले यह नारा गुंजाया 'स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और हम उसे प्राप्त करके रहेंगे।'

उसी बालक की निर्भीकता ने देशवासियों को निर्भीकता का मंत्र प्रदान किया।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कहानी

उत्तम और ध्रुव

पौराणिक कहानी है। हमें भी सुनाई थी हमारी नानी ने। शायद आपको भी आपके परिवार के किसी बड़े ने सुनाई हो। यह कहानी है एक बालक की। उसका नाम था ध्रुव। राजा का बेटा था—राजकुमार। उसके पिता का नाम था उत्तानपाद। उत्तानपाद की थीं दो रानियां। इनमें से एक थी ध्रुव की माता। उनका नाम था सुनीति। और दूसरी थी रानी सुरुचि। राजा जी को दोनों रानियों से एक एक बेटा जन्मा था। ध्रुव का नाम तो पहले बताया ही जा चुका है। दूसरी रानी अर्थात् सुरुचि की कोख से जन्मे पुत्र का नाम था उत्तम। सुरुचि और सुनीति दोनों के लाड़ले बड़े होने लगे। एक दिन की बात है कि ध्रुव ने अपने पिता की गोदी में बैठने का उपक्रम किया। बस फिर क्या था विमाता सुरुचि का पारा चढ़ गया। परिणाम जो होना था वही हुआ। उसने महाराजा उत्तानपाद को भड़काया और अपने ही बेटे उत्तम को युवराज बनाने के लिए ऐसे पासे फेंके कि बेचारे ध्रुव और उसकी माता को राजमहल छोड़ कर जाना पड़ा। राजकुमार ध्रुव ने सांसारिक सुखों का मोह छोड़कर जनसेवा का व्रत धारण कर लिया और अन्ततोगत्वा उसे विष्णुपद प्राप्त हो गया। नानी ने आकाश में एक तारे को दिखाकर अनेक बार बताया है कि देखो बेटे वह रहा ध्रुव। उसका चक्कर लगाने वाले सात तारे हैं और उन्हें सप्तर्षि मंडल बताया था उन्होंने।

इस कहानी को बालकपन से लेकर किशोरावस्था तक न जाने कितनी बार सुना-सुनाया है। नानी ने सुनाया तो दादी माँ ने भी दोहराया। गगन में चमकते तारे को देखकर बालकपन में तो इन्सान के नक्षत्र बन जाने की बात समझ में न आई, किन्तु अब जब बुद्धि लगाता हूं तो कुछ कुछ अर्थ समझ पाता हूं।

जो कुछ समझ में आया है, वही बता रहा हूं। राजा उत्तानपाद कौन है? यह विचारता हूं तो लगता है कि उत्तानपाद अर्थात् सिर नीचे और पैर ऊपर वाली स्थिति मानव मन की ही है। जो न जाने कितने कितने ऊंचे सपने लेता है। और इसकी मुद्रा शीर्षासन रत शरीर सरीखी हो जाती है। इस मन की ही दो वृत्तियाँ है सुरुचि और सुनीति। उत्तानपाद की दो पत्नियाँ। सुरुचि जन्म देती है उत्तम को और सुनीति ध्रुव की छात्री है। तात्पर्य यह है कि सुरुचि यह वृत्ति-मानव को प्रेरित करती है कि वह अच्छा भवन, अच्छा उपवन, अच्छा वाहन हो। ऊंचा और आलीशान महल इस कल्पना के वशीभूत और उसे साकार करने के लिए

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शाही इमाम : नया पंतरा

इन्सान न जाने कितने पापड़ बेलता है। इसकी प्राप्ति के लिए वह न जाने कौन-कौन से पापड़ बेलता है और जब उत्तानपाद मन को केवल सुरुचि ही भा जाती है तो सुनीति नजर से उतर जाती है। तात्पर्य यह है कि सुरुचि जन्म आकांक्षाओं को साकार करने के लिए मन बेचारा सुनीति को बिसार देता है। सुरुचि पुत्र उत्तम ही उसका युवराज हो जाता है। ऐसी अवस्था में मन सुनीति को वनवास दे देता है। जब जननी ही नहीं भाती तो उसका जाया भी भला किसी को भाया है। किन्तु सुरुचि का जाया उत्तम अमरत्व नहीं पाता। जो कुछ भी आज उत्तम है वह कल पिछड़ जाता है और उससे भी उत्तम कुछ और होने लगता है।

किन्तु स्थायित्व उसमें नहीं होता। वह तो उसी कार्य में हो सकता है, जिसकी जननि सुनीति हो। अर्थात् सुनीति ही परोपकार, पुण्य और परसेवा इत्यादि के कार्यों की जननि है। जब सुनीति मन में भा जाती है मानव जो कुछ भी करता है वह स्थायी होता है। किन्तु उस बात के लिए अनेक प्रकार के कष्टों का वरण करना पड़ता है। अनेक बार सुनीति पथ गामी व्यक्ति के ऐसा भी अनुभव आता है कि जैसे वह सर्वथा एकाकी है। कई प्रकार के ताने बाने भी कोरे सुरुचि के चेरे उसके विरुद्ध बुनते हैं। किन्तु सकल आपदाओं और विपदाओं को सहन करके भी जो सुनीति के श्री चरणों में समर्पित रहता है वही ध्रुव बन जाता है। तात्पर्य नितांत स्पष्ट है की सुनीति जन्य कार्य ही मनुष्य की कीर्ति कौमुदी को स्थायित्व प्रदान कर सकते हैं और मानव मात्र के कल्याण के लिए कार्यरत रहने वाला व्यक्ति ही परम पिता परमात्मा के प्रति अनन्य निष्ठावान हो सकता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कहानी

—अरविन्द

दया का सुफल

एक था गांव। उसमें रहते थे एक सेठ जी। नाम था उनका रामनाथ। थे तो उस गांव में और भी कई धनी मानी परन्तु रामनाथ तो धन के पति ही थे।

एक दिन तीन चोरों ने सेठ धनपतराय के घर में चोरी करने की योजना बनाई। जब सेठ जी के परिवार के सभी सदस्य सोए हुए थे तो तीनों चोर सेठ के घर में घुस आए और सारा माल साफ कर गए।

रामनाथ को सवेरा होने पर अपने लखपति से खाकपति हो जाने का भान हुआ। रोए और सिर धुना। अंततः पुलिस स्टेशन पहुंचे और अपने यहां चोरी होने की रपट दर्ज कराई।

रामनाथ धनवान तो थे ही साथ ही दयालु भी थे। कबूतरों व अन्य पक्षियों को वह नित्य प्रति थोड़ा बहुत दाना अवश्य डालते थे। कबूतर भी उसे भली भांति पहचानते थे।

प्रति दिन के समान आज ज्यों ही वह कबूतरों के पास पहुंचे तो उनके नेत्रों में आंसू आ गए। वह कभी प्रसन्नता से इन कबूतरों को दाना डालने यहां आते थे, किन्तु आज तो उनके दुःख की कोई सीमा ही नहीं थी। बड़े परिश्रम से कमाया हुआ धन एक ही रात में गायब हो गया था और रामनाथ सेठ खाली हाथ थे।

सेठ रामनाथ को मौन देखकर शायद कबूतरों ने भी ऐसा होने का कारण भांप लिया और वह जोर-जोर से अपने पंख फड़फड़ाने लगे। थोडी ही देर में वे आकाश में पंख फैलाकर उड़ने लगे।

ये कबूतर उड़ते उड़ते सहसा ही एक बड़े से टीले पर बैठ गए। सेठ रामनाथ भी चलते चलते उनके पास जा पहुंचे। वहां का दृश्य उन्होंने देखा तो उनके नेत्र फटे के फटे रह गए।

सामने के टीले पर चोरों को घेरे कबूतर घेरा लगाए थे। पास में ही माल पडा जो उन्होंने सेठ रामनाथ के घर से चुराया था। कहा जाता है कि चोरों के पाँव नहीं होते। उन्हें ज्यों ही सेठ रामनाथ समीप आते दिखाई दिए वे चोर भाग खड़े हुए। क्योंकि उन्हें ऐसा लगा कि शायद सेठ रामनाथ के पीछे पीछे पुलिस भी उनकी खोज में वहां आ रही होगी। चोरों के भाग निकलने पर सेठ रामनाथ को अपनी वर्षों की कमाई पुनः प्राप्त हो गई।

वास्तव में उनकी दयावृत्ति ही उनके काम आई, जिसने कबूतरों में भी उनके प्रति अपनापन पैदा कर दिया था और उनके आंसू ये कबूतर बेचारे न झेल पाये और आखिरकार सेठ रामनाथ के काम आए।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बाल कथा :

धर्म मार्ग का पथिक

आज्ञा प्रदान करो माँ कि मैं पीड़ित मानवता को सत्य मार्ग दर्शन हेतु संन्यास ग्रहण कर सेवा के पथ पर आगे बढ़ सकूं।" एक किशोर यह अनुरोध कर रहा था अपनी माता से।

माता ने सुना तो क्षण भर के लिए हतप्रभ रह गयी। किन्तु तभी उस उदारमना देवी के हृदय देश के कोटि-कोटि जन की हित कामना का विचार उदित हुआ और वह बोली।

'पुत्र ! तुम जा सकते हो, कल्याण पथ का अनुगमन कर सकते हो। किन्तु मुझे एक आश्वासन प्रदान करना होगा 'कि मृत्यु के समय तुम मेरे शव को कंधा दोगे।" किशोर ने स्वीकृति में शीश झुका दिया।

० ० ०

उस ममतामयी देवी का देहांत हो गया था और एक तरुण संन्यासी भी शव को कंधा देने हेतु उपस्थित हुआ। उसे कुछ लोगों ने कहा कि संन्यासी द्वारा शव को कंधा दिया जाना, संन्यास धर्म के विपरीत है। संन्यासी के लिए सांसारिक धर्म का निर्वाह करना उचित नहीं है।

वह युवा संन्यासी इन सारी वर्जनाओं की उपेक्षा करते हुए बोला:—

"अन्तर की पावन अनुभूतियों और कर्म की पावनता का बोध ही धर्म, रुढ़ियों से धर्म का कोई नाता नहीं है। आज हम रुढ़ियों की श्रृंखलाओं में आबद्ध होकर कर्त्तव्य पथ से डिग रहे हैं। हमारी जाति एवम् देश का पतन हो रहा है। काश हमारा देश धर्म के पथ का अवलम्बन कर सके।"

० ० ०

और एक दिन यही युवा संन्यासी एक धनकुबेर के द्वार पर जा पहुंचा। उसने कहा 'भिक्षां देहि।" यह स्वर सुनते ही धनकुबेर नंगे पैर ही दौड़ता आया। उसे आश्चर्य था कि धनपतियों के द्वार पर कभी भी न पहुंचने वाला वह संन्यासी सहसा ही उसके गृह को किस प्रकार पावन

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कर रहा है। वह संन्यासी को सादर अपने घर के भीतर लिवा ले गया और षट्रस व्यंजन परोस कर संन्यासी से उन्हें ग्रहण करने की प्रार्थना की।

और उधर संन्यासी के नेत्रों से अश्रुधारा प्रवाहित हो उठी और वह बोला 'तुम्हारे इस महल के समक्ष एक ब्राह्मण परिवार तीन दिन से भूखा तड़फ रहा है। श्रेष्ठी ! और तुम धर्मनिष्ठ होने का दावा करके भी उस बेचारे की चिन्ता न करते हुए षट्रस व्यंजन ग्रहण कर रहे हो।"

संन्यासी ने यह भी कहा "जब तक इस ब्राह्मण परिवार का उपवास नहीं टूटता, मैं भी तुम्हारे यहां अन्न जल ग्रहण न करूंगा।"

उस श्रीमंत को धर्म का मर्म समझ आ गया। उसने तुरंत अपने कर्मचारियों को भेजकर ब्राह्मण परिवार को भोजन तो कराया साथ ही धन धान्य से भी उसका भंडार भर दिया और संन्यासी भी भाव विभोर हो गया तथा अन्न का कौर मुख में डालते हुंए उसके नेत्र सजल हो उठे।

० ० ०

धर्म के तत्व को उसके मर्म को समझने वाला यह तरुण संन्यासी था शंकर अथवा शंकराचार्य जिसने इस देश में अपनी मान्यताओं के अनुसार एक बार पुनः आर्यभूमि में धर्म संस्थापना का कार्य किया और देश भर की यात्रा कर विघटित समाज को सुसंगठित करने का ठोस पग उठाया।

मंगाइए : पढ़िए : पढ़ाइए :

वीर बच्चों की कहानियां

मूल्य : ३) सजिल्द

दयानन्द-संस्थान

वेद मन्दिर, दिल्ली-३६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जीवन-ज्योति

—जगदीश प्रसाद आर्य

मालवा प्रदेश में आर्यसमाज के प्रथम प्रचारक—
श्री 'ओ३म्' झण्डाधारी जी महाराज

श्री स्वामी चैतन्य देव जी महाराज

(श्री झण्डा धारी ने आर्य जगत् को वेदश्रमीजी जैसा रत्न दिया। आप हाथ में ओ३म् का झण्डा लेकर पैदल प्रचार करते थे। लेखक के पिताजी ने आपकी प्रेरणा से नीमच में आर्यसमाज की स्थापना की थी)।

श्री स्वामी चैतन्य देव जी महाराज का बचपन का नाम श्री गोवर्धन लालजी था। आपका जन्म संवत १९१४ वि. को ग्राम गगराना, मारवाड़ की वीर प्रसूता भूमि में श्री छोटे लालजी के घर हुआ था। बाद में आप देवास आ गये आप प्रारम्भ से ही धार्मिक प्रवृत्ति के थे। केवल २० वर्ष की अवस्था में ही जब ज्ञान प्राप्ति के लिये किसी अच्छे गुरु की खोज में नाथद्वारा जा रहे थे तो रेल के डिब्बे में ही आपको सत्यर्थप्रकाश पढ़ने को मिला। पढ़ते ही हृदय में सत्य का प्रकाश दैदीप्यमान हो गया। आपने सत्यार्थ प्रकाश को अपना सच्चा गुरु माना व सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका, संस्कार विधि आदि मंगा कर उनका खूब स्वाध्याय किया। आपने मानव समाज को अन्धकार से निकाल कर प्रकाश में लाने का संकल्प लिया तथा जीवन के ६९ वर्ष इसी साधना में लगा दिये।

उस समय आर्यसमाज के नाम से लोग भड़कते थे। यहाँ तक कि सन् १८९३ में जब आपने देवास में प्रथम आर्यसमाज की स्थापना की तो लोगों ने श्री भागीरथजी के मकान को (जहां यज्ञ हुआ था) जला दिया तथा आर्यों पर झूठा आरोप लगाकर १० आर्यों को पकड़वा दिया। अभियोग तो चला मगर सब बरी हो गये।

श्री गोवर्धन लालजी का क़द लम्बा, वर्ण गौर व व्यक्तित्व आकर्षक था। आपके चेहरे पर दृढ़ता तथा मुस्कराहट सदा विराजमान रहती थी। ६ मार्च १८९७ को आपने अपनी दवा की दुकान पर आर्य मुसाफिर पं० लेखरामजी के हत्यारे को पकड़ कर पुलिस के हवाले किया, किन्तु पुलिस ने बाद में उसे छोड़ दिया। आपने अपने साथियों सहित भूख प्यास सहकर उसे गांव गाँव बहुत ढूंढा पर वह मिला नहीं।

विरोधी लोग आपको बहुत कष्ट देते थे। वे आपके माता, पिता के पुतले बना कर बाजार से निकालते। कोई उन पर

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

थूकता, कोई जूते मारता, कोई मुंह पर कालिमा पोतता, बाजार में उनकी अर्थी निकालते तथा मुंह में जो आता बकते। लेकिन ये महर्षि के भक्त, वैदिक धर्म के दीवाने उनकी किसी बात का बुरा न मानते, अपितु दुगने वेग से काम करते। आपकी दीवानगी का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि आपने "ओ३म्" का झण्डा हाथ में लेकर नगर नगर ग्राम-ग्राम पैदल घूम घूम कर वैदिक धर्म की दुन्दुभी बजाई। आपके प्रचार का तरीका सरल व ठोस था। यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा कि मालवा प्रान्त की कई आर्यसमाजें आपके प्रभाव से ही स्थापित हुई हैं। आर्यसमाज के प्रचारकों, विद्वानों, भजनोपदेशकों व कार्यकर्ताओं को आपके त्यागमय जीवन से प्रेरणा लेनी चाहिये।

प्रबल विरोध होने पर भी १-२ फरवरी १९०३ को आपने आर्यसमाज देवास का प्रथम वार्षिकोत्सव बड़ी धूम धाम से मनाया। एक बार आपके कार्यों से प्रभावित होकर महाराज साहब बड़ौदा आर्यसमाज मन्दिर में पधारे। देवास के दोनों महाराजा साहब नियमित रूप से समाज में पधारते रहे। दोनों ही राजा श्रीमन्त तुकोजी राव बापू साहब पंवार के. सी. एस. आई. एवं श्रीमन्त मल्हार राव बाबा साहिब पंवार के. सी. आई. श्री गोवर्धनलालजी का उनके सदाचार, सादगी व सत्याचरण के कारण बड़ा सम्मान करते थे। यहां के उत्सवों पर आपने समय समय पर श्री पं, गणपतिजी शर्मा, श्री पं, रुद्रदत्तजी सम्पादकाचार्य और स्वामी नित्यानन्दजी जैसे उच्चकोटि के संन्यासियों व विद्वानों को बुलाया।

आप कई वर्षों तक आनरेरी मजिस्ट्रेट व पंचायत कोर्ट के जज भी रहे। आपका घराना पूर्ण आर्य था। आपने अपने सुपुत्र श्री पं. वीरसेन जी (वर्तमान वेदश्रमी जी) को आयुर्वेदिक शिरोमणी तथा वेद का विद्वान व गुरुकुल वृन्दावन का स्नातक बनाया और सुपुत्री सत्यवती देवी को कन्या गुरुकुल हाथरस से शिक्षा दिला कर स्नातिका बनाया और वैदिक वर्ण व्यवस्था के अनुसार उनके विवाह किये। आर्य जगत् स्वामी चैतन्य देवजी महाराज का बड़ा कृतज्ञ है कि उन्होंने श्री वीरसेनजी के रूप में एक वेदों का प्रकाण्ड पंडित व आर्य समाज के गौरव को उंचा करने वाला रत्न दिया।

श्री गोवर्धन लालजी मालव में प्रथम आर्य पुरुष हैं जिन्होंने वानप्रस्थी होकर अपना नाम साधु सत्यानन्द और संन्यास लेकर सन् १९३८ में अपना नाम स्वामी चैतन्य देव ग्रहण किया। आप कट्टर राष्ट्रवादी थे। ८५ वर्ष की आयु में आप कुंवर चाँद करणजी शारदा के जत्थे के साथ हैदराबाद सत्याग्रह में गये व गुलबर्गा जेल में रहे। राजस्थान आर्य प्रतिनिधि सभा की जयन्ति पर गांव गांव में पैदल प्रचार करते हुए आप अजमेर पहुंचे।

वैदिक धर्म के सच्चे अनुयायी, मालव प्रदेश में आर्यसमाज का नाद गुंजाने वाले महर्षि के अनन्य भक्त, नर नाहर २० नवम्बर १९४६ की अर्ध रात्रि को वेद मन्त्रों का जयघोष करते हुए इस भौतिक देह को यहीं छोड़कर आदित्य लोक को प्रस्थान कर गये।

हमारा कर्तव्य है कि हम इन महापुरुषों के जीवन से शिक्षा लें व उनके बताये मार्ग पर चलते हुए दिनों दिन दिन वैदिक का प्रचार अधिकाधिक गति से करें।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

चेतावनी

—प० बिहारीलाल शास्त्री

सांप फिर फुंकार उठा !

हिन्दू और मुसलमानों का देश बंटवारा हो गया। भारत के तीन टुकड़े हो गये किन्तु महात्मा गांधी की कृपा से भारत में पाकिस्तानी रह गये। पहले वह कुछ चुप रहे परन्तु हिन्दुओं की चुनाव फूट को देख कर अब वह फिर फुंकार रहे हैं। साम्प्रदायिकता का विष उनके मुख से निकल रहा है। जामा मस्जिद के इमाम से लेकर और अनेक मौलवी-मुल्ले उर्दू को सरकारी भाषा बनाने की माँग कर रहे हैं। इन तीस वर्षों के समय में सब ही मुसलमान पढ़े-लिखे हिन्दी को खूब जान गये हैं। और गाँव के करोड़ों मुसलमान न तो उर्दू को बोलते और न समझते ही हैं। शहरों में रहने वाले थोड़े ही मुसलमानों की बोल-चाल में अरबी फारसी के शब्द आते हैं। फिर उर्दू की मांग, सरकारी भाषा बनाने की करके, सरकार का खर्च बढ़ाना और क्लर्कों को परेशान करना नहीं तो और क्या है ?

यदि कहो कि उर्दू की उन्नति तो सरकारी भाषा बनने से कोई भाषा उन्नत नहीं होती। मुगलों के काल में फारसी सरकारी भाषा थी किन्तु उस काल में जो हिन्दी साहित्य लिखा गया वह आज भी प्रशंसा पा रहा है। भाषा की उन्नति उच्च कोटि के साहित्य से होती है जिसका उर्दू में सदा अभाव रहा है। कोई भी चरित्र-निर्माण करने वाला ग्रन्थ, देश भक्ति का काव्य उर्दू में नहीं लिखा गया। आशिकी-माशूकी की कविताएं और ऐसी ही कहानियां उर्दू का खजाना हैं।

यह मांग उर्दू वालों की बड़ा गहरा अर्थ रखती है। जिसे यह हमारे नेता नहीं समझते। वोट लेने के लिए यह इनकी लल्लो-चप्पो करते रहते हैं। इसी से इनके हौसले बढ़ते रहते हैं। उर्दू को सरकारी भाषा बनाने की मांग इसलिए है कि हिन्दू और मुसलमान दो अलग-अलग राष्ट्र हैं। जैसा कि जिन्ना साहब कहते थे। और महात्मा गांधी द्विराष्ट्र सिद्धान्त के विरुद्ध थे। जब दो राष्ट्र सिद्ध हो जायेंगे तो अलग-अलग चुनावों की और नौकरियों की मांग होगी। फिर अलग-अलग अदालतें बनाने और शिक्षा अलग-अलग करने की मांग होगी। भारत के अन्दर ही एक और राष्ट्र (पाकिस्तान) बनाने की बुनियाद है, यह उर्दू की माँग।

सरकार को समझ लेना चाहिए कि साम्प्रदायिकता का विष कभी शान्ति स्थापित नहीं होने देता है। मुसलमान भाइयों को भी गहराई से सोचना चाहिए कि हिन्दू लोग सहिष्णु हैं, सब धर्मों के प्रति समभाव रखते हैं। अति आनन्द से हिन्दुओं के साथ मिलकर रहें।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उर्दू कोई मजहबी चीज तो है नहीं। बंगाल में उर्दू कहां है? सिन्ध में उर्दू वालों को सिंधियों ने खूब पीटा। फिर यह उर्दू की रागिनी क्यों अलापी जा रही है। अपने मजहब का पालन करो। देश के कार्यों में और सरकारी प्रबन्ध में साम्प्रदायिकता को मत घुसेड़ो। हिन्दी का मुकाबला इस समय अंग्रेजी से है। राज-काज से अंग्रेजी को अलग करना है। ऐसी दशा में उर्दू का आन्दोलन हिन्दी के और देशी भाषाओं के लिए ा है। यदि उर्दू सरकारी भाषा वन भी जाय तब भी अब इस देश में उर्दू का महत्व कैसे हो सकता है? जब तक कि उसमें उच्च कोटि का साहित्य न हो।

इन राजनैतिक अखाड़े वालों से हमारी प्रार्थना है कि अपने लाभ के लिए साम्प्रदायिकता के सांपों को मत पालो। यह नाग फिर तुम्हें ही डसेंगे। अतः स्पष्ट उत्तर दे दिया जाय कि सरकारी भाषा केवल हिन्दी रहेगी। चीनी-मुसलमानों की भाषा चीनी है और जापान वालों की जापानी तो हिन्दुस्तान के मुसलमानों की भाषा हिन्दी क्यों नहीं?

भारत में रहने वाले पाकिस्तानी जहनियत वालों से हमें कहना है कि अब अधिक उपद्रव मत बढ़ाओ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यसमाजें

हमारे सभी प्रकाशनों की

कम से कम

५-५ प्रतियां अपने यहां मंगाएं

हम ३३ प्रतिशत कमीशन देंगे

किराया आदि भी नहीं लगेगा।

—सुविधा से लाभ उठाएं—

और आज ही—५०) अगाऊ के साथ

अपना आदेश भेज दें। रेलवे स्टेशन लिखें।

वेदभाष्य इस आदेश में मंगाने आवश्यक नहीं

दयानन्द-संस्थान

वेद मन्दिर, दिल्ली-११००३६

अथवा

१५६७, हरध्यानसिंह मार्ग, करौल बाग,

नई दिल्ली-११०००५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अपने स्टेशन को साफ-सुथरा रखें

इस बात से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि साफ-सुथरा वातावरण व्यक्ति के चरित्र की अभिव्यक्ति करता है और हमारी प्रवृत्ति को बनाता है। ऐसे वातावरण में आनन्द-ही-आनन्द मिलता है।

हम अपने घरों को खुला और हवादार रखते हैं। तब इस बात को सार्वजनिक स्थानों के लिए क्यों न लागू किया जाए ?

रेलवे स्टेशनों, प्रतीक्षालयों, सवारी डिब्बों और वास्तव में किसी भी स्थान पर, जहां लोग अधिकांशतया इकट्ठे होते हैं, यह बहुत ही महत्वपूर्ण है कि इनके आसपास के वातावरण को साफ-सुथरा रखा जाए।

हमने रेलों पर स्वच्छता अभियान चलाया है, जिसके बहुत ही अच्छे परिणाम निकले हैं। रेलें अब अधिक आकर्षक लगने लगी हैं। फिर भी, इस दिशा में और अधिक सुधार किए जाने की गुंजाइश है। हम इसमें सुधार लाने के लिए भरपूर प्रयास करते रहेंगे।

आप भी रेलवे की सहायता कर सकते हैं। इस बात को ध्यान में रखते हुए कि आपके आसपास के क्षेत्र में कोई गंदगी नहीं है, आप स्टेशन और निकटवर्ती स्थान को साफ-सुथरा रखें। इस प्रयोजन के लिए रेलवे के सफाई कर्मचारी की सेवाएं प्राप्त की जा सकती हैं। वे आपकी सेवा के लिए हमेशा तैयार रहेंगे।

आपको सिवाय कूड़ादान के, कूड़ा आदि इधर-उधर नहीं फेंकना चाहिए। आपकी ओर से दिए गए थोड़े-से सहयोग से भी हम आपको बेहतर सेवा प्रदान कर सकते हैं।

रेलवे आप ही की सम्पत्ति है

इसे साफ रखिए !

उत्तर रेलवे

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेद के सन्दर्भ में

जब तक पौराणिकों का वेद था,
सुरक्षित था, स्वस्थ था,
रेशम के वस्त्रों और
सुवर्ण पत्रों में गुप्त था,
रोग से रहित था।
यह ठीक है लोगों को
उसके दर्शन नहीं हो पाते थे,
पर उसके नाम से ही
लोग तृप्त हो जाते थे।
वेद की महिमा और श्रद्धा,
सभी हिन्दू घरों में थी।
उसका पाठ और पूजा,
जगह-जगह मन्दिरों में थी।
वेद के नाम पर चाहे,
विप्रजन स्वार्थ सिद्ध करते हों,
गांठ के पूरे अपढ़ यज्ञमानों को मूंड़,
अपना पेट भरते हो।
परं वेद तो स्वयं निर्दोष था,
धर्म धन का सुरक्षित कोष था।
केवल यह दयानन्द का ही जोश था,
वैज्ञानिक भाष्य कर किया मदहोश था।
फिर सभाओं ने तेरा ढोल पीटा,
नाम पर तेरे बड़ा धन घसीटा।
पर वेदानुसन्धान का कहीं नाम नहीं,
कहते हैं अब इसके लिए दाम नहीं।
विपक्षियों के प्रश्नों की ठोकर,
कुछ वेदानुसन्धान का ध्यान आ जाता है,
इस पर भी यदि अर्द्ध वेतन का
कोई पण्डित मिल जाता है,
तब उत्तर रूप में वेदानुसन्धान का
काम कुछ काल हो पाता है।
उत्तर देने का कार्य खत्म हो जाने पर
उस पंडित की वहाँ फिर कोई पूछ नहीं
नाम नहीं, उसको हटा दिया जाता है,
और कह दिया जाता है कि—
अब यहाँ काम नहीं।
जब बड़ी-बड़ी सभाएं तक
वेदज्ञ स्थाई रूप से नहीं रख सकती हैं।
तब उन सभाओं से क्या ?
वेद उद्धार की आशा की जा सकती है ?
सभाओं का विशेष लक्ष्य तो है दलबल,
वह किसी तरह न हो जाये निर्बल।
इसी का ध्यान रहता है पल-पल ॥
पदाधिकारी तो पदप्राप्ति का यत्न
ही कर पाते हैं
या पद के गर्व में गर्वित हो जाते हैं—
वहाँ फिर किसी का मान नहीं,
सत्यवादिता, निजवचन पालन का
ध्यान नहीं,
स्वकथन या स्वाग्रह पर ही डट जाते हैं,
यथावत विचार और निज कर्त्तव्य से
परे हट जाते हैं,
असत्य ग्रहण और सत्य त्यागने
पर भी समुद्यत हो जाते हैं।
यही है अत्यधिक खेद।
इससे क्या उभर सकता है वेद ?

—स्वामी धर्मेवश सरस्वती

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्य समाजों के निर्वाचन

आर्यसमाज टुण्डला

श्री डा० विद्यासागर दीक्षित प्रधान, श्री रमेशचन्द गुप्त उप प्रधान, श्री डा० देवेन्द्र प्रताप कुलश्रेष्ठ उप प्रधान श्री हरचरन शर्मा मंत्री, श्री रामप्रकाश आर्य उप मंत्री, श्री बलवीर सिंह गहलौत उपमंत्री, श्री सुखवीर सिंह कोषाध्यक्ष, श्री गुरुदत्त शर्मा पुस्तकाध्यक्ष श्री ए० डी० सक्सेना, श्री रामदयाल सारस्वत, श्री जगदीश प्रसाद शर्मा, श्री चुन्नीलाल कपूर अंतरंग सदस्य।

आर्यसमाज समस्तीपुर

संरक्षक श्री वैद्यनाथ महतो, श्री रामबली आजाद, अधिवक्ता।

प्रधान : आनन्द स्वरूप गुप्ता

उप-प्रधान : श्री रामप्रसाद साह, श्री शिवव्रत वानप्रस्थी, श्री नवल किशोर शास्त्री, उपमंत्री : श्री विश्वबन्धु आर्य श्री अरुण कुमार आर्य, श्री योगेश्वर कर्ण पुस्तकाध्यक्ष : श्री रामरतन प्रसाद लेखा निरीक्षक : श्री प्रभुदीप प्रसाद वर्मा

आर्यसमाज गाजियाबाद

श्री रतनलाल राय प्रधान, श्री रघुवर दयाल जी उप प्रधान, श्री जय भगवानजी मन्त्री, श्री त्रिलोकी नारायणजी उपमन्त्री श्री बृजमोहनजी कोषाध्यक्ष।

श्री दुर्गा प्रसादजी पुस्तकालध्यक्ष।

आर्यसमाज अजमेर

१. श्री दत्तात्रेय वावले	प्रधान
२. श्री ठा० प्रेमसिंह	उप प्रधान
३. श्री बाबु ताराचन्द्र	उप प्रधान
४. श्री डा० सूर्यदेव शर्मा	मन्त्री
५. श्री रामसिंह	संयुक्त मन्त्री
६. श्री देवदत्त शास्त्री	उपमन्त्री
७. श्री विशनलाल शर्मा	उपमन्त्री
७। श्री हरीशचन्द्र शर्मा	कोषाध्यक्ष

१. प्रधान सेठ विद्याराम जी
२. उप प्रधान वैद्य विजेन्द्रसिंह
३. मन्त्री रामगोपाल शर्मा वैद्य
४. उप मन्त्री देवेन्द्रकुमार शर्मा
५. कोषाध्यक्ष भोजराज जी
६. पुस्तकालय अध्यक्ष लाला महेन्द्रपाल
७. प्रचार मंत्री कालीचरनजी।

"आर्य कुमार सभा गुरुकुल गंगोरो अलीगढ़ का वार्षिक निर्वाचन सम्पन्न"।

१. प्रधान ब्र. महेन्द्रकुमार आर्य अलीगढ़
२. उपप्रधान ब्र. धर्मपाल आर्य (मथुरा) उपप्रधान ब्र. कृष्णबन्धु (चन्दौसी)
३. मन्त्री ब्र. यशपाल आर्य (अलीगढ़)
४. उपमन्त्री ब्र. सूं (मूर्रा) उपमन्त्री ब्र. उमेशचन्द्र आर्य (डिबाई)
५. कोषाध्यक्ष ब्र. राजेन्द्रपाल आर्य (बदायूं)
६. पुस्तकाध्यक्ष ब्र. सत्यकेतु आर्य जिज्ञासु सोनीपत (हरियाणा)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यसमाज बीकानेर

श्री डा० हरकिशन लाल जी खन्ना— प्रधान, श्री यश पाल जी— उपप्रधान, श्री बहादुर मल जी— उप प्रधान, श्री जगदीश प्रसाद गोयल— मंत्री, श्री बाबू लाल जी आर्य— उप मंत्री श्री बलबीर सिंह आर्य— उप मंत्री, श्री मेघराज जी सोनी— कोषाध्यक्ष, श्री तुलसीराम जी आर्य — पुस्तकाध्यक्ष, श्री पन्ना लाल जी पुस्तकाध्यक्ष, (बिक्री विभाग,) श्री शम्भूराम जी आर्य – अतरंग सदस्य, श्री भंवर लाल जी —अंतसदस्य, श्री चम्पा लाल जी - अतरंग सदस्य, श्री भाई जसराज — अंतरंग सदस्य, श्री नवल किशोर शर्मा — अंतरंग सदस्य, श्रीमति चन्दन देवी— अंतरंग सदस्य,

आर्य समाज गोविन्द नगर

श्री चरण जीत लाल— संयोजक, श्री सुरेन्द्र नाथ – प्रधान, श्री देवदत्त—उप प्रधान, श्री बाबू राम आर्य— मंत्री, श्री राम सेवक आर्य – उप मंत्री, श्री रुप नारायण— कोषाध्यक्ष, श्री राम प्रकाश— पुस्तकाध्यक्ष,

आर्यसमाज गोरखपुर

श्री कुंवर राय सिंह— प्रधान, श्री हेमराज मेहता— उपप्रधान, श्री सुशील कुमार आर्य— उप प्रधान, श्री प्राण नाथ आर्य—मंत्री, श्री बलदेव प्रसाद आर्य— उप मंत्री, श्री रमेश कुमार— उप मंत्री, श्री सुभाष आर्य— प्रचार मंत्री, श्री केशव प्रसाद पाठक — कोषाध्यक्ष, श्री सोहन राम भाटिया— पुस्तकाध्यक्ष, श्री शम्भू नाथ चौधरी – पुस्तकाध्यक्ष,

आर्य समाज चन्द्र नगर

श्री देशराज जी—प्रधान, श्री बलदेव सहाय नय्यर – उप प्रधान, श्री जयचन्द आर्य— मंत्री, श्री नरेन्द्र कुमार मलिक - उपमंत्री, श्री ओम प्रकाश छतवाल— कोषाध्यक्ष, श्री दिनेश कुमार पाठक – पुस्तकाध्यक्ष, श्री जसवंत सिंह चावला — लेखा परीक्षक,

आर्य समाज भीमगंजमण्डी, कोटा जंकशन

श्री आनन्द राव स्प्र— प्रधान, श्री विश्वम्भर नाथ कौशल— उप प्रधान, श्री अशोक कुमार आर्य — मंत्री, श्री राम देव शर्मा— उपमंत्री, श्री लक्ष्मण दास गुलाटी— कोषाध्यक्ष, श्री प्रेम नाथ कौशल— पुस्तकाध्यक्ष, श्री राजेन्द्र कुमार जी आर्य— कार्यकारिणी सदस्य, श्री सन्त राम जी—श्री लक्ष्मी कान्त गुप्ता—

वेद मन्दिर निर्माण के लिए
अपनी सहायता तुरंत भेजें

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—श्री पं० बिहारीलाल शास्त्री

मकबरे और कृत्य

भारतवर्ष में मुसलमान बादशाहों नवाबों और सूफियों के मकबरे बने पड़े हैं। कुछ अच्छी दशा में हैं और कुछ खण्डर बनने को तैयार खड़े हैं। चार सौ पांच सौ वर्ष बाद कुछेक को छोड़ कर (जैसे ताजमहल) और सब भूमिसात् हो जायेंगे। हिन्दू राजाओं, सम्राटों, कवियों और सन्तों के समाधि स्थल कहीं नहीं मिलेंगे परन्तु उनके काम इतिहासों में नक्षत्रों के समान चमक रहे हैं। उनकी कीर्ति-कथाएं पुण्य कारिणी बन गयी हैं।

रघुवंशी सम्राट, पाण्डव सम्राट अशोक सम्राट, महाराज जी हर्षवर्धन छत्रपति शिवाजी, महाराणा प्रताप, झांसी की रानी, पेशवा राव बाजी, नाना साहब कभी भुलाये न जा सकेंगे। महाराजा रणजीत सिंह, हरि सिंह नलवा, गुरु अर्जुन देव, तेग बहादुर, गुरु गोबिन्द सिंह राष्ट्र के स्मरणीय व्यक्ति बने हुए हैं। भौतिक स्मारक कुछ दिनों के लिए ही होते हैं और उत्तम कार्यों के स्मारक सनातन बन जाते हैं। अशोक का कोई मकबरा नहीं, किन्तु इतिहास में उसकी कीर्ति का स्तम्भ चमक रहा है।

अपने मजहब का प्रचार करने के लिए महमूद का भांजा मसऊद एक लाख बीस हजार फौज लेकर भारत में आया। अजमेर से लेकर हरदोई तक लाखों हिन्दू कत्ल किए, सैकड़ों मन्दिर तोड़े, आखिर वीर महाराज सुहेल देव के द्वारा उसकी सब सेना और वह खुद यमपुर भेज दिए गए। उसका भी मकबरा बहरायच में बना है। जो कभी न कभी नष्ट होकर ही रहेगा।

इधर महाराजा अशोक के राजकुमार और राजकुमारी अपने (बौद्ध), धर्म का प्रचार करने को श्रीलंका जाते हैं। काषाय वस्त्र धारण किए हुए, पीपल की डालें हाथों में लिए होते हैं। उसकी कीर्ति पताका सदा फहराती रहेगी।

धर्म-निरपेक्षता का व्यवहार देखना है तो महाराज हर्षवर्द्धन का चरित्र काव्यों में पढ़िए। बौद्ध यात्री ह्यूनसांग लिखता है कि प्रति वर्ष महाराज हर्ष माघ मास में प्रयाग के मेले में जाते और साधुओं को पडिण्तों को दान देते। जैन, बौद्ध और ब्राह्मणों को समान रूप से दान देते थे। इसी प्रकार फाहियान (चीनी यात्री) ने भी गुप्त राजाओं की कीर्ति का वर्णन किया है।

गुप्त राजाओं के कार्य काव्यों और इतिहासों में चमक रहे हैं। हां, गुप्त काल के कुछ भौतिक स्मारकों को महत्त्व नहीं दिया। आर्य संस्कृति चिन्मयी है। अर्थात् ज्ञानमयी और आर्येतर जनों की संस्कृति है। महामयी अर्थात् जड़ पदार्थ मिट्टी से बनी है। मिस्त्र के बादशाहों ने अपने समाधि स्थल बड़े विशाल बनवाये थे। जो मिस्त्र के पिरामिड प्रसिद्ध हैं। इनमें राजजहलों के से सब समान भी रखवाये गये थे जो अब भी पाये जाते हैं। अब इन स्मारकों की भी खुदाई यूरोप के ज्ञान-प्रिय विद्वानों ने कर डाली। मोहनजोदड़ो के भी भौतिक स्मारक प्राप्त हुये हैं जो अन्वेषक, विद्वानों, रिसर्च स्कालर्स के लिए समय काटने का एक मनोरंजक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

साधन हैं। किन्तु मिस्त्र की और मोहन-जोदड़ो वालों की कोई चिन्मय समृद्धि कहीं भी नहीं मिलती जैसे कि पाण्डव, कौरव और उसके भी पहले इक्ष्वाकु आदि सूर्यवन्शी श्री राजाओं के सुकर्म काव्यों और इतिहासों में चमक रहे हैं, नक्षत्रों की भांति।

दैवी संस्कृति ज्ञान पर ताल देती है और आसुरी संस्कृति जड़ पदार्थों पर। मिस्र, सीरिया, रोम आदि के लोग आसुरी संस्कृति के प्रेमी थे और भारत, यूनान, श्रीलंका के जन दैवी संस्कृति के भक्त थे, ज्ञानमयी संसार के भक्त।

तुर्क, मुगल आदि अरब लोगों पर भी मिस्र और सीरिया का प्रभाव था। मुगलों में सर्वाधिक महत्व अकबर को दिया जाता है। किन्तु उसने कौन सा काम ऐसा उत्तम किया जो इतिहास को प्रकाशित करता है? मीना बाजार आदि अनेक चेष्टाएं उसकी ऐय्याशी वृत्ति को प्रकट करती हैं। सैकड़ों स्त्रियां उसके हरम में थीं। दूसरा सम्राट है अमीसल मोमिनीन औरंगजेब। उसने भी प्रजा के हित में क्या किया? हिन्दुओं पर, हिन्दू मन्दिरों पर किए उसके अत्याचार, अपने पिता और भाइयों पर किए नृशन्स व्यवहार इतिहास में आज भी उसे कलंकित बनाये हुए हैं। जब वह गद्दी पर बैठा तो उसने सिक्के पर लिखवाया —

"सिक्काजद दर जहां व बदरे मुनीर
शाह औरंगजेब आलमगीर।"

जब यह सिक्का ईरान के शाह ने देखा तो कहा कि पिछली पंक्ति यूं होनी चाहिए —

"औरंगजेब बिरादर कुश व पिदरगीर"

औरंगजेब आलमगीर जनप्रिय कहां है? भाइयों को मारने वाला और पिता को जेल में डालकर कष्ट पहुंचाने वाला है। मुसलमान उसकी प्रशंसा केवल इसलिए करते हैं कि उसने हिन्दू मन्दिर तुड़वाये, जजिया लगाया, हिन्दुओं को कुचला। इन बातों में अकबर भी कम न था। कांगड़ा में ज्वाला देवी का मन्दिर उसी ने तुड़वाया। और मुसलमानों ने गायें काटकर उनका खून जूतों में भरकर मन्दिर में फेंका। और खेद है कि इस युग के सेनापति थे बीरबल।

अकबर की नीति ने हिन्दुओं को नशे में बहाया किन्तु औरंगजेब ने वह नशा उतार दिया। हिन्दुओं की चेतना जागउठी।

प्रजा हितैषी, जन-जन हितकारी चन्द राजर्षियों का सच्चरित्र जो श्री मद्भागवत में मिलता है वैसा आर्य चरित्र किसी विदेशी का उनके इतिहास में नहीं पाया जाता। राजर्षि अम्बरीश, राजर्षि रन्तिदेव। जो महाराज रन्तिदेव के हितकर कार्यों के कारण प्रजापति रन्तिदेव को वर मांगने को कहते हैं तो महाराज कहते हैं तो महाराज कहते हैं --

"न चाहं कामये राज्य न स्वर्गम् ना पुनर्भवम्।" मैं राज्य को नहीं चाहता, स्वर्ग को नहीं चाहता, मुक्ति की इच्छा नहीं रखता, तो फिर? **"कामये दुःख तृप्तानां प्राणिना मार्तिनाशनम्"** अर्थात् दुःख से पीड़ित प्राणियों के दुःख का विनाश चाहता हूं। यह है आर्य संस्कृति, राजर्षि जिनके स्मारक चेतन हैं, जड़ नहीं। अतः स्मारकों के फेर में न पढ़कर चरित्रों को चमकाओ—

न करें फिक्र इमारत की कोई जर फलक
खान-ए-दिल जो गिरा है उसे तामीर करो

सद्वृत्ति का निर्माण हो। "तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु" मेरा मन उत्तम विचार वाला हो। और ईश्वर का चिन्तन करने वाला हो।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यसमाज को जीवित रखना है तो कार्यकर्त्ता चाहिएं

नवम् आर्य महासम्मेलन, बंगाल, कलकत्ता के
अप्रैल २८-३०, मई १, १९७८
अध्यक्ष—स्वामी सत्यप्रकाश का

अध्यक्षीय भाषण

समानो मंत्रः समितिः समानी, समानं मनः सह चित्तमेषाम् ।
समानं मन्त्रमभि मन्त्रये वः, समानेन वो हविषा जुहोमि ।।
(ऋ० १०।१९१।३)

आर्य प्रतिनिधि सभा बंग आसाम के तत्वावधान में होने वाले इस आर्य महासम्मेलन में भाग लेने के लिए आपने मुझे आमंत्रित किया है, इसके लिए मैं आभारी हूं। लगभग पिछले पाँच वर्षों से भारत के विभिन्न बड़े नगरों में स्थापना-शताब्दियाँ, स्वर्ण या हीरक जयन्तियाँ और इसी प्रकार के विविध समारोह मनाने की धूम सी मची है। हमने काशी शास्त्रार्थ की शती मनायी। आर्य समाज की स्थापना शती के समारोह लगभग सभी प्रदेशों में घटित किए गए। अभी हाल में हमने दिल्ली में वेदभाष्य शती समारोह भी मनाया। देश के बाहर मॉरिशस में भी आर्यमहासम्मेलन मनाया गया। हैदराबाद सत्याग्रह से पूर्व भी शोलापुर में भी आर्यमहासम्मेलन आयोजित हुआ था। सन् १९२५ में मथुरा में महर्षि दयानन्द के जन्म से संबंध रखने वाली शती भी हमने मनायी। १९३३-३४ में अजमेर में महर्षि के निर्वाण की अर्धशती भी मनाई। मथुरा में दूसरी बार राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद जी की अध्यक्षता में इसी प्रकार का एक समारोह हुआ। अनेक नगरों की आर्यसमाजें अपनी शती भी अब अगले वर्षों में मनाने जा रही हैं। १९८३ में अजमेर में हम महर्षि निर्वाणशती मनाने की आयोजना कर रहे हैं। इसी शृंखला में हम आज कलकत्ते में यह नवम आर्य महासम्मेलन भी मना रहे हैं। मैं इस समारोह के आयोजकों को बधाई देता हूं। ये समारोह कई कारणों से अपनी विशेषता रखते हैं—

(१) इन समारोहों द्वारा जनता के उत्साह और उल्लास का पता चलता है। इन समारोहों को जिन्होंने भी देखा है,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वह कह सकते हैं, कि सौ वर्ष के कार्य करने के अनंतर भी आर्य समाज एक जीता जागता संगठन है। ये समारोह हमें नयी स्फूर्ति प्रदान करते हैं। मैंने इस प्रकार के समारोहों में आर्य जनता की भावनाओं को देखा और परखा। १९२५ की मथुरा शती समारोह में जो हर्ष और उत्साह था, वैसा ही मैंने इन समारोह के जन समूह में पाया—शोभा यात्रा में उत्साह और महर्षि दयानन्द के प्रति प्यार और निष्ठा में किसी प्रकार की कमी नहीं देखी।

(२) देश की बदली हुई परिस्थितियों की आर्य समाज आन्दोलन के प्रति क्या प्रतिक्रिया होती है, इसका भी अध्ययन करने का हमें इन समारोहों में अवसर मिलता है। मथुरा के जन्मशती समारोह के समय देश परतन्त्र था। निर्वाण-अर्ध-शति, अजमेर, के समय भी देश पर अंग्रेजों का शासन था। शोलापुर आर्य सम्मेलन के समय देश की स्वतन्त्रता का आन्दोलन काफी प्रौढ़ हो चला था, और निजाम राज्य ने एक विशेष परिस्थिति उत्पन्न कर दी थी। जिसने समस्त आर्य जगत् को क्षुब्ध कर रखा था। शेष सम्मेलनों और समारोहों के समय देश स्वतंत्र हो चुका था, और जनजीवन पर तात्कालिक राजनीति विशेष रूप से छा गयी थी। राजनीति के इस चढ़ाव और उतार की कहानी भी हमने देखी, और हमारा देश आज भी उसी इतिहास का एक पृष्ठ बना हुआ है। आर्य समाज देश की जीती जागती संस्था रही है, इसलिए राजनीती के प्रत्येक श्वास का प्रभाव इस के भी कार्यकलाप मे व्यक्त होने लगता है।

(३) आर्य समाज का जन्म १९ वीं शती के अन्त में हुआ था—संसार के देशों की तब जो परिस्थिति थी, वह अब नहीं रही है। साम्राज्यवाद और उपनिवेशों का वह युग था। विज्ञान और शिल्प जन-जीवन को प्रभावित करने लगे थे। पुरानी रूढ़ियाँ धीरे-धीरे शिथिल पड़ने लगीं। विज्ञान का साम्प्रदायिक धर्मों से संघर्ष हुआ, दोनों में विज्ञान विजयी हुआ, धर्मों का विज्ञान से समझौता होने लगा। पुराने धर्मों ने अपने को नये रंग में रंजित करना प्रारम्भ किया। पुराने अंध-विश्वास टूटने लगे। मन्दिर और गिरजों से आस्था उठने लगी और प्रत्येक उदीय-मान देश ने अपना कल्याण विश्वविद्यालयों, प्रयोगशालाओं और उद्योगों को प्रणय देने में समझा। आर्य समाज के भी सौ वर्ष इस नये जनजीवन के समानान्तर चले हैं। हम अब नये युग में हैं। सम्पत्ति और सत्ता राजा, रईस, और कुबेर पतियों के हाथों में से निकल कर जनता के हाथ में आने लगी। ऋषि दयानन्द ने अपने जीवन काल में ही इस अवश्यम्भावी परिवर्तन का पूर्वाभास प्राप्त कर लिया था। हमारे यहाँ महासम्मेलन इस लिए भी परम उपयोगी हैं, कि विश्व के बदलते हुए इतिहास में हम अपने कार्य कलापों का सिंहावलोकन करें, और सोचे कि आर्यसमाज द्वारा प्रेरित जन-आन्दोलन का आगे चलकर किस प्रकार नेतृत्व किया जाय।

(४) आर्यसमाज का सम्बन्ध समष्टि और व्यष्टि दोनों से है। सर्व हितकारी प्रयासों के सम्बन्ध में आर्य समाज के संघटन को अनुशासन में रहने की आव-श्यकता है, और स्वहितकारी में स्वतंत्रता

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

है। यदि हम अच्छे व्यक्तित्व का निर्माण नहीं कर सकते तो हमें सर्वहितकारी बातों को सोचने और उसमें हस्तक्षेप करने का अधिकार भी नहीं प्राप्त है। समाधि और ईश्वर के प्यार का अधिकारी बनने के लिए यम-नियम परमावश्यक है, और यही यम-नियम नेता, मंत्री, राजा, राज्यपाल या राष्ट्रपति बनने के लिए आवश्यक है। यदि नेतृत्व नैतिकता के मूल्यों का उल्लंघन करेगा तो जनता भ्रष्ट हो जायगी। धीरे-धीरे जनता की भ्रष्टाचारिता लोकतंत्र को बदनाम करेगी। लोकतंत्र दूषित होने पर हमारे धार्मिक संघठन भी पतित हो जायेंगे, और इसकी कटु प्रतिक्रिया हमारी सभी संस्थाओं पर पड़ेगी। ऐसा होने पर हमारे समस्त सर्वहितकारी प्रयास केवल छलछद्म रह जावेंगे, और फिर स्वार्थपरायणता, धन और सत्ता की लोलुपता, मिथ्याचरण और मिथ्यावादिता हमारे सार्वजनिक जीवन को कलंकित करने लगेगी। आप जो यह महासम्मेलन कर रहे हैं या आगे भी आप ऐसे ही जो महासम्मेलन करें उनमें कभी कभी इस बात का भी सिंहावलोकन करें कि हमारा व्यक्तित्व कैसा है, हमारा नेतृत्व कैसा है, हम समाज को किस ओर ले जा रहे हैं, अथवा कौन कौन सी बाह्य परिस्थितियाँ हमारी नैतिकता में बाधक या उन्नायक बन रही हैं। अपनी बहुत सी निर्बलताओं को हम स्वयं नहीं देख पाते, अथवा स्वयं देखने में हम संकोच करते हैं। अतः दूसरों की दृष्टि से भी कभी कभी अपने को देखने का प्रयत्न करें।

(५) ऐसे महासम्मेलनों का एक उद्देश्य यह भी है, कि आप इस प्रकार के अवसरों पर इसका भी चिन्तन करें कि पिछले वर्षों में आपने किन क्षेत्रों में सफलता प्राप्त की है, किन में आप असफल रहे हैं, और किन क्षेत्रों में आपको अपने कामों को बढ़ाना है, और कौन से क्षेत्र हैं, जहाँ अभी आपने अपना काम प्रारम्भ भी नहीं किया है। आर्यसमाज के संघठन की शक्ति अतिसीमित है, अतः इसे तो अपनी शक्ति का उपयोग बहुत सोच समझ कर करना है। जो काम देश की अन्य संस्थायें करने लगी हैं, अथवा जिन कामों को देश के शासन ने अपने हाथ में ले लिया है, उनको आप आशीर्वाद तो दें, किन्तु उस ओर से आप अपने को मुक्त करके ऐसी ओर लगावें जिस ओर दूसरे काम नहीं कर रहे अथवा जिनसे आर्य समाज को मिशन को विस्तार देने में सुविधा हो सकती है। उदाहरण के लिए, यदि कालेजों, कन्यापाठशालाओं, अनाथालयों आदि संस्थाओं में आपको मिशन की पूर्ति करने वाले युवक या युवती नहीं मिलते हैं, तो इनके संचालन में आप अपनी शक्ति का अपव्यय न करें, अथवा इन संस्थाओं से लाभ उठाने की कोई नयी व्यवस्था सोचें। अब तो समस्त देश के सामने शीघ्र यह प्रश्न आने वाला है, कि सन्तति नियोजन के साथ साथ शिक्षा नियोजन भी बुद्धि पूर्वक किया जाय जिस से उच्छंखल और अनुशासनहीन असन्तुष्ट युवक तैयार न हों। आप सोचिए तो कि आर्यसमाज के तत्वावधान में लाखों युवक और युवतियाँ शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं, पर आर्य समाज को अपने संघठन में कार्य करने के लिए न युवक मिलते हैं, न युवती। एक ओर तो हजारों युवक काम धन्धा न पाने के कारण हतोत्साह हैं, और

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दूसरी ओर हमारे मिशन में कार्य करने के लिए किसी भी शर्त पर कोई युवक तैयार नहीं होता। आप ईसाइओं के गुरु-कुलों (सेमिनेरीज) को जाकर देखें कि वे किस प्रकार युवकों और युवतियों को तैयार करते हैं। उन्हें क्यों भारतीय समाज में से ही युवक और युवती मिल जाते हैं, किन्तु हमें क्यों नहीं मिलते? हम आजकल अपने कतिपय छोटे से विद्यालयों में केवल उपदेशक और पुरोहित तैयार करते रहे हैं, हमने कुछ पंडित भी तैयार किये। **किन्तु आर्य समाज के मन्तव्यों के प्रसार के लिए हमें उपदेशक नहीं चाहिए। हमें तो कार्यकर्त्ता चाहिए। उपदेशों को देना, या यज्ञ करा देना तो छोटा सा कार्य है। आवश्यकता अब ऐसे कार्यकर्त्ताओं की है, जो उन क्षेत्रों में, देश विदेश के उन अंचलों में जाकर काम करें, जहाँ हमारा काम अब तक नहीं हुआ है।** हिन्दी भाषी हिन्दुओं के बीच में ही हमने अभी तक अपने कार्य को सीमित रखा है। वस्तुतः हमें काम तो उन लोगों के बीच में करना है जो हिन्दू नहीं हैं, और जो हमारी भाषा समझते भी नहीं। हमें उन लोगों का आभार तो स्वीकार करना चाहिए, जिन्होंने विदेशों में भारतीय हिन्दुओं को ईसाई या मुसलमान बनाने से बचाया, और हिन्दुओं के बीच में आर्यसिद्धान्तों और आर्यविचारधारा को प्रसारित किया। पिछली ही शती में हमने कार्यक्षेत्र को इस दिशा में विस्तृत किया, पर ईसाई लोग ती उन जातियों और वर्गों में कार्य करते हैं, जिनमें अन्य लोग नहीं कर पाते। हमने अभी तक वेस्ट इंडीज, मारिशस, दक्षिण या पूर्वी अफ्रीका, या यूरोप में वहाँ के मूल निवासियों को अपने संघठन के प्रति आकर्षित नहीं किया है। क्या हम आशा कर सकते हैं कि आपके आर्य-महासमेम्लन इस दिशा में हमें कुछ प्ररेणा देगें? मैं इस बात पर फिर बल देना चाहता हूं कि कार्यकर्त्ता तैयार करने के उपायों को हमें सोचना चाहिए, न कि केवल उपदेशक या याज्ञिक। निस्स्वार्थ तपस्वी या कार्य कर्त्ताओं को चुनना होगा, उनके प्रशिक्षण का प्रबन्ध करना होगा और फिर उन्हें काम करने की सुविधायें प्रदान करनी होंगी।

(६) वर्तमानयुग में कोई भी आन्दोलन तब तक सफल नहीं हो सकता, जब तक हमारे पास प्रत्येक स्तर का अच्छा साहित्य न हो। बच्चों और ग्रामीणों के स्तर का भी साहित्य और उच्च शिक्षित स्तर का पाण्डित्यपूर्ण साहित्य भी। वे दिन गए जब हम घटिया स्तर के छपे साहित्य से भारत में थोड़ा सा काम चला लेते थे। आर्यसमाज का साहित्य लगभग हिन्दी भाषा के माध्यम तक सीमित है। इससे अगली शती में काम नहीं चलेगा। सत्यार्थ प्रकाश के संस्करण विभिन्न भाषाओं में प्राप्त हैं, यह काम पिछली शती में हमने किया। कई भाषाओं के संस्करण इस समय उपलब्ध नहीं है। इन्हें उपलब्ध कराने का प्रयत्न करना चाहिए। देश-विदेश के प्रमुख नगरों की आर्य समाजों में सभी भाषाओं के सत्यार्थ प्रकाश उनके पुस्तकालयों में होने चाहिए। कलकत्ता, कटक, काशी, प्रयाग, दिल्ली, बम्बई, चण्डीगढ़, आदि नगरों में अनेक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भाषाओं के जाननेवाले व्यक्ति सेवा कार्य में नियुक्त आपको मिलेंगे, अतः इन सभी नगरों की आर्य समाजों में लगभग सभी भाषाओं के आर्य-साहित्य की सामग्री होनी चाहिए।

देश से बाहर कई नगरों में हमें साहित्य-प्रकाशन का कार्य विस्तृत करना होगा, क्योंकि सौभाग्य से वहाँ हमें विशेष सुविधाएं प्राप्त हैं। मौरिशस में फ्रांसीसी भाषा में आर्य साहित्य का सृजन कराया जाय और प्रकाशित कराया जाय। डरबन में अफ्रीकान और जूलू भाषा में, नैरोबी में अग्रेजी और स्वाहिली भाषा में, सूरिनाम में डच भाषा में, लंदन में अग्रेजी भाषा में, वैंकोवर (कनाडा) में अग्रेजी में मौण्ट्रियल में फ्रांसीसी में, हांगकांग में, चीनी और जापानी में। छोटे बच्चों के लिए सचित्र पुस्तकें हो, वेद मन्त्रों के विभिन्न भाषाओं में अनुवाद संकलन, विभिन्न भाषाओं में मनोहर भजनों की पुस्तक हो बंगआसाम की आपकी प्रतिनिधि सभा कलकत्ता के केन्द्र से तो बहुत बड़ा काम कर सकती है। कलकत्ता तो अन्तराष्ट्रीय केन्द्र है। पाली ब्रजबुलि, बंगाली, उड़िया, असम-भाषा, और सीमान्त अच्चलों की भाषा में, लोकप्रिय साहित्य तैयार करने का कार्य कलकत्ता से आरम्भ होना चाहिए। मुझे कलकत्ते के लोगों की क्षमता पर बड़ा विश्वास है। कलकत्ते की एक दो आर्य समाजों को तो अपना समस्त कार्यक्रम बंगाली के माध्यम से करना चाहिए। कलकत्ते के कलाकारों और साहित्यिकों को अपनी ओर आकर्षित कीजिये। अनुदान, पारिश्रमिक और पुरस्कार देकर उनसे ही अपना साहित्य लिखवाइये, और उनके नाम से ही प्रकाशित करवाइये। उड़ीसा और असम साहित्य के लिये भी उन्हीं के साहित्यकारों कवियों और कलाकारों को प्रोत्साहित कीजिये। अपने कार्य कलापों के माध्यम को हिन्दी तक ही सीमित न रखिये।

(७) आर्यमहासम्मेलन ऐसे अवसर पर हमें एक और सुविधा प्राप्त कराते है। ऐसे अवसरों पर हम इस बात का चिन्तन कर सकते हैं, कि कहीं हमसे कोई ऐसी असावधानी या भूल तो नहीं हो रही जो हमारे सार्वभौम आन्दोलन को भविष्य में घातक सिद्ध हो, और फिर हमें जगाने के लिए महर्षि दयानन्द जैसे किसी दूसरे व्यक्ति को आना पड़े। मैं दो दिशाओं से शंका की अपेक्षा करता हूं। हो सकता है कि मेरी भूल हो, किन्तु मुझे कुछ डर लग रहा है। पहली बात यज्ञ से सम्बन्ध रखती है। यज्ञ के सम्बन्ध में महर्षि दयानन्द के विचार बिल्कुल स्पष्ट हैं। स्वमन्तव्यामन्तव्य में आप देखिये—'विद्वानों का सत्कार'—यहां विद्वानों से क्या अभिप्राय है, वह अगले शब्दों से स्पष्ट हो जायेगा, शिल्प, रसायन, पदार्थ विद्या आदि। आप स्वयं सोचें कि क्या आपने अपने महासम्मेलनों या शुभ समारोहों के अवसर पर कलकत्ते के विश्वविद्यालयों, अन्वेषणालयों, और विविध संस्थाओं में कार्य करने वाले विशेषज्ञों का स्वागत सत्कार किया है। मंत्रपाठी मात्र का अर्थ विद्वान् नहीं है। स्वामी दयानन्द १९ वीं शती के प्रथम धार्मिक विचारक और ऋषि थे जिन्होंने विज्ञान और शिल्प का स्वागत किया, और इन दोनों को प्राचीन परम्परा के अनुकूल बताया। हमने कुछ वर्षों से

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महापारायण यज्ञों का ढकोसला और अनौचित्य आरम्भ कर दिया है। वेद के पारायण का यह तो पौराणिक ढंग है, जिसे आपने अपने सार्वजनिक समारोहों में उत्साहपूर्वक आरंभ कर रखा है। यदि किसी वैदिक संहिता का कोई पारायण करना ही चाहे, तो उसे उचित है कि अपने घर पर वह स्वयं एकान्त में पाँच दश मंत्रों को प्रतिदिन पढ़े और वर्ष दो वर्ष में संहिता का पारायण पाठ कर डाले। पारायण-पाठ बाँट-बाँट कर पढ़ना केवल परिहास का द्योतक है -- सभ्य-शिक्षित संसार में किसी ग्रन्थ या शास्त्र का पाठ इस विधि से नहीं किया जाता है।

मैंने पारायण यज्ञों, पूर्णाहुतियों, यज्ञ शेषों के सम्बन्ध में जो दृश्य ऐसे अवसरों पर देखें हैं, वे श्रद्धा के द्योतक नहीं, केवल अविद्या और अन्धकार के द्योतक हैं। पुरोहितों, संस्थाओं, और याज्ञिकों ने पारायण यज्ञों के नाम पर दूकानदारियाँ भी आरम्भ कर दी है। दिल्ली में तो पुरोहितों की यूनियन भी बन गयी है। आप सोचें कि यह पुरोहितवाद हम को किस और ले जावेगा, और निर्मम जनता का श्रद्धा के नाम पर कितना शोषण होगा। मुझे स्वय डर लगता है इसलिए मैं आपसे ऐसा कह रहा हूं। आप स्वयं मनीषी हैं सावधानी और दूरदर्शिता से विचार करें। स्वामी दयानन्द यज्ञ को क्या समझते हैं, उन्हीं के शब्दों में सुनिये—

यज्ञ उसी को कहते है कि जिसमें विद्वानों का सत्कार यथायोग्य शिल्प अर्थात् रसायन जो कि पदार्थ विद्या, उससे उपयोग और विद्यादि शुभ गुणों का दान, अग्निहोत्रादि जिनसे वायु, वृष्टि, जल, ओषधी की पवित्रता करके सब जीवों को सुख पहुंचाना है, उसको उत्तम समझता हूं।

दूसरी बात जिसकी और मैं ध्यान दिलाना चाहता हूं, वह है आर्य समाज का राष्ट्रीय दृष्टिकोण, आर्यसमाज का हिन्दुत्व दृष्टिकोण, और आर्यसमाज का अन्तर्राष्ट्रिय या विश्व-दृष्टिकोण। यह स्मरण रखना चाहिए कि आर्यसमाज का उद्देश्य संसार का उपकार करना है। आर्यसमाज के सिद्धान्तों का प्रत्येक देश में प्रचार करना है। न्याय की दृष्टि से आर्य समाज न हिन्दुओं का पोषक है, न मुसलमानी धर्म वालों का, न ईसाइयों का। प्रत्येक धर्म की जो मिथ्या चारिता है, उससे हमें उस धर्म को विमुक्त करना है।

धर्म + मिथ्याचारिता = साम्प्रदायिक धर्म

यह समीकरण सभी साम्प्रदायिक धर्मों के लिए एक सा है।

वैदिक धर्म + अन्धविश्वास = हिन्दुत्व

इस समीकरण का भी यही अर्थ है। असत्य, मिथ्याचारिता या अन्धविश्वास किसी भी साम्प्रदायिक धर्म में से आप निकाल दें तो जो बचता है, वही धर्म या वैदिक धर्म है। आर्य समाज इसी का पोषक है, और इसी अभिप्राय से स्वामी दयानन्द ने एकादश से चतुर्दश तक चारों समुल्लास लिखे थे। जब हम कृण्वन्तो विश्वमार्यम् कहते हैं, तो हमारा अभिप्राय मिथ्याचारिता, असत्य और अन्धविश्वास का उन्मूलन है। अतः स्मरण रखना चाहिये कि व्यापक दृष्टि से आर्यसमाज "हिन्दुत्व" नहीं है। चौहदहवें समुल्लास की अनुभुमिका में कुरान का खण्डन करने से पूर्व महर्षि दयानन्द ने ये शब्द लिखे थे —"न किसी अन्य मत पर न इस मत पर झूठ मूठ बुराई या भलाई लगाने

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

का प्रयोजन है, किन्तु जो भलाई है वही भलाई और जो बुराई है वही बुराई सबको विदित होवे।"

आर्य समाज को यदि अपने विचारों को कभी अफगानिस्तान, फारस, तुर्की, अरब, या मिश्र देश में फैलाना है, तो उसे अपनी उस मुस्लिम विरोधी प्रवृति को बदलना होगा, जो पाकिस्तानी मुसलमानों की प्रतिक्रिया के कारण भारत में उत्पन्न हो गयी।

केन्या, टैंजानिया, दक्षिण अफ्रीका आदि देशों के वे व्यक्ति जो मूलतः भारतीय थे अब अपने को राष्ट्रियता की दृष्टि से भारतीय कहने को तैयार नहीं हैं। जिस देश की राष्ट्रियता उन्होंने अपनायी है, उस देश की भूमि को ही उन्हें अब मातृभूमि और पुण्यभूमि मानना है। सिद्धांन्त और तत्त्वज्ञान की दृष्टि से वे वैदिक हैं (जो आर्यसमाज के सदस्य हैं,) किन्तु राष्ट्रीयता की दृष्टि से वे अभारतीय हैं। वहां अब गंगा यमुना, हिमालय, राम, कृष्ण के गीत गाना कहां तक उचित होगा यह हमारे सोचने की बात होगी। यदि वहां की आर्यसमाजों में उन देशों के मूलवासी भी सदस्य बनने लगे (जैसा कि होना अत्यन्त आवश्यक है) तो हमें भारतीयता और हिन्दुत्व वाले दृष्टिकोण को परिवर्तित करना होगा।

बड़े सौभाग्य की बात है, कि अब भारतीय आर्य समाजी सभी देशों में समस्त भूमण्डल पर बसते जा रहे हैं। उगाण्डा, केन्या, टैंजानिया की स्थितियों से भयभीत होकर ये यूरोप और केनाडा या अमरीका में बसते जा रहे हैं। दक्षिणी अमरीका में भी काफी पहुंच गए हैं। सूरिनाम को छोड़कर अनेक भारतीय परिवार हालेण्ड पहुंच गए हैं (इन देशों की भाषा डच है) ब्रेजिल और मेक्सिको में भी वे हैं, अतः अगली शती में काफी सम्भावना है कि हम आर्य समाज के शुभ सन्देश को देशदेशान्तरों में पहुंचा सकें। इसके लिए हमें आवश्यकता है कि हम सावधानी और तत्परता से कार्य करें। ईश्वर ने हमें अच्छा सुयोग दिया है, जो पिछली शती में हमें प्राप्त न था।

आर्य समाज के संघठन की दुर्बलताओं को भी मैं समझता हूं। फिर भी मैं निरुत्साहित नहीं हूं। आर्य समाज की साधारण जनता पर मुझे बड़ा विश्वास है। यही जनता देशदेशान्तर में आर्य समाज का सन्देश ले गयी। कभी कभी जनता का नेतृत्व ऐसे हाथों में आ जाता है जिससे हमें हताश होना पड़ता है। पर वस्तुतः स्थिति यह है, कि आर्य समाज के विस्तार और प्रसार का कार्य नेता के अधीन नहीं है। मैं तो उस तपस्वी त्यागी और निस्स्वार्थी साधारण आर्य कार्यकर्त्ता के प्रति नतमस्तक हूं, जिसका कोई नाम भी इतिहास में न लेगा किन्तु जिसने अपने छोटे से गाँव में आर्यसिद्धान्तों का प्रचार किया। हमें तो उन ग्रामीण भजन गाने वालों का भी आभार मानना चाहिए जिन्होंने आर्य समाज के कार्य का क्षेत्र तैयार किया। विगत दश वर्षों के मेरे अनुभव ने यह स्पष्ट कर दिया है, कि आर्यसमाज को सहसा सब जगहों पर एक दो तपस्वी कार्यकर्त्ता मिल जाते हैं, जिन के सहारे आर्यसमाज इतना काम करने में सफल हो सका है। वस्तुतः हमने जो कुछ किया है, वह महर्षि दयानन्द की तपस्या, त्याग, और पाण्डित्य और उसी ऋषि की दूरदर्शिता का परिणाम है।

आप सबको आशीर्वाद और सम्मेलन की सफलताओं के लिए मेरी मंगलकामनाएं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

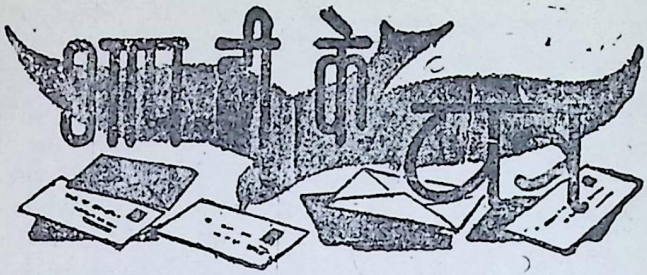

आदरणीय वहन जी नमस्ते !

मुझको आपके द्वारा प्रकाशित जन-ज्ञान पत्रिका को पढ़ते वहुत दिन बीत गये हैं। मुझको आपकी इस पत्रिका से वहुत ही प्रेम है क्योंकि आप सत्य वात को प्रकाशित करने में तनिक भी देर नहीं करती हैं। मैंने, "जनवरी १९७८ ई० में प्रकाशित वर्ष ८, अंक ९ के एक लेख (वात तो सच है पर कहो मत क्योंकि .....") यह लेख वड़े ध्यान से पढ़ा है और पढ़कर वहुत खुशी हुई क्योंकि—महर्षि दयानन्द सरस्वती ने जिस आर्यसमाज की स्थापना इस उद्देश्य को रखकर की थी कि "संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना"। उसी समाज में कुछ ऐसे लोग प्रविष्ट हो चुके हैं जिनकी कथनी और करनी में महान् अन्तर है वे लोग अधिकार तो चाहते हैं परन्तु कर्त्तव्य की ओर उनका ध्यान ही नहीं जाता है।

आर्यसमाज के पहले परोपकारी नेताओं ने जिन उद्देश्यों को सामने रखकर और अपनी सर्वस्व सम्पत्तियों को दान करके जिन गुरुकुलों को बनाया था आज उनमें कुछ ऐसे आदमी प्रविष्ट हो गये हैं जो कहते तो अपने आप को आर्य हैं परन्तु कार्य उनके अनार्यों जैसे हैं और वे गुरुकुलों के रूपों को बिगाड़ रहे हैं और आर्यसमाज के नाम पर कलंक लगा रहे हैं। कुर्सी बनी रहे या पोल न खुले इससे जगह-जगह पर आमरण अनशन करके धमकी दे रहे हैं।

अतः हम सबको निश्चय करना होगा कि ऐसे घटकों को समाज से बाहर निकालें, उन पर जिम्मेदारी का कार्य न छोड़ें और जो कुछ वाणी से कहें उसे कार्य में परिणत करें तभी हम सच्चे आर्य हो सकते हैं। नहीं तो केवल शब्दों के वाह्य आडम्बरों से स्वांग करने वाले ही ठहरेंगे। क्योंकि आगे के नव-निर्माण के साथ हमें गत उपलब्धियों को भी सुरक्षित रखना होगा तव कहीं आर्यसमाज का भविष्य प्रकाशमान हो सकता है।

मुजफ्फर नगर **धर्मपालसिंह आर्य**

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

"ईश्वर" पर सम्मति

"ईश्वर" (संसार के सुप्रसिद्ध वैज्ञानिकों की दृष्टि में) मूल ग्रन्थ—The Evidence of God in Expanding Universe—" का हिन्दी रूपान्तर। अनुवादक—श्री क्षितिश कुमार वेदालंकार M.A प्रकाशक पण्डिता राकेशरानी, अध्यक्ष दयानन्द संस्थान, एवं "जन-ज्ञान" (१५९७ हरध्यानसिंह मार्ग, करोल बाग, नई दिल्ली-५) पृष्ट संख्या-३२+१८२; मूल्य दस रूपये।

विश्व के ख्याति-लब्ध, विभिन्न विषयों के सर्वश्रेष्ट चालीस पाश्चात्य वैज्ञानिकों के महत्वपूर्ण निबन्धों का संग्रह "The Evidence of God in Expanding Universe" के नाम से कुछ वर्ष हुये अंग्रेजी में छपा था। इसमें वैज्ञानिकों ने अपने अपने विषयों के परिप्रेक्ष्य में "क्या इस ब्रह्माण्ड का रचयिता संवर्धक एवं संपादक कोई ईश्वर नाम की ऊलक्ष्य सत्ता है?" इस प्रश्न का विश्लेषणात्मक उत्तर दिया है। और सिद्ध किया है कि वह परोक्ष, अनिर्वचनीय, अतुल शक्तिशाली, कण कण में ओत-प्रोत एवं एकमात्र शाश्वत सत्ता "ईश्वर" है। इस बात को इन वैज्ञानिकों ने अपने अपने अध्ययन की आधार भूत गवेषणाओं के प्रमाणों और तथ्यों की भित्ति पर सिद्ध किया है। चालीस वैज्ञानिकों के नमा यहां मैं दे नहीं रहा। मुझे संक्षिप्त आलोचना करनी है। इस युगान्तर कारी पुस्तक ने पश्चिमी तथा अमरीकी जगत् में नई विचारधारा को जन्म दिया। नहीं तो कहा यही जाता रहा था—कि विज्ञान में ईश्वर का स्थान नहीं है।

पण्डित क्षितिश वेदालंकार एक सुलझे हुए विचारक एवं चिन्तक विद्वान हैं। वे वेदों के विद्वान तो हैं ही-साथ में अध्यात्म, राजनीति, दर्शन शास्त्र एवं पत्र कारिता के क्षेत्र में मूर्धन्य स्थान रखते हैं। कोई एक दर्जन से अधिक मौलिक ग्रन्थ लिखने का श्रेय इनको प्राप्त हैं। मित्रवर विद्वान् अनुवादक का ध्यान इस ग्रन्थ की ओर गया तो वे इसे अनुदित करने के मठिन प्रयास को ये संस्करण न कर सके। इन वैज्ञानिकों में भौतिकी विद, रसायन शास्त्र निष्णाव प्राणीविद्, कृषि-वनस्पति वेत्ता, कीट एव जन्तुविद् एवं खगोल तथा ज्योतिर्वेत्ता है—सभी ने अपनी अपनी वैज्ञानिक पद्धतिओं के आधार पर परम सत्ता का दर्शन किया। ये वैज्ञानिक ईसाई है और उनका प्रयत्न रहा है कि बाईबिल के ईश्वरीय रूप को मान्यता प्राप्त हो। कईयों ने इसके विपरीत यह भी माना है कि ईश्वर तो जगत् रचयिता हैं परन्तु बाईबिल का ईश्वर मानार्द नहीं।

ऐसे कठिन एवं तकनीकी ग्रन्थ का सहज सरल, सर्वग्राहय एवं असंदिग्ध अनुवाद करना एक विकट समस्या थी—परन्तु विद्वान् अनुवादक के धैर्य, अध्यवसाय एवं निष्ठा ने लेखक को प्रशंसनीय सफलता प्रदान की है। कहीं भी जटिलता नहीं आने दी। टिप्पणियों में अनेक स्थानों पर वेदों उपनिषदों एवं दर्शन शास्त्र के उदाहरण तुलना के लिए देकर पाठक की विचार सीमा को और भी विस्तृत कर दिया है।

मैंने इस अनुवाद को जन-ज्ञान के सौजन्य से पढ़ा। मेरी यह निश्चित धारणा है कि इस ग्रन्थ का प्रचार और प्रसार अधिक से अधिक हो। इस की भूमिका मान्य डा० सत्य प्रकाश जी सरस्वती ने लिखी है। इसी से ग्रन्थ की महत्ता का परिचय प्राप्त हो जाता है।

पण्डित भारतेन्द्र नाथ जी का भी धन्यवाद है जिन्होंने इस ग्रन्थ-रत्न को प्रकाशित किया।

परमानंद
(डा० परमानंद M.A. Ph.D)
पूर्व निदेशक-भाषा विभाग
संयुक्त पंजाब तथा हरियाणा।
776, Seth-7-C
FARIDABAD (Haryana)
Dated 25.5.1978

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

श्री लक्ष्मीदत्त दीक्षित ने आर्यसमाज संगठन छोड़ा

आर्य जगत् में यह समाचार अत्यन्त आश्चर्य और दु,ख के साथ पढ़ा जायेगा कि आर्य समाज के प्रसिद्ध नेता, विद्वान वक्ता तथा लेखक प्रिंसिपल लक्ष्मीदत्त जी दीक्षित ने सार्वदेशिक आ० प्र० सभा, आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा तथा आर्य समाज पानीपत से त्यागपत्र देकर आर्य समाज से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर लिया है। आर्य समाज की वर्तमान स्थिति से सर्वथा असन्तुष्ट तथा निराश होने के कारण उन्होंने ऐसा किया है। किन्तु आर्य समाज के संगठन से असम्पृक्त रह कर भी वह वैदिक धर्म के सिद्धान्तों तथा महर्षि दयानन्द की मान्यताओं के प्रचार और प्रसार में यथापूर्व संलग्न रहेंगे।

श्री दीक्षित जी पिछले ४५ वर्ष से आर्य समाज से सक्रिय रूप से सम्बद्ध रहे है। यह वर्षो तक सार्वदेशिक सभा, आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश, पंजाब तथा हरयाणा के अधिकारी तथा अंतरंग समासद रहे हैं। आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली की स्थापना कर के उन्होंने देश भर में बड़े बड़े नगरों में इस प्रकार के संगठन बनाये जाने की प्रेरणा दी। शिवरात्रि के अवसर पर दिल्ली में सर्वप्रथम ऋषि मेले का प्रचलन कर के जगह जगह इस प्रकार के मेलों की परम्परा डाली। हैदराबाद सत्याग्रह के अवसर पर अपना विवाह स्थगित कर उन्होंने जेल के बाहर और भीतर दोनों जगह महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। सत्यार्थ-प्रकाश पर सिन्ध सरकार द्वारा लगाये गये प्रतिबन्ध के विरुद्ध हुए सत्याग्रह में सर्वश्री ला० खुशहालचन्द, राजगुरु धुरेन्द्र शास्त्री कुंवर चांदकरण शरद तथा स्वामी अभेदानन्द जी के साथ भी दीक्षित जी पहले पांच डिक्टेटरों में से एक थे। पंजाब में हुए हिन्दी आन्दोलन में उन्होंने महत्त्वपूर्ण कार्य किया। वह पंजाब हिन्दी रक्षा समिति तथा उन्हीं के प्रस्ताव पर आन्दोलन को अपने हाथ में लेने पर सार्वदेशिक सभा द्वारा नियुक्त केन्द्रीय संघर्ष समिति के प्रभावशाली सदस्य थे।

शिक्षा के क्षेत्र में श्री दीक्षित जी का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। एक विशिष्ट शिक्षा शास्त्री के रूप में १९७२ में भारत के उपराष्ट्रपति ने उन्हें पंजाब यूनिवर्सिटी की सैनेट का सदस्य मनोनीत किया। आर्य कालिज पानीपत, डी.ए.वी. कालिज होश्यारपुर तथा गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन के प्राचार्य पद पर कार्य करने के अतिरिक्त वह गुरुकुल कांगड़ी, गुरुकुल कुरुक्षेत्र तथा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के अन्तर्गत अनेक स्कूल तथा कालिजों की प्रबन्ध समितियों के वर्षों तक अध्यक्ष, सचिव या सदस्य रहे। हरियाणा भर के १०२ कालिजों की केन्द्रीय प्रबन्ध समिति के वह संस्थापक तथा निरन्तर ५ वर्षों तक उसके सेक्रैट्री रहे। दिल्ली प्रादेशिक हिन्दी साहित्य सम्मेलन की १९७५ में स्थापना करने का श्रेय भी श्री दीक्षित जी को ही है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गाय की मानव को देन

१. **दूध** - गाय का दूध मानव की बुद्धि के लिये, दूसरे पशुओं के दूध से बढ़कर लाभदायक है। इस दूध से मक्खन, दही बनते हैं जो मानव के पेट की कई बिमारियों के लिये लाभदायक हैं। गाय का दूध दिमाग, जीभ, कान, पेट की बीमारी के लिये उत्तम व लाभदायक है। इसके अलावा भी गाय के दूध के कई उपयोग हैं।

२. **गोबर**—गौ-गोबर खेत में खाद के रूप में काम आता है, जिससे उत्पन्न कई वस्तुएं अधिक से अधिक मात्रा में मनुष्य के लिए काम में आती हैं। गोबर को सुखाकर, जलाकर जो राख बनाई जाती है वह मनुष्य के शरीर की कई बिमारीयों के लिए लाभदायक है, जैसे कि दाँतों का रोग, जखम, दिमाग की बिमारी, दमा, सूखी खाँसी, स्त्रियों के रोग आदि रोगों के लिये काम में आता है, इसके अलावा गीले गोबर से चौका लगाने से जहरीले जीव-जन्तु भी नष्ट होते हैं, इसके अलावा यह और भी कई प्रकार से उपयोगी है।

३. **गौ-मूत्र**—गौ-मूत्र के छिड़कने से कहीं भी जहरीले जीव-जन्तु नष्ट होते हैं। गौ-मूत्र घाव, चोट आदि पर लगाने से वे ठीक हो जाते हैं। गौ-मूत्र आँखों की बीमारी, कान और दिमाग तथा दांतों के लिए, गौ-मूत्र की मालिश तथा गौ-मूत्र के कुल्ले करने से दूर की जा सकती है। इसके अलावा भी गौ-मूत्र का अन्य कई रोगों के लिये उपयोग है।

"जिस जीव से मानव को लाभ होता है, उस जीव (गाय) की हत्या पर हमारी भारत सरकार बंदिश क्यों नहीं डालती है।"

श्री गुरु नानक देव सेवा मंडल की ओर से पत्रों द्वारा गो हत्या पर विरोध प्रकट किया जा रहा है, इसके अलावा पहले भी इस मंडल ने नशा-बंदी का समर्थन किया है। आज भी गोहत्या बन्द करने के साथ नशाबंदी न लागू होने पर विरोध प्रकट कर रहा है।

हम जनता-जनार्दन से तथा मानव-जाति से अनुरोध करते हैं कि आप भी स्वयंम्, पड़ोसी, भाई-बंधुओं तथा संस्थाओं के साथ कोष्टपत्रों द्वारा तथा तार द्वारा भारत के विभिन्न नेतागणों से जोरदार शब्दों में विरोध प्रकट करें। भारत के राष्ट्रपति. उपराष्ट्रपति, प्रधान मंत्री, गृहमंत्री, कृषि मंत्री, विदेश मंत्री, सूचना व प्रसारण मंत्री तथा विरोधी पक्ष के नेता तथा महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री के साथ गो-हत्या बंद करने हेतु अनुरोध करें।

हम आपसे आशा रखते हैं कि आप इस समाज-कल्याणकार्य को अपना एक फर्ज समझकर निभायें।

नोट—मानव जाति के लिए मांस, मछली आदि भोजन नहीं है, मानव अगर इससे दूर रहे तो मानव की बुद्धि और भी श्रेष्ट और पवित्र बनेगी। श्रेष्ठ और पवित्र बुद्धिमान ही देश के लिये तथा समाज के लिये योग्यतम और महान है।

मंत्री (श्री गुरुनानक देव सेवा मंडल) जरीपटका नागपुर।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—कैलाश सत्यार्थी

'ये चलते-फिरते'

कब्रिस्तान एक विश्लेषण

आप चौंकिये मत। मैं कोई तिलस्मी दुनिया की बात नहीं कर रहा। जी हां, मेरी तरह आपको भी अनेकों चलते फिरते कब्रिस्तानों से पाला पड़ा होगा। कुछ आपके मित्र भी होंगे। पिछले दिनों मेरे अंतरंग मित्र के विवाह के सिलसिले में लड़की के घर जाने का मौका मिला। क्या बताऊं साहब, सारा घर ही कब्रिस्तान था। अजी जनाब विश्वास तो कीजिए। कब्रिस्तान के मायने ऐसी जगह, जहाँ लाशें दफनाई जातीं हों। अगर किसी के पेट में ही बकरों, मुर्गों, तीतर, बटेरों आदि की लाशें दफनाई जाऐं तो क्या वह व्यक्ति खुद चलता फिरता कब्रिस्तान नहीं हुआ ?

दरअसल जिस कब्रिस्तान का जिक्र कर रहा हूं, वे जन्मजात माँसाहारी हैं, साथ ही अंग्रेजियत और 'अभिजात्य' का असर भी पूरा-पूरा है। वैसे वे काफी योग्य पढ़ी-लिखीं और समझदार भी हैं। जाहिर है कोई धार्मिक नैतिक अथवा आप्त वचनों जैसी दलील माँसाहार के विरोध में उनके लिए कोई सार्थकता नहीं दे सकती, वैसे तो कमोवेशी सभी कथित आधुनिक और प्रगतिशीलों के साथ समस्या है। फिर भी हमारे इर्द-गिर्द लगातार सामिष भोजियों का बढ़ना न केवल उनके व्यक्तिगत पतन बल्कि सार्वजनीन चिंता का विषय भी है। हमारे नैतिक व धार्मिक साहित्य में सामिष भोजन पर कड़ाई से पाबन्दी की व्यवस्था और उपदेश हैं। इसमें तामसी प्रवृत्तियों का जन्मित और विकसित होना बताया हैं। लोक जीवन में भी "जैसा खाओगे अन्न वैसा होगा मन" जैसी उक्तियों के जरिये मांसाहार को हेय बताया गया है, और यह वास्तविकता भी है कि इसके पीछे निर्दयता, क्रूरता व हिंसा के अमानवीय मूल्य ही सक्रिय रहते हैं, भले ही खाने वाला इसे प्रत्यक्षतः न समझे, दुर्भाग्य से आज का आधुनिकतावाद जिस तरह की फूहड़ और फैशनेबुल संस्कृति को विकसित कर रहा है, उसमें हर एक पुरानेपन को नकार देना भी एक गौरवशाली अनिवार्यता बन गई हैं। स्वाभाविक है आहार संस्कृति भी समूचे नैतिक साहित्य (सात्विक-तामसिक चिंतन) को झमेला मान कर भड़कीले रेस्तराओं में छुरी, काँटों से सजी चमचमाती प्लेटों में रखे मटन पुलाव, कलेजी, चिकन, बिरयानी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

के इर्द-गिर्द ही पहुंच जाए । आधुनिकता की आधारहीन नकल ने कहीं न कहीं संस्कृति के हर पहलू पर अतिक्रमण किया है, आहार संस्कृति पर भी। यही वजह है कि आज के कथित आधुनिक समाज में मांसाहारी से यह तो नहीं पूछा जाता कि वह माँस क्यों खाता है, बल्कि मुझ जैसे शाकाहारी से यह पूछा जाने लगा है कि मैं माँस क्यों नहीं खाता ? ठीक उसी तरह जैसे यह कि मैं सिगरेट क्यों नहीं पीता और अवश्य ही कल पूछा जाना है कि में शराब क्यों नहीं पीता ? विडम्बना यह है कि यह सब 'एटीकेट्स' तथा 'माडर्निटी' की परिधि में पहुंच गया है, फिर पार्टियों, क्लबों में और दोस्तों के बीच अपने आपको 'एडवांस' 'सिविलाइज्ड' साबित करना भी तो जरूरी हो गया है न !

आज छोटे कस्बों से लेकर महानगरों के किसी आधुनिक रेस्तरां में चले जाइए मेज पर पड़े मीनू पर नजर डालते ही शुरू में आठ-दस सामिष व्यंजनों के नाम मिल जायेंगे। बैरे से 'क्या है' पूछने पर जवाब में एक ही सांस में वह कई सामिष नाम गिना देता है, बाद में दो-चार शाकाहारी भी, ग्राहक मीनू के शुरू की वस्तुओं का 'आर्डर' देना ही अपनी शान और रुतबे के अनुकूल समझता है। तात्पर्य यह कि रौब-रुतबा और दिखावा की सभ्यता के विकास के साथ ही माँसाहार का प्रसार हो रहा है। मजेदार बात तो यह भी है कि जो वास्तव में शाकाहारी ही हैं, उनके लिए 'वेजिटेरियन कलेजी', वेजिटेरियन पुलाव, शाकाहारी आमलेट आदि ऊंचे दामों पर मिल रहे हैं। इन नामों और शक्ल से कितना लगाव हो गया हैं ? यह तर्क भी बिल्कुल अर्थहीन है कि स्वाद की दृष्टि से माँसाहार अपेक्षा अधिक रूपों में मिलता है, क्योंकि 'अन्डे और माँस के मूल भोज्य पदार्थों की संख्या पाँच-छै से ज्यादा नहीं है। जबकि ४० से ५० किस्म की शाक-सब्जियाँ, २४ किस्म के फली वाले पदार्थ, १२ किस्म के गिरीदार पदार्थ और ९-१० किस्म के अन्न मूलतः पदार्थ की तरह इस्तेमाल किये जाते हैं; (दिनमान, १४ नवम्बर ७६)।

ऐतिहासिक पहलू—आज का प्रगतिशील वर्ग एक ओर तो आदमी की पैदाइश में जर्विन के विकासवाद को आधार मानता है। दूसरी ओर सामिष भोजन को भी अप्राकृतिक नहीं मानता यह बड़ी अंतर्विरोधी बात है। क्योंकि जर्विन के हिसाब से आदमी बंदर का वंशज है, जबकि बंदर मूलतः शाकाहारी है अतः मानव भी उसी श्रेणी में शाकाहारी हुआ। हां अगर ये लोग पूंछ घिस जाने की कमी को माँस खाकर पूरी करना मानते हों, तब बात अलग है।

ऐतिहासिक तौर पर ऐसा कोई लेखाजोखा उपलब्ध नहीं कि आदमी ने कब और कैसे मांस भक्षण शुरू किया। लेकिन फिर भी ऐसा समझा जा सकता है कि असभ्य और जंगली जनजातियों ने स्वाभाविक शाकाहार के अभाव में पशुओं की

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

देखादेखी यह सीखा होगा। कालान्तर में मानवीय सभ्यता के विकास तथा वैचारिक व दार्शनिक जाग्रति के साथ ही इसे रोकने की कोशिशें भी चलीं। ई. पू. छठी सदी में योरोप में पाइथोगोरस और उसके अनुयाइयों ने व इसी समय भारत तथा एशिया के देशों में बौद्ध-जैनों ने माँसाहार का विरोध किया। यूं तो वैदिक वांगमय में शुरू से ही हिंसा-माँस भक्षण का निषेध था। योरोपीय देशों में प्लेटों, अरस्तू, एपीक्यूरस, प्लूटार्क जैसे विचारकों की लम्बी शृंखला ने माँसाहार का विरोध किया। याद रखना चाहिए ये सभी नाम अपनी-अपनी जगह तत्कालीन वैचारिक व बौद्धिक विकास की पराकाष्ठा के रूप में इस्तेमाल किये जा सकते हैं।

भारतीय आहार संस्कृति को मुगलकालीन बादशाही सामंती संस्कृति ने बहुत प्रभावित किया। शासक वर्ग की सभ्यता, पहनावा, खानपान किसी भी गुलाम देश में शासित के लिए आदर, आकर्षण और नकल का विषय रहा है। सामिष भोजन को शाही सामन्ती व रईसी पसन्द का आधार मिलने से, वे भारतीय जातियां जो इनके आसपास कार्यरत थीं, बड़े शौक और शान में सामिष भोजन का उपयोग सीखीं, वैसे अंग्रेजी काल में राजकीय सभ्यता के कई मानदण्ड बदले, किन्तु मुर्गा, तीतर बटेर वाला मामला जैसे का तैसा बना रहा। इसके बाद भी हिन्दुस्तानी सत्ता और सम्पति वालों का दिमाग रौब, रुतबा और रईसी से ग्रस्त बना है। यही सब आज चल रहा है।

माँस भक्षण का प्राणिशास्त्र—प्राकृतिक तौर पर प्रत्येक किस्म के प्राणी पाचनतंत्र उसके भोजन के प्रकार और स्वभाव के अनुकूल बना है। इसे यूं भी कहा जा सकता है कि किसी प्राणी के पाचनतंत्र के अनुकूल कोई विशिष्ट प्रकार का भोजन ही होता है जिस तरह मांसाहारियों (शेर, भेड़, कुत्ता आदि) के दांत पैने और नुकीले होते है, ताकि वह खाल काट कर आसानी से हड्डियों पर से गोश्त खरोंच सकें, इसे पचा सकने के लिए भोजन नली और आंतों की लम्बाई कम होती है,जीव की लम्बाई ज्यादा होती है। उसी तरह निरामिष भोजियों के लिए भोजन चबा कर खाने की सहूलियत के लिए चौड़े 'प्रिमोलर-मोलर' और चपटे 'इसाइजर्स' किस्म के दांत रहते हैं। देर तक निरामिष भोजन को पचाने के लिए आदमी के पेट में २२ फुट लम्बी आंत प्रकृति ने दी है। आहार नली में भी 'वर्मीफार्म एपेंडिक्स' तथा 'सीकन' (अन्न से सूक्ष्म तत्वों को अलग कर के रक्त को भेजने वाले सूक्ष्म अंग) केवल निरामिष भोजियों में ही होते हैं, जो आदमी में हैं। वैसे भी प्राणी शास्त्र के हिसाब से आदमी केवल निरामिष भोजियों के वर्ग 'प्राइमेट' में आता है। जाहिर है मानव मूलतः माँसाहारी नहीं है। सूक्ष्म जैविकी (माइक्रोवायलाजी) की मान्यता है कि मारे और तरासे गए पशुओं के मांस में विषाणुओं (वाइरस) और रोगाणुओ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(वेक्टीरियाज) का असर बहुत तेजी से होता है। बूचड़खाने के गन्दे वातावरण में तो वाइरस और भी तेजी से पनपते हैं। इतना ही नहीं पशुओं के मरते ही अनेकों जैव रासायनिक (वायोकेमिकल) क्रियाएं पशु शरीर में घटतीं हैं जिनका असर मांस भक्षियों पर ही पड़ता है। जीवित पशुओं व पक्षियों के शरीर में चलने वाली मेटा-वोलिक क्रियाओं के कारण कोशिकाओं में निर्माणाधीन दूषित उत्सर्जी पदार्थ (मल-मूत्र) बच रहते हैं जो मांस को और भी अधिक गरिष्ट बनाते हैं। हालांकि पकाते समय गर्मी पाकर कुछ वेक्टीरियाज जरूर मर जाते हैं किन्तु वाइरस (विषाणु तथा उत्सर्जी पदार्थ अधिक सांन्द्र बन जाया करते हैं। ये दोनों नशा व उत्तेजना पैदा करते हैं। मांस का लगातार भक्षण मस्तिष्क की कोशिकाओं पर विषैला व उत्तेजक असर बनाये रखता है। मांसाहारी में क्रोधी, हिंसक, कामुक प्रवृतियों का विकसित होना स्वाभाविक ही है। फिर एक बात और, हमारे आस पास ऐसे लोग तो बहुतायत में मिलते हैं जो शुद्ध शाकाहारी होते हैं किन्तु ऐसा विरला ही मिलेगा जो केवल मांस खाकर ही जीता है। ऐसा व्यक्ति मिले भी तो वह आदमीयत की अपेक्षा पशुता के ज्यादा निकट होगा।

डा० हेनरी परडो का कथन है कि 'मांसाहारी की तुलना में शाकाहारी कम रोगग्रस्त होता है' यूरिक एसिड पर अनेकों अनुसंधान करने वाले वैज्ञानिक डा० एलेक्जेन्डर हेग ने लिखा है 'मांस से यूरिक एसिड बहुत बनती है जो अनेकों रोगों को जन्म देती है' जर्मनी की विश्व प्रसिद्ध होम्योपैथी चिकित्सक एलिजावेथ बेगन मांस को केवल विलासिता और हिंसक-फूहड़ संस्कृति की वस्तु मानती हैं। उन्होंने अपने रोगियों पर लम्बे प्रयोगों के बाद पाया कि शाकाहारी पर संक्रामक कीटाणु प्रभावशील नहीं होते। साथ ही शाकाहारी रोगी पर होम्योपैथिक औषधियां शीघ्र और स्थाई प्रभाव डालती हैं, जब कि मांसाहारी पर अधिक शक्तिशाली औषधियां भी कठिनाई से असर डालती हैं। वे आगे लिखती हैं कि पश्चिम के अस्पताल स्थाई रोगियों से भरे पड़े हैं। उन्होंने जब भारत की पुस्तकों में मांसाहार पकाने की विधियां और पाकशास्त्र में मछली अण्ड़ों के गुणा वर्णन का समावेश देखा तो वे रो उठी। अपने प्रयोगों के आधार पर कैण्डिल महोदय ने तो यहां तक दावा किया है कि मांसाहारी आलसी और कमजोर होते हैं, वे तब ही काम करते हैं, जब किए बगैर चारा नहीं, वे थकते भी जल्दी हैं। डा० ग्रीन फील्ड ने इस तथ्य का और भी पोषण किया है कि जितनी देर में योरोपीय दस मछलियां पकड़ता है उतनी देर में मांसा-हारी एस्किमों केवल एक ही पकड़ पाता है।

मांसाहार और पौष्टिकता का भ्रमजाल

अपने दिमागों को गिरवी रख कर चलने वाले फैशनेबुल आधुनिकता वादियों ने

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यह भ्रमजाल बड़ी जोर शोर से फैला रखा है कि मांस में शाकाहार की अपेक्षा अधिक पौष्टिक और ऊर्जादायक तत्व होते है किसी-किसी की हास्यास्पद दलील यह भी रहती है कि अन्य प्रकार का भोजन पेट के अन्दर जाकर जिस मांस को निर्मित करता है, यदि मूलतः वही खाया जाए तो कितना शक्तिशाली होगा। उन वेचारों को पता होना चाहिए कि सामिष भोजन को भी उसी पाचनतंत्र से गुजरना पड़ता है जिससे अन्य प्रकार का भोजन। मांस भीतर जाकर कहीं गले या पेट में चिपक नहीं जाता ऐसा होने पर सारा मामला खत्म हो जाएगा।

हेंजिटेरियन वर्सेज मीट इटिंग के एक अंश की तालिका यहाँ प्रस्तुत है जिससे स्वतः ही अनुमान लगाया जा सकता है। (दिनमान १४ नव.७६ में प्रकाशित)

	प्रोटीन	वसा	कार्वोहाइड्रेट	केल्शियम	लोहा	जल
निरामिष						
१. गेहूं (आटा)	१२.१	१.७	७२.२	०.४	७.३	१२.२
२. चावल	८.५	०.६	७७.४	०.१	२.८	१२.६
३. मूंग	२.४	१.३	५६.६	०.४	८.४	२०.४
४. उड़द	२.४	१.४	६०.३	०.२	९.८	१०.४
५. अरहर	२२.३	१.७	५७.२	०.१४	८.८	१५.२
६. मसूर	२५.१	०.७	५९.७	०.१३	२.०	१२.४
७. मटर	२२.९	१.४	६३.५	०.३	३.२	९.८
८. चना	२२.५	५.२	५८.९	०.७	८.९	११.२
९. मूंगफली	३१.५	३९.८	१९.३	०.५	०.३	४.०
१०. घी	—	२८.८	—	—	—	—
सामिष						
१. मुर्गी का अण्डा	१३.१	१३.३	—	०.६	२.९	—
२. मछली	२२.६	०.६	—	०.२	०.९	—
३. मांस (भेड़, बकरी, मुर्गा)	१८.५	१३.३	—	०.१५	२.५	—

क्या अभी भी हमारे कब्रिस्तानों को और भी अधिक ऊर्जावान् बनने का शौक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

है ? फिर भी ऊर्जा व प्रोटीन वाले मामले को जरा और विस्तार से समझ लिया जाय। हमारे शरीर को चलाने में तथा दैनिक कार्यों में खर्च होने वाली ऊर्जा का जोड़ हमें भोजन से मिलना चाहिए। अन्दाज लगाइये कि एक लीटर पानी को १ डिग्री से.ग्रे. तक गर्म करने में खर्च होने वाली ऊर्जा १००० कैलोरी होती है। इसी को आधार मान कर समझ लिया जाये कि हमारे देश में कितने कागजी काम करने वाले को २५०० किलो कैलोरी ऊर्जा की जरूरत होती है। जब कि गद्दी सोफों पर बैठे रह कर नौकरों पर हुक्म चलाने वालों को मात्र १६०० किलो कैलारी ऊर्जा चाहिए। इस स्थिति में मांसाहार तो क्शा अधिक मात्रा में शाकाहार भी अनावश्यक व अनुपयोगी है। इसे नहीं भूलना चाहिए कि इसी उच्च मध्य वर्ग में मांसाहार का प्रचलन बढ़ रहा है। शारीरिक काम करने वाले मजदूर को ४००० से ५००० कि. कैलोरी ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है। वैसे भी मांसाहार औसतन उसके बुत के बाहर की बात है, दूसरे उतने धन में वह शाकाहार से ही इससे अधिक ऊर्जा प्राप्त कर सकता है।

संतुलित भोजन के मुताबिक शरीर के वजन के हिसाब से प्रति किलोग्राम वजन के लिए एक ग्राम प्रोटीन, एक ग्राम वसा तथा ४ या ५ ग्राम कार्बोहाइड्रेट चाहिए। इस तरह ७०-७५ किलो के युवक के लिए औसतन आधा किलो आटा या चावल, ७० ग्राम घी चिकनाई, ७० ग्राम दालें, हरी सब्जी वगैरह चाहिए। यह इतने ही मूल्य के सामिष भोजन की अपेक्षा अधिक संतुलित आहार हैं। गाय के दूध से अधिक पाचक व संतुलित आहार तो दूसरा है ही नहीं। जहाँ तक दूध की बढ़ती हुई कीमत का सवाल है उसकी सीधी सी वजह दुग्ध व्यापार के बजाय हमारी राष्ट्रीय और वैयक्तिक रूचियाँ अन्य विलासी खाद्य उत्पादनों की तरफ बंटी हुई हैं।

कुछ लोगों के पास यह भी दलील रहती है कि अगर पशुओं को न मारा जाय, तो उनकी संख्या इतनी बढ़ जाएगी कि मानवता के लिए खतरा पैदा हो जाएगा। यह और भी हास्यास्पद बात है। क्योंकि जिन जानवर जातियों का इस्तेमाल यह चलते-फिरते कब्रिस्तान नहीं करते, क्या चारों तरफ उनकी बाढ़ आ गई है ? हमें तो ऐसा कुछ लगता नहीं। दरअसल उसको समझना चाहिए कि (अव्वल तो होती नहीं, फिर भी) पशुओं की संख्या में वृद्धि मे मानवता को उतना खतरा नहीं है, जितना जनसंख्या की वृद्धि से रोक लगानी ही है तो जनसंख्या वृद्धि पर जायज तरीकों से लगायी जाए। वैसे भी प्रकृति स्वतः ही वनस्पति और पशुसंख्या के बीच एक संतुलन कायम रखती है। हाथियों को तो कोई नहीं खाता, शेरों, गेंडों का गोस्त तो इनके पुरखों ने भी नहीं खाया होगा फिर धरती पर से उनकी संख्या क्यों निरन्तर कम हो रही है ? प्रकृति ने सीमा को आजाद बनाया है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

फिर इस तरह की दलीलें देते समय सोचना चाहिए कि उस तर्क के पीछे हमारी जो प्रवृत्ति और मूल्य काम करते हैं वे किस सीमा तक जीवन के पक्ष घर हैं और कितने जीवन विरोधी ? इस तरह का कोई भी तर्क जीवन मूल्यों की ही खिलाफत करता है।

जो लोग यह समझते हैं कि बल, आयु, बुद्धि, फुर्तीलिपन की दृष्टि से मांसाहारी आगे हो सकते हैं, वे बड़ी गलत फहमी में हैं। प्राणियों में बन्दर, घोड़ा, हिरन, गैंडा, हाथी वगैरह अलग-अलग उपरोक्त दृष्टियों से मांसाहारियों में बहुत आगे है। मनुष्यों के उदारणों में मास्टर चंदगी राम या सतपाल जैसे गुरू हनुमान के सभी पहलवान शिष्य शुद्ध शाकाहारी होते हुए भी सर्वोच्च विजेता रहे हैं। १९७० में कासां ब्लाका हज मोते बेन बसीर का निधन १६९ वर्ष की उम्र में हुआ था। अभी उनका बड़ा बेटा ११७ वर्ष का है उनके ३५ बेटे बेटियां हैं और लगभग १६० पोते-पोतियाँ। हज साहब जिन्दगी भर उबली हुई साक-सब्जियाँ खाते रहे, और उनकी अधिकांश लगभग १०० वर्षीय संतानें अभी भी शाकाहारी है। सापेक्षता सिद्धान्त के प्रतिपादक इस युग के महान् वैज्ञानिक सर आइनस्टीन जैसे अनेकों वैज्ञानिक शाकाहारी ही थे और हैं भी।

मैं समझता हूं अब इन कब्रिस्तानों के पास कोई तथ्यपूर्ण तर्क होगा नहीं, फिर भी बतौर जानकारी के सामिष संस्कृति के अन्य खतरनाक पहलुओं पर भी चर्चा कर ली जाए।

सामिष भोजन का अर्थशास्त्र

बहुधा हमारे निर्णय और कार्य विचार परक होने की बजाय, दृष्टि परक ही होते हैं। इसीलिए कई गम्भीर मामलों को हम सतही ढंग से ही देख पाते हैं। मांसाहार भी ऐसा ही मुद्दा है। मांसाहार का आर्थिक पक्ष कितना गम्भीर है, इस पर प्रसिद्ध अमेरिकी लेखिका फ्रांसिस यूरलेप की चर्चित पुस्तक डाइट फार ए स्माल प्लैनेट (एक लघुग्रह के लिए आहार) ने बड़ा तहलका मचाया। उन्होंने तथ्यों आंकड़ों के जरिये गम्भीर विश्लेशण से यह सिद्ध कर दिया हैं कि मानव शरीर के लिए माँसाहार की कतई जरूरत नहीं हैं। उससे कई बेहतर प्रोटीन निरामिष आहार से मिल सकते हैं, साथ ही मांस उत्पादन हेतु जितना अनाज पशुओं को खिला दिया जाता है उससे सारी जनसंख्या को समुचित प्रोटीन मिल सकता है।

बड़ी शान से छुरी कांटा चलाने वाले किसी कब्रिस्तान साहब का दिमाग अगर शोरवे की प्लेट की गोलाई को धरती की गोलाई तक फैलाकर देख ले तो आखें खुल जाएंगी। आज समृद्ध देशों का लगभग २० प्रतिशत अनाज मांस देने वाले पशुओं को खिला दिया जाता है। कितनी दर्दनाक है यह बात कि इसी धरती के किसी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कोने में अपनी माँ के कलेजे से चिपका हुआ कोई बेटा 'रोटी-रोटी' चिल्लाते दम तोड़ दे, कटोरे भर अनाज के लिए किसी बहन को अपना शरीर बेचने पर मजबूर होना पड़े जबकि दूसरी तरफ उन्नत देश लगभग ४,२०० लाख मीटरिक टन अनाज पशुओं को सालाना इसलिए खिला दे कि अच्छा मांस मिल सके। इतना अनाज भारत की पूरी जनसंख्या के लिए चार-छै साल के लिए पर्याप्त है। अमेरिका के लगभग ८०-८५ फीसदी मांसदाता पशुओं का चारा ही अन्न, दालें, सोयाबीन व अन्य दुग्ध पदार्थ है। १९७५ में १९६० की अपेक्षा ६० प्रतिशत अधिक अन्न अमेरिकी बछड़ों को खिलाया गया। आखिर यह कौनसी मानवीयता या वैज्ञानिकता है ?

उन्नत देशों में एक किलो मांस प्राप्त करने के लिए २० किलो अनाज या उसी तरह के पदार्थ पशुओं को खिलाए जाते हैं, अकेले अमेरिका के लोग इस तरह जितना अन्न खर्च करते हैं, उतना भारत जैसे तिगुनी जनसंख्या वाले देश को दो साल चल सकता है। इस सारी स्थिति को देखकर दुनियाँ भर के अर्थशास्त्री और कृषि विशेषज्ञ मांसाहार रोकने के लिए लगातार चेतावनियाँ दे रहे हैं। प्रसिद्ध अमेरिकी अर्थशास्त्री सिलवन विटलर ने सचेत किया है कि—अगर औद्योगिक देश अनाज को सीधे न खाकर, मांस खाना ही पसंद करते रहेंगे तो दुनियाँ में अन्न की मांग बढ़ती ही रहेगी; एक अन्य अमेरिकी कृषि अधिकारी लायल पी० शर्टज् के अनुसार हम जितना अनाज पशुओं को खिला देते हैं उतना ही गरीब देश अपने भोजन के लिए काम में ला सकते हैं।

यहाँ यह दलील दी जा सकती है कि यह मामला तो उन्नत देशों का हैं। भारत जैसे देश में जहाँ अन्न पर्याप्त मात्रा में नहीं होता, वहाँ मांसाहार उचित ही है। तत्कालीन रूप से यह बात कुछ लुभावनी है, किन्तु अदूरदर्शिता पूर्ण है। यह सिद्ध किया जा चुका है कि अन्न उत्पादन और दुग्ध उत्पादन, मांसोत्पादन से सस्ते हैं, दूसरे भारत जैसे अधिकांश गरीब देशों के पास खाली जमीन अभी भी इतनी मात्रा में है कि यदि उसका उपयोग किया जा सके तो अन्न व दूसरे शाकाहारी पदार्थ निर्यात की स्थिति तक पहुंच सकते है। फिर एक बात और है, मांस वाला मामला अंतर्राष्ट्रीय है। ऐसा कतई संभव नहीं हैं कि पड़ौस के गरीब देश का नागरिक ठाठ से चिकन, बिरियानी पर छुरियाँ चलाए और अमेरिकी या जर्मन मुंह में पानी भरे टुकटुकी लगाए देखता रहे। वह मांस भक्षण छोड़ कर अनाज को गरीब मुल्कों को निर्यात होने दे। दरअसल जब तक मांस भक्षण के खिलाफ एक सार्वभौतिव मुहिम नहीं चलती यह दुष्चक्र बरकरार रहेगा।

इस सिलसिले में अमेरिका के अन्दर ही झांक कर देखा जाय। जो बड़े लोग मांस के मंहगे व्यंजनों को खा सकने में समर्थ हैं उनको तो कोई बात नहीं, किन्तु जो

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

लाखों लोग कम समर्थ हैं वे कुपोषण के दायरे में पहुंच गए हैं। अर्नेस्ट हार्लिंग्स ने अपनी पुस्तक 'भूख के विरुद्ध वकालत' में साफ लिखा है आज लाखों अमेरिकी भूखे हैं और इस बात के वैज्ञानिक संकेत हैं कि इस देश में आम पोषण की स्थिति इस समय वैसी ही है जैसी द्वितीय विश्व युद्ध के अंत में थी।

मांस की अर्थनीति का एक और पहलू भी है। आज दुनियाँ के वैज्ञानिकों को पेय जल की कमी का गम्भीर खतरा लगातार परेशान कर रहा है। आधुनिक औद्योगिक संस्कृति और बढ़ती हुई जनसंख्या की वजह से पेयजल में लगातार कमी का गम्भीर संकट आने वाला है। प्रसिद्ध अमेरिकी पत्रिका टाइम के एक लेख 'द वल्ड फूड क्राइसेज' (विश्व खाद्य संकट) में यह तथ्य दिया गया है कि 'पानी की दृष्टि से आधा किलो गाय का गोस्त आधा किलो रोटी से २५०० प्रतिशत मंहगा पड़ता है।'

मांस की राजनीति

यहां एक सवाल उठता है कि उपरोक्त सब के बावजूद मांसाहार के खिलाफ कोई सार्वजनिक चेतना अंतराष्ट्रीय स्तर पर विकसित क्यों नहीं की जाती ?

बड़ी सीधी सी बात है सार्वजनिक हित होने के बावजूद भी यदि जानबूझ कर उस काम में पहल नहीं की जाती तो उसके पीछे अवश्य ही कोई राजनीति सक्रिय है। आदमी की बुद्धि के विकास ने उसे लगातार कुटिल और चालाक बनाया है। किसी भी चीज को वह व्यक्तिगत लाभ और दूसरों के शोषण के औजार की तरह इस्तेमाल करना चाहता है। अंतराष्ट्रीय क्षितिज पर भी यही सब चलता है। दुर्भाग्य से 'आहार' भी उसी दायरे में आ गया है। इस सिलसिले में बतौर उदाहरण के अमेरिका की हरित क्रांति को लिया जाए। १९५० से १९७१ के वहाँ अन्नोत्पादन पचास से साठ फीसदी तक बढ़ा। चूंकि पहले ही वहां पर्याप्त अनाज था, अतः खपत का सवाल उठा। अमेरिका जो अपने प्रतिस्पर्धी देशों के साथ सामाजिक संतुलन और नवोदित गरीब व विकासशील देशों में औधौगिक तथा आर्थिक साम्राज्यवाद कायम करने का हामी रहा है, वह बगैर किसी बड़े राजनैतिक आर्थिक स्वार्थ के उस अन्न को कैसे बेचता ? दूसरी बात विश्व बाजार में अनाज के मूल्य भी सन्तुलित रखना है, क्योंकि उनके गिरने का असर सारे विनिमय पर पड़ता। यूं तो उसने सहायता सेवा वगैरहा के नाम पर कुछ अनाज खपाया किन्तु समस्या बरकरार रही। सरकार ने करोड़ों डालर खर्च करके किसानों को कम जमीन में खेती करने के लिए प्रोत्साहित किया मगर नतीजा कुछ न निकला। अन्ततोगत्वा देश के चलते-फिरते कब्रिस्तान ही काम आए। उनकी मांस प्राप्ति के लिए यह करोड़ों टन अतिरिक्त अनाज माँस-दाता पशुओं के चारे की तरह इस्तेमाल किया जाने लगा। मांसाहारियों के शौक बढ़ने के साथ ही उपरोक्त दुष्चक्र भी तेजी से बढ़ता गया। जाहिर है अगर समस्या

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

का हल मांस भक्षण में नहीं मिले तो सम्भव है गरीब देशों की तरफ उसके निर्यात का कोई रास्ता निकल आवे। इसीलिए उन्नत देशों की कोशिश तो स्वाभाविक रूप से मांसाहार में वृद्धि के पक्ष में रहेगी।

विकसित देश अन्न व मशीनरी के बदले में विकासशील देशों से चाय, काफी, कोको, तम्बाकू, गन्ना आदि वसूलते हैं। नतीजा यह कि देश गेहूं उत्पादन के बजाय अपनी शक्ति इन चीजों के उत्पादन में लगाते हैं, और रही-सही के लिए मांसाहार का शौक पर्याप्त है। यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि जब तक गरीब देशों के लोगों में अनाज की तुलना में मांसाहार को सस्ता, पौष्टिक या स्वादिष्ट मानने का भ्रम पाला जाएगा : अनाज व शाकाहारी चीजों का उत्पादन देश की आवश्यकता की पूर्ति नहीं कर सकेगा। साफ तौर पर चलाए जाने वाले अन्तर्राष्ट्रीय राजनैतिक षडयन्त्र को नजरंदाज नहीं किया जा सकता।

मैं समझता हूं नासमझी में शौक से माँस खाने वालों को दीमागी तौर पर कोई सन्देह नहीं रह गया होगा। फिर भी आदमी में केवल दीमाग ही नहीं या दिल भी है। आखिरकार वह भी मानव है, उसके भी दिल में कहीं न कहीं दया और करुणा की मानवीय सम्वेदनाऐं छुपी रहती है। भले ही वह आदतन, शौक में है, पारम्परिक तौर पर माँस खाते रहने के कारण इसे न महसूस पाए।

काश ! कि बड़े इत्मीनान से छुरियां चलाने वाले यह भाई एक क्षण को बूचड़खाने की उस तस्वीर को भी दिल में उतारें जहां एक तरफ दया की भीख मांगतीं बेसहारा प्राणी बकरे की करुणा भरी आंखें होती हैं, दूसरी तरफ निर्मम कसाई की क्रूरता भरी आंखें !! बकरे की पीली आंखों के अन्दर का काला निशान जो डर के मारे छुरा देखते ही जम सा जाता है, गर्दन कट चुकने के बाद भी वैसा ही जमा रहता है, दूसरी तरफ कसाई की आंखों में पाशविकता भरी बीभत्स मुस्कान ! बकरी बड़ी सम्वेदनशील होती है। जब उसके सामने से उसका मेमना कसाई उठाकर ले जा रहा होता है, तब उसकी असहाय आँखों में अक्सर आंसू भी निकलते हैं—कितनी शर्मनाक हरकत है यह आदमी की। आदमीयत का पतन नहीं तो और क्या है यह ?

प्रस्तुत लेख के आंकड़े व उद्धरण अमेरिका पत्रिका के 'टाईम' व 'साप्ताहिक दिनमान' के भिन्न अंकों के साथ ही संदर्भित पुस्तकों से लिए गए हैं—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यसमाज तीव्र आंदोलन करेगा—

हिन्दू मात्र को संगठित कर अराष्ट्रीय तत्वों की समाप्ति का संकल्प

आज देश में अराष्ट्रीय तत्त्व फिर सिर उठा रहे हैं। विदेशी पादरी पिछड़े क्षेत्रों में लाखों व्यक्तियों को ईसाई बनाकर ईसालैंड बनाने का कुचक्र रच रहे हैं।

मुसलमान एक बार फिर नए पाकिस्तान की नींव डालने का निश्चय कर बैठा है। उनकी जहरीली योजनाएं सब जगह तेजी से चल रही हैं।

संभल का काँड सारी हिन्दू जाति के लिए एक चुनौती बन गया है। राम-कृष्ण, ऋषि-मुनियों की परम्परा पर संकट मंडरा रहा है और वीर-प्रताप, शिवा के वंशज सो रहे हैं।

इतिहास में सबसे बड़ी संकट की घड़ी आज हमारे सिर पर खड़ी है। हमारे नेताओं को पद-चुनाव-भाषण से अधिक और कुछ नहीं सूझता। एम. पी. बनने के लिए सत्य को मिटाया जा रहा है।

किन्तु ऋषि दयानन्द का आर्यसमाज भारत की इस दुर्दशा को मौन दर्शक बनकर देखने के लिए तैयार नहीं।

अत: इस परिपत्र द्वारा हम सभी आर्यसमाजों से निवेदन करते हैं कि वे अपने पूरे बल से अपने-अपने क्षेत्र में सक्रिय हो जाएं।

आवश्यक निर्देश

१—सर्वत्र अराष्ट्रीय तत्त्वों के विरोध में भारत रक्षा सामग्रियों की स्थापना की जाए।

२—गुण्डा गर्दी, भ्रष्टाचार शराब और साम्प्रदायिकता के विरुद्ध युद्ध घोषणा की जाए।

३ - यह ध्यान रखें कि आपके क्षेत्र में कोई भी किसी हिन्दू का धर्म परिवर्तन न कर सके।

४—आसाम, गुजरात, आँध्र, केरल, मद्रास आदि में करोड़ों रुपया लगाकर धर्म परिवर्तन हो रहा है। सेवा के नाम पर देश द्रोह का विष फैलाया जा रहा है। हमें सब तरह से सावधान रहना है।

भारत हमारा है हम इस की रक्षा करेंगे। ईसालैंड बनाने वालों से सावधान देश द्रोही साँप्रदायिकों से सावधान। हिन्दू धर्म की रक्षा भारत की रक्षा है।

संकल्प लेकर उठो। सिर पर कफन बाँध कर उठो। माँ भारत की रक्षा के लिए, गौ-गायत्री वेद की सुरक्षा के लिए आगे बढ़ो।

देश धर्म और प्राचीन महान् परम्परा को बचाने के लिए हम आपको कर्म क्षेत्र में बढ़ने का निमन्त्रण दे रहे हैं— —भारतेन्द्र नाथ (संयोजक)

अखिल भारतीय भारत रक्षा समिति—
१५९७, हरध्यानसिंह मार्ग, नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

तुम सा नहीं देखा

सचमुच तुम सा नहीं देखा

दयानन्द जैसा और कौन था ?
उस सा दिव्य-महान् और योगी—

साधु टी. एल. वास्वानी

की महान् अमर गाथा

TORCH BEARER

का हिन्दी अनुवाद

ज्योतिर्मय

महर्षि दयानन्द के प्रति श्रद्धा हो तो

इसे कम से कम

१०० व्यक्तियों तक पहुँचाइए

मूल्य १)५० : १००) सैंकड़ा

दयानन्द-संस्थान

वेद मन्दिर, दिल्ली-११००३६

आषाढ़ सम्वत् २०३५

१२१

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार की
औषधियां प्रयोग करें

गुरुकुल कासारि

खांसी की अपूर्व गुणकारी औषधि

उपयोग किसी भी कारण से हुई खांसी, नजला, जुकाम आदि में लाभदायक है। सेवन विधि दिन में तीन बार छोटी चम्मच लेकर उंगली से चाटें।

आंखों के अनेक रोगों के लिए

भीमसेनी सुरमा

चयवनप्राश

उत्तम स्वादिष्ट रसायन
शरीर को बलिष्ठ और कान्तिमय बनाता।

शारीरिक क्षीणता एवं फेफड़ों के लिए प्रसिद्ध आयुर्वेद रसायन

पो. गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी (सहारनपुर)

शाखा कार्यालय—६३, गली राजा केदारनाथ चावड़ी बाजार, दिल्ली-११०००६ फोन नं० ६१३७

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सुन्दर फरनीचर का प्रगतिशील नाम

डिलाईट

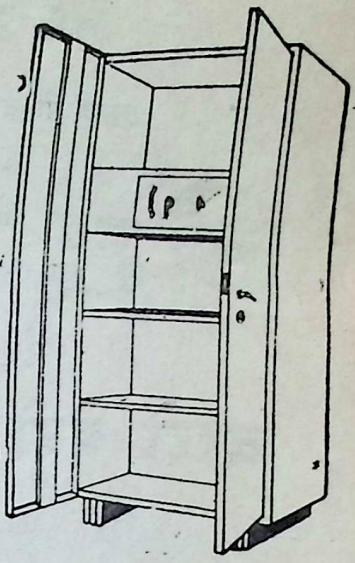

वर्षा उपवन व और कार्यकुशलता के कारण आज डिलाईट पक्की अलमारियां और फर्नीचर सारे भारत में प्रसिद्ध हैं क्योंकि यह देखने में सुन्दर, मजबूत टिकाऊ और पक्के रंगों में उपलब्ध हैं। मकान हो या घर, विवाह हो या कोई शुभ अवसर, यह सबकी शोभा बढ़ाता है।

आप भी आज डिलाईट फरनीचर खरीद कर अपने घर, आफिस व दुकान की शोभा बढ़ावें और आनन्द पावें।

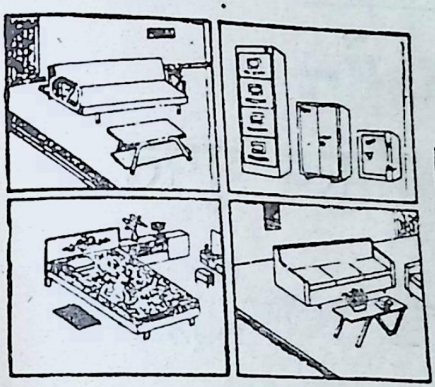

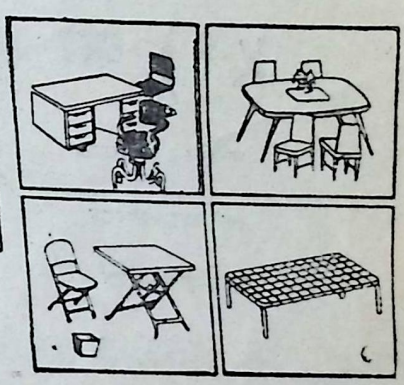

डिलाईट सेफ बक्स

कुतुब रोड, दिल्ली-६. फोन 511380

विक्रेता

१. काटेंज स्टोर, २० विनय नगर मार्कीट, नई दिल्ली।
२. काश्मीर क्राकरी हाऊस, लक्कड़ बाजार, लुधियाना।
३. मित्तल ब्रादर्स, सिरकी बाजार, भटिण्डा। ४. निहालचन्द गोपालदास, अबोहर।
५. महेन्द्रा ब्रादर्स, कोर्ट रोड, मोगा।
६. जेम सेल्स कार्पोरेशन, सेक्टर ७-सी दु० नं० ३०, मध्य मार्ग, चण्डीगढ़।
७. हरयाणा आयरन एण्ड स्टील इण्डस्ट्रीज, बाजार हिसारिया, सिरसा।
८. लीला इलैक्ट्रिक कं०, ७० कोतवाली रोड, श्री गंगानगर (राज०)।
९. राणा इण्डस्ट्रीज, लाडपुरा बाजार, कोटा (राज०)।
१०. आदर्श इलक्ट्रिक एण्ड जनरल सप्लायर्ज, नैकोली, नीमच (म० प्र०)।
११. ओवरसीज ट्रेड एजेन्सीज, केसरगंज, अजमेर।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेद - वेद - वेद

श्रावणी तक अपने घर में

वेद लाइए

२५०) लागत का

चारों वेदों का हिन्दी भाष्य

केवल १२५) में

साथ में—

५१) का साहित्य मुफ्त

गीता भाष्य	—	१५)
काया-कल्प	—	१)५०
ज्योतिर्मय	—	१)५०

व ३३) का अन्य श्रेष्ठ साहित्य मुफ्त—

शीघ्रता करें : आदेश भेजें

दयानन्द-संस्थान

वेद मंदिर दिल्ली-३६

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हमला-हमला-हमला

भारत मां पर हमला

जो भारत को मां नहीं मानता
वह देश का दुश्मन है

भारत हमारी मां है इसकी रक्षा हमारा धर्म है

"भारत-रक्षा-समिति" बनाकर काम में लगिए

राष्ट्र द्रोही शक्तियों का फन कुचल डालिए

—भारतेन्द्र नाथ, संयोजक

अ० भा० "भारत-रक्षा-समिति" वेद मंदिर

१५९७, हरध्यानसिंह मार्ग, नई दिल्ली-११०००५
दूरभाष : ५६६६३९

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेद प्रचार व वेद मन्दिर हेतु दान सूचि

१. श्री शिवशंकर जी सर्राफ—तिलहर ५००१)
२. श्री उमेदसिंह जी—रानी १००१)
३. श्री पं० आर० नारायण—हॉलैंड १००१)
४. श्री लक्ष्मी नारायण जी—गढ़वा ५०१)
५. श्री ठाकुर लाल कसरावद ५०१)

२५१) देने वाले महानुभाव

सर्वश्री—१. अमरनाथ रस्तोगी - मेरठ, २. चन्द्र शेखर प्रसाद सिंह—बहलोलपुर, ३. ढलकराम - शाकरे, ४. शिव पूजन लाल राँची, ५. V. S. Trivedi—Sevalia, ६. पसाभाई—मेहसाना, ७. नाथूराम—अकोला, ८. जगदीश प्रसाद—सरहेंजा, ९. धर्मदत्त शर्मा - बिलासपुर।

१०१) देने वाले महानुभाव

सर्वश्री—१. श्री मनमोहन लाल गोयल—गाजियाबाद, २. वी. एम. मोदी—कलकत्ता, ३. बृजलाल अहमदाबाद, ४. धर्मदेव - मेरठ, ५. चन्द्र शेखर सिंह—गोहाटी, ६. चन्दकान्त - सूरत, ७. सुशील कुमार दुवे - रायपुर, ८. वदामी लाल शर्मा—भोपाल, ९. बी० के० चितरवाड़ी - दार्जीलिंग, १०. आनन्द स्वरूप गुप्त—नवाबगंज, ११. प्रणपालसिंह राणा - मुजफ्फर नगर, १२. श्रीमति भागीरथी देवी—देवरिया, १३. संजीवराव—हैदराबाद, १४. जशवरदास—कानपुर, १५. Prahlad Dygr - बम्बई, १६. प्रभुलाल सेवक परवतिया सड़क, १७. शौनाथसिंह आर्य—१८. सूर्य प्रकाश गुप्त—जयपुर, १९. पी० बी० पण्डित Suratkal, २०. तुलसी राम—इचलकरंजी, २१. जयन्ती लाल - मुजफ्फर नगर, २२. जी. बी. व्यवहारे—परली बैजनाथ, २३. महेन्द्र सिंह—बरेली, २४. ओशीराय राइस मिल - कालाहांडी, २५. श्री कृष्ण कुमार—दिल्ली, २६. मेजर गजेन्द्र मल—देहरादून २७. बेलूरामजी—जीन्द, २८. आर० पी० जोशी—जबलपुर।

१००) देने वाले महानुभाव

सर्वश्री—१. रामरक्ष शर्मा—लुधियाना, २. किशोरभाई—मोरथाणा,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

३. वी० एल० द्विवेदी – दुर्ग, ४. गोपाल दालमिल –गुना, ५. शम्भूनाथ कौशल, ६. भाई लाल अग्रोचा—बालसमद, ७. के० वी० लाल देहरादून, ८. आर्य भिक्षु—ज्वालापुर, ९. जगन्ननाथ प्रसाद गुप्त, १०. रामनिवास—बिजनौर, ११. ठाकुर-दास—ज्वालापुर, १२. लड्डूराम—पत्थलकुंड, १३. गजाधर शर्मा—रतलाम, १४. अनिल कुमार मुखर्जी—बहराइच।

५१) देने वाले महानुभाव

सर्वश्री—१. कृष्ण कुमार, दिल्ली, २. बख्शीराम, नई दिल्ली, ३. ज्ञानसिंह चावला, रायपुर, ४. गोविन्द प्रसाद पाण्डे, ५. श्रीकृष्ण अग्रवाल, अहमदाबाद, ६. सतीश कुमार रस्तोगी, ७. नन्द लाल रायपुर, ८. आठूमल रायपुर, ९. वर्मा ज्वैलरी डिब्रूगढ़, १०. राम प्रताप कलकत्ता, ११. राज कुमार गुप्त, नवाबगंज, १२. जी. डी. कोठारी कलकत्ता, १३. एस. सरकार, १४. सुमन अग्रवाल मुजफर नगर, १५. सी. एम. शाह बम्बई, १६. जशनदास बिरसिंह, १७. ओमप्रकाश अग्रवाल सीतापुर, १८. राधेश्याम गुप्त बुलन्दशहर, १९. धर्मनारायण जबलपुर, २०. राम चन्द्र महाजन चंडीगढ़, २१. सुखदेव कपूर नई दिल्ली, २२. तारू राम जाट, २३. शिव चरण सिंह रामपुखसपुर, २४. धर्म प्रकाश भोपाल, २५. महेन्द्र कुमार गुप्त हापुड़, २६. कंवर चन्द फरीदकोट, २७. महेश दत्त श्रीवास्तव अलीगढ़ २८. भुवनेश्वर प्रसाद सिंह बनारी, २९. शमशेर बहादुर न्यू हैदराबाद लखनऊ, ३०. कृपा राम आर्य खास।

११) देने वाले महानुभाव

सर्वश्री १. वी. पी. पटेल नीमज, २. शुभकरण दास बहराईच, ३. नायक नं० ६६५०६७, ४. डा. एस. सी. पाटीदार धार, ५. सुरेश कुमार गुप्त दिल्ली, ६. भंवर सिंह मुजफर नगर, ७. के. के. अग्रवाल हिवरखेड़, ८. उत्तमचन्द इसरानी ९. यशवन्त सिंह कुराली, १०. महावीर प्रसाद खंडेलवाल शाहजहाँपुर, ११. एस. पी. नारंग जनकपुरी, १२. एस.के. सचदेव नई दिल्ली, १३. जी.वी. कौशिक दिल्ली १४. चन्द्र राम आर्य नैनी, १५. गुरु दास राम शर्मा सुकाली, १६. नेशनल इन्ड-स्ट्रीज मेरठ, १७. जगदीश प्रसाद गर्ग गाजियाबाद, १८. कुसुम कंसल रुड़की, १९. युगल किशोर प्रसाद सिलिगुड़ी, २०. यशपाल पेन्टर झज्जर, २१. शिव दत्त शर्मा मेरठ, २२. अशोक कुमार आर्य मिर्जापुर, २३. डा. के. एम. कुशल मुज्जफर नगर, २४. पीताम्बर दत्त शास्त्री छुर्रा, २५. कुन्दन मल बम्बई, २६. श्यामलाल आर अग्रवाल बम्बई. २७. धर्मपाल शर्मा पीरसलूही, २८. प्रसाद अग्रवाल हसनपुर, २९. राम नाथ गुप्त मीरानपुर कटरा, ३०. सुरेश चन्द्र गुप्त सीतापुर, ३१. राम नारायण सिंह चान्दपुर, ३२. रामदास शर्मा भगवानपुर, ३३. मिट्ठन लाल दि[illegible]

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

३४. ओम प्रकाश मल्होत्रा अबोहर, ३५. आर. आर. सेक्सेरिया बम्बई, ३६. कु. आदित्य नोनापुर कानपुर, ३७. हीरा लाल पंडित राजकोट, ३८. केशवनाथ तिवारी माण्डर, ३९. वैद्य सत्यप्रकाश देहरादून, ४०. बच्ची सिंह पवार, नैनीताल, ४१. आर. आर. वानखेड़े रायपुर, ४२. डा. पी. पी. रिथावन मैरमपुर, ४३. देवेश कुमार राँची, ४४. के. मरूप्पा हैदराबाद, ४५. ज्ञान चन्द एटा, ४६. आनन्द स्वरूप अवस्थी फतेहगढ़, ४७. राम नरेश कानपुर, ४८. मिस्त्री शंकर लाल डूंगरपुर ४९. भूरादिया अपर्नस कोयम्बटूर, ५०. हुकमचन्द जैन रायपुर, ५१. एम. एम. लखवानी रायपुर, ५२. रतन लाल गौड़ बुलन्दशहर, ५३. आशा दत्त शर्मा कानपुर ५४. अतीलाल महादेवपुर, ५५. डी. एल. शर्मा दिल्ली, ५६. विन्देश्वर वैद्य काला पिरौधा, ५७. जगन्नाथ परिवाली, ५८. एम. एल. दत्त गुप्त, आर्मी हैड क्वार्टरस, ५९. धनपाल धवन पुरानी दिल्ली, ६०. अनन्त राम गुप्त आगरा, ६१. बचनसिंह गुरुदासपुर, ६२. आर के. शर्मा नयी दिल्ली, ६३. कन्हैया सौद दरयागंज दिल्ली, ६४. बारू राम कारपिंटर मेहसाना ६५. राधे श्याम जी वर्मा अहमदाबाद, धर्मदास बिलासपुर, ६७. वेदपाल एडवोकेट करनाल ६८. बसंत राव राँची ६९. लादूराम राँची, ७०. राजेन्द्र प्रसाद बलाना, ७१. किशन सिंह तेवतिया नई दिल्ली, ७२. युवराज जय किशन सिंह, सिंहभूमि ७३. के. एम. गुड़िया बेंगलोर ७४. मदन लाल नैनखा महूम ७५. बाँके लाल मिश्र मैनपुरी ७६. मनबोधन सिंह गौतम पाटनपुर, ७७. शमशेर बहादुर न्यु हैदराबाद लखनऊ, ७८. चमन लाल सहारनपुर, ७९. मनोहर लाल नयी दिल्ली ८०. बद्री लाल इन्दौर ८१. पृथ्वी राज टण्डन गुजरात ८२. बलदेव सिंह वर्मा उदयपुर ८३. प्रताप सिंह रुड़की, ८४. अरूण आर्य कानपुर ८५. डा. एच. सी. तिवारी खण्डवा ८६. शिताव सिंह चौधरी नाहन ८७. राम कृष्ण शास्त्री सिरमौर ८८. भीमाहेरेंण राँची ८९. अर्जुन सिंह मुंगेर ९०. दशरथ प्रसाद लाठ सम्बलपुर ९१. नित्यानन्द श्रीवास्तव मुखीमपुर खीरी ९२. कृष्ण कुमार गोप पाँडेश्वर ९३. अवध राम वर्मा गनियारी ९४. बदरी लाल रावत बीकानेर ९५. हनुमान प्रसाद खंडवा ९६. दिलीप कुमार विश्वकर्मा मुन्गेर ९७. मंत्री आर्यसमाज मिर्जापुर ९८. राव जनरल स्टोर सवाई माधोपुर ९९. ओमप्रकाश मद्रास १००. वीर कुमार सादिकगंज १०१. ब्रह्मदेव आर्य मुन्गेर १०२. सूर्य देव पण्डित सीतामढ़ी १०३ शिव प्रसाद ऋषिकेश १०४. बाल चन्द शर्मा दीनाजपुर १०५. हरियाणा ट्रेडिंग कं० कलकत्ता १०६. रामखेलावन तिवारी नवसारी १०७ जगन्नाथ सिंह ढुवा २०८. रामजी राम यादव ढुवा १०९. सुरेन्द्र कुमाज अग्रवाल डिब्रूगड़ ११०. आनन्द कुमार मुरादाबाद १११. जे. गुप्ता चंडीगढ़ ११२. भगवान दास मधुपुर ११३. हर प्रसाद सिंह विजनौर ११४. के. पी. गुप्त अम्बाला ११५. राजेन्द्र लाल सोनी मुरादाबाद।

(शेष अगले अंक में)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

समग्र क्रांति क्या है ?

आज के नेताओं का समग्र क्रांति का नारा अधूरा—एकांगी है—

फिर समग्र क्रांति क्या है ?

आर्य विद्वान् पं० बुद्धदेव विद्यालंकार
द्वारा निर्दिष्ट
समग्र क्रांति का मार्गदर्शन

काया—कल्प

में पढ़िए। काया-कल्प राष्ट्र को नया मार्गदर्शन देगा—
बांटिए : पढ़िए : मंगाइए
मूल्य १)५० : १००) सैंकड़ा

दयानन्द-संस्थान
वेद मन्दिर, दिल्ली-११००३६

दहेज कुप्रथा एवं जातिवाद के उन्मूलन के लिये

गुण, कर्म स्वभाव पर आधारित अन्तर्जातीय विवाहों को प्रोत्साहन दें। पूर्ण जानकारी के लिए लिफाफा भेजें।

कौशलेन्द्र नाथ अध्यक्ष अन्तर्जातीय विवाह केन्द्र,
वशिष्ट पार्क, पोस्ट : नांगल राया, नई दिल्ली-४६

मुद्रक-प्रकाशक-सम्पादक—पं० राकेशरानी द्वारा स्वस्ति प्रेस,
५, रैगड़ पुरा, नई दिल्ली-५ में छपा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जन-ज्ञान (मासिक) | जून | Regd No. D(C) 201
वेद मन्दिर, दिल्ली-३६ | १९७८ | Regd. No. 107119/75

अपने पिता स्व० श्री भक्त गोपी नाथ जी व अपनी पूज्या माता स्व० श्रीमती दयावन्ती जी की स्मृति में २०००) श्री राजेन्द्र भक्त जी जगाधरी वासी ने वेद मन्दिर निर्माण हेतु प्रदान किए हैं। संस्थान उन का आभारी है— —अध्यक्ष

वेद मन्दिर निर्माण यज्ञ में
आज ही अपनी आहुति भेजें
१) भेजें या अधिक
पर आज ही भेजे अवश्य —अध्यक्ष

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi